साहित्य अमृत

मासिक

कार्तिक-मार्गशीर्ष, संवत्-२०७९ ❖ नवंबर २०२२

वर्ष-२८ ❖ अंक-४ ❖ पृष्ठ ८४ | यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित | ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

साहित्य अमृत के बैंक खाते का विवरण

बैंक ऑफ इंडिया

खाता सं. : **600120110001052**

IFSC : **BKID0006001**

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

✍ **संपादकीय**

ताकि देश की नींव सुदृढ़ हो ४

✍ **प्रतिस्मृति**

गोरी का गाँव/ *विवेकी राय* ६

✍ **कहानी**

विडंबना/ *उषाकिरण खान* ८

अपने-पराए/ *एम.डी. मिश्रा आनंद* १२

चीर-हरण/ *विकेश निझावन* २०

सलोनी का फोन/ *राजेश ओझा* २८

आखिरी प्रणाम/ *सुरेश बाबू मिश्रा* ४३

ठंडी आग/ *जगदीश पंत 'कुमुद'* ६८

✍ **लघुकथा**

एक हकीकत/ *सेवा सदन प्रसाद* ९

लिबास/ *सेवा सदन प्रसाद* २७

रहस्य/ *दिनेश प्रताप सिंह 'चित्रेश'* ३०

दान में मिले वस्त्र/ *केदारनाथ सविता* ४५

डुबकियाँ/ *दिनेश प्रताप सिंह 'चित्रेश'* ६३

बुढ़ापे का प्रेम/ *रोहित यादव* ७०

✍ **आलेख**

अपने जीवन के अमृतकाल का आनंद लें/ *सुरेश जैन* १०

पुराख्यान और स्त्रीत्व की निष्कंप लौ—दौपदी/ *ओम निश्चल* १६

संवाद की परंपरा में लोकमंथन की सार्थकता/ *कुमुद शर्मा* २४

साहित्य में सौंदर्यवादी सृष्टि/ *धीरेंद्र प्रसाद सिंह* ३२

एकात्म मानववाद/ *अवधेश कुमार जैन* ४६

प्रकृति रक्षति रक्षितः/ *सलिल सरोज* ७१

✍ **कविता**

बाल-कविताएँ/ *जे.पी. रावत* १५

गजलें/ *प्रीति चौधरी 'प्रीत'* ३१

बाल-पहेलियाँ/ *माणिक तुलसीराम गौड़* ३५

कविताएँ/ *राधेश्याम तिवारी* ४९

गजलें/ *सुरेंद्र शजर* ५५

कविताएँ/ *संध्या यादव* ६०

कोई न सगा/ *कृष्ण कुमार 'अजनबी'* ७५

कविताएँ/ *चंद्रप्रकाश पंत* ७८

✍ **राम झरोखे बैठ के**

सामंती संस्कार बनाम आधुनिक तकनीक/ *गोपाल चतुर्वेदी* ३६

✍ **संस्मरण**

या विद्या सा विमुक्तये/ *वीरेंद्र जैन* ४०

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

मेडम का डॉगी/ *रमण मेकवान* ५२

✍ **हास्य-व्यंग्य**

देवलोक में मंत्रिमंडल की बैठक/ *अश्विनीकुमार दुबे* ५६

✍ **यात्रा-संस्मरण**

तुंगभद्रा के आर-पार/ *पद्मावती* ६४

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

दुर्भाग्य/ *आतिफा मोजाफरी* ७६

✍ **बाल-संसार**

झल्लर बिल्ला और होशियार जुगनू/ *आशा शर्मा* ५०

मैं आपका सांता हूँ/ *सुमन बाजपेयी* ६२

जादुई पिटारा/ *ललित मौर्य* ७४

✍ **वर्ग-पहेली** ७९

✍ **पाठकों की प्रतिक्रियाएँ** ८०

✍ **साहित्यिक गतिविधियाँ** ८१

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

ताकि देश की नींव सुदृढ़ हो

बच्चे भगवान् का रूप हैं···कन्याएँ देवी का रूप हैं···जैसे वाक्य खूब बोले-सुने जाते हैं। श्रीकृष्ण की बाल-लीलाएँ भी हर भारतवासी को आनंदित करती हैं। सूरदास तथा अन्य कवियों ने श्रीकृष्ण की बाल-लीलाओं पर उत्कृष्ट काव्य सृजन किया है। बच्चे घर-घर के लिए कैसे आनंद का वातावरण बनाते हैं तथा बच्चों के बिना घर कितना नीरस होता है, इससे भी सब परिचित हैं। देर-सबेर सरकारों का ध्यान भी बाल-कल्याण की दिशा में गया।

राष्ट्रीय बाल नीति बनाई गई। केंद्रीय सरकार में पहले बाल कल्याण विभाग, फिर बाल कल्याण मंत्रालय का गठन हुआ। प्रतिवर्ष 'बाल दिवस' मनाया जाता है तो विश्व स्तर पर २० नवंबर को 'बाल अधिकार दिवस' भी मनाया जाता है। बाल अधिकार आयोग का भी गठन हुआ। बच्चों के लिए विविध योजनाएँ बनीं। गणतंत्र दिवस पर वीर बालक-बालिकाओं को परेड में शामिल करना भी एक महत्त्वपूर्ण कदम था। ये बच्चे पहले हाथी पर सवार होकर गणतंत्र दिवस परेड का विशेष आकर्षण बनते थे, अब खुली जीप में भी उतने ही आकर्षण का केंद्र बनते हैं। प्रतिभावान बच्चों को अनेक सम्मानित-पुरस्कृत करने की भी योजनाएँ हैं।

इन सबके बावजूद स्वाधीनता के ७५ वर्ष बीत जाने के पश्चात् भी बच्चों की स्थिति बहुत कुछ बदलाव की माँग करती है।

यूनीसेफ जैसी संस्थाओं के साथ मिलकर चलाई गई अनेक योजनाओं के क्रियान्वयन के कारण जन्म लेते ही मरनेवाले बच्चों की संख्या में कमी आई है। घातक बीमारियों से बचने के लिए टीकाकरण के भी संतोषजनक परिणाम आए हैं, फिर भी भारत की गरीबी, अशिक्षा एवं सामाजिक परिदृश्य के कारण हम कई देशों से अभी भी पीछे हैं। सबसे बड़ा सवाल देश के प्रत्येक बच्चे को अच्छी शिक्षा मिलने का है। एक ओर पाँच सितारा होटल जैसी सुविधाएँ देने का दावा करनेवाले पब्लिक स्कूल, कॉन्वेंट स्कूल हैं तो दूसरी ओर अनेकानेक अभावों, असुविधाओं का सामना करते सरकारी विद्यालय हैं। पढ़ने की ललक में कितने ही प्रांतों में मासूम बच्चे रस्सी के सहारे जान जोखिम में डालकर नदी पार कर विद्यालय पहुँचते हैं; कहीं मीलों पैदल चलकर या पहाड़ी या जंगली रास्ते को पार कर विद्यालय पहुँचते हैं। यदि कहीं दूर-दराज गाँव में कामचलाऊ सुविधाएँ हैं भी तो शिक्षकों का अभाव रहता है। अकसर ऐसे सर्वेक्षण या दृश्य सामने आते हैं कि बच्चों को बहुत प्राथमिक स्तर का भी भाषा-ज्ञान या अन्य विषयों का ज्ञान नहीं हो पाता, भले ही वे पाँचवीं से लेकर आठवीं कक्षा के छात्र क्यों न हों! ऐसे में शिक्षा की यह कमजोर नींव देश अथवा समाज के ढाँचे को कितना सुदृढ़ कर पाएगी! हैरानी की बात यह भी है कि अकसर कुछ प्रांतों के छोटे शहरों, कस्बों अथवा गाँवों में हुए अचानक निरीक्षण अथवा सर्वेक्षणों में शिक्षकों का अल्प ज्ञान या दूषित ज्ञान हमें आश्चर्य से भर देता है कि ऐसे शिक्षकों से बच्चे क्या और कितना सीख पाएँगे!

जहाँ तक लाखों की फीस लेनेवाले अनेकानेक सुविधाओं से युक्त स्कूलों के छात्र-छात्राओं का सवाल है तो हमें भूलना नहीं चाहिए कि ऐसे स्कूलों से हमें आए दिन कैसी-कैसी अप्रिय खबरें पढ़ने-सुनने को मिलती हैं। ये सुविधाभोगी बच्चे किस प्रकार की मानसिकता विकसित कर लेते हैं। समाज के प्रति उनका क्या दृष्टिकोण बनता है, विशेषकर भारत जैसे देश में, उनमें कितनी संवेदनशीलता, करुणा, दया, त्याग जैसे मानवीय मूल्यों का विकास हो पाता है!

यहाँ एक बात को याद करना अत्यंत प्रासंगिक होगा। पुराने जमाने में राजा अपने बेटों को गुरुकुल में क्यों भेजते थे? किसी भी राजा को राजहमल में ही सौ शिक्षकों को बुलाकर बेटों को शिक्षा दिलाना कठिन नहीं था। राजा अपने बेटों को इसलिए गुरुकुल भेजते थे, ताकि वे अन्य सामान्य प्रजाजनों के साथ मिलकर पढ़ें, उनके जीवन तथा संघर्षों से परिचित हों, स्वयं भी संघर्ष एवं अनुशासन का पाठ सीख सकें; महल की सुख-सुविधाओं से वंचित रहें! संघर्ष भी जीवन का महत्त्वपूर्ण पाठ है! महँगे स्कूलों की सुविधाओं की चमक-दमक में पले-बढ़े बच्चे सामाजिक सच्चाइयों और आवश्यक संघर्षों से वंचित रह जाते हैं, जिसके दुष्परिणाम हम तनिक सी चोट लगने पर आत्महत्या कर बैठने या गुस्से में कुछ अपराध कर देने या नशे जैसी बुराइयों का शिकार बन जाने में देखते हैं। शिक्षा में भयावह गैर-बराबरी समाज में एक बहुत बड़ी खाई पैदा कर देती है, जिसे हम अनेक विकृतियों, विडंबनाओं में परिलिक्षित होते देखते हैं। सच कहें तो यह शैक्षिक गैर-बराबरी देश के लिए गहरे असंतोष, अलगाव, आक्रोश आदि का बीजारोपण कर देती है। विडंबना यह भी है कि सुविधायुक्त विद्यालय तो नगरों, महानगरों में थोड़े से ही हैं, जहाँ बच्चों

को प्रवेश दिलाने की मारामारी होती है, बहुसंख्या में वही विद्यालय हैं, जिनमें शिक्षा के स्तर पर प्रश्नचिह्न खड़े होते हैं। क्या ऐसी शिक्षा का ही यह फलित नहीं है कि वैश्विक सर्वेक्षणों में २०० या ३०० श्रेष्ठ विश्वविद्यालयों के आकलन में भारत के एक-दो संस्थान ही स्थान ले पाते हैं। नालंदा या तक्षशिला या विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालयों की गौरवगाथा सँजोए देश के लिए यह स्थिति कितनी अप्रिय प्रतीत होती है! सही शिक्षा अथवा गुणवत्तायुक्त शिक्षा न मिल पाने का प्रश्न (वह भी अधिकांश बच्चों को) जितना महत्त्वपूर्ण है, उससे हजार गुना बड़ा प्रश्न करोड़ों बच्चों का शिक्षा से पूरी तरह वंचित रह जाने का है। आज भी करोड़ों बच्चे बाल-मजदूरी कर रहे हैं या विद्यालयों में नहीं जा पा रहे हैं! अनेक कानूनी प्रावधानों के बावजूद बालश्रम थम नहीं पा रहा। शहरों-कस्बों में, होटलों-ढाबों में कितने ही मासूम 'छोटू' चाय देते मिल जाएँगे। प्रतिबंध के बावजूद जोखिम वाले कारखानों-उद्योगों में काम करते मिल जाएँगे। सरकारी पुनर्वास योजनाओं से बाल-मजदूरी से मुक्ति पाने में तो जाने कितने वर्ष लग जाएँगे, आवश्यकता है कि कोई व्यापक विराट् अभियान चलाकर बाल-मजदूरी को जड़ से मिटा दिया जाए और हर बच्चे को शिक्षा से मुनाफा कमाने का धंधा न बनने दिया जाए! जैसा कि हम नगरों में अनेक विद्यालयों के आचरण में देखते हैं। कितने ही स्कूल, कड़वे शब्दों में कहें तो शिक्षा के नाम पर 'सफेदपोश लूट' का माध्यम बन गए हैं। अदालतों में दायर की गई जनहित याचिकाएँ इसका प्रमाण हैं।

बाल-अपराधों और बाल-अपराधियों की बढ़ती हुई संख्या किसी भी सभ्य समाज को डराने के लिए पर्याप्त है। बाल-अपराधियों के ऐसे क्रूरतापूर्ण भयानक अपराध सामने आए हैं कि उनको उद्धृत करना भी कुरुचिपूर्ण लगता है, किंतु वे घटित हुए हैं। सरकारों, स्वयंसेवी संस्थाओं, समाज-चिंतकों को इस प्रश्न पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है। अकसर बाल-अपराधियों को भी अपराध के आधार पर सजा देने या वयस्क मानने की उम्र घटा देने जैसी माँगें तो उठती हैं, किंतु कोई व्यापक एवं गंभीर विमर्श नहीं हुआ है। इसे देश का दुर्भाग्य ही कहेंगे कि भारत का मीडिया कभी भी गंभीर प्रश्नों पर विमर्श नहीं करता वरन् बेकार की बहसों पर समय बरबाद करके देश की चेतना पर आघात करता है।

सामान्य बच्चों का मासूम निश्छल संसार भी आमूलचूल बदल चुका है। बच्चे शहर के हों अथवा कस्बों या गाँवों के, उनकी दुनिया अब फूलों, तितलियों, परियों, सुंदर कल्पनाओं, संयुक्त परिवार की खिलखिलाहटों या खेलकूद और मनोरंजन वाली दुनिया नहीं रही।

शहरों की सुविधाओं में पल रहे बच्चों की दुनिया तो और भी कष्टप्रद हो गई है। एकल परिवार और उस पर भी माता-पिता, दोनों नौकरी में—उन्हें संस्कार देने का दायित्व या तो घर की 'मेड' पर है अथवा टीवी चैनलों पर, जो अपसंस्कृति-विकृतियों का अपार भंडार हैं। 'होमवर्क' का बोझ उनको बाहर जाकर खेलने से रोकता है, तनावग्रस्त करता है तो अब मोबाइल एक नई 'महामारी' बन गया है। उनकी कच्ची मासूम उम्र उन अनेक अपराध विषयक कार्यक्रमों या अश्लील वयस्क वीडियो के अनुकूल नहीं है, जो वे जाने-अनजाने में देख रहे हैं और विकृतियों के शिकार हो रहे हैं, उनकी संवेदनाएँ भोथरी हो रही हैं।

अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने के कारण वे पहले से ही अपनी संस्कृति-संस्कारों से दूर हो रहे हैं, दादा-दादी की शिक्षाएँ-कहानियाँ बचीं नहीं—फिर मोबाइल से इतनी भयानक अश्लीलता, फूहड़ता, विकृति का निरंतर प्रहार! गाँवों के बच्चों की अपनी समस्याएँ हैं, झुग्गी-बस्तियों में पल रहे बच्चों की अपनी समस्याएँ हैं, अनाथ बच्चों की अपनी समस्याएँ हैं, दृष्टिबाधित या अन्य दिव्यांग बच्चों की अपनी समस्याएँ हैं।

कटु सत्य यही है कि बच्चों के लिए जो कुछ हो रहा है, उससे सौ या हजार गुना प्रयास करने की आवश्यकता है। बचपन को स्वस्थ, सुखद, सुयोग्य, सुसंस्कारित बनाए जाने की आवश्यकता है। करोड़ों बच्चों की समस्याओं का समाधान कोई साधारण कार्य नहीं है। भारत में चूँकि बच्चों का 'वोट' नहीं है तो उनके लिए संघर्ष करनेवाले, सोच-विचार करनेवाले भी बहुत कम हैं! बच्चों को प्यार करना एक बात है और उनके कल्याण के लिए सोच-विचार करना दूसरी बात।

बाल साहित्य समृद्ध हो

जिस देश में लगभग पच्चीस करोड़ से अधिक हिंदी पढ़ने-लिखने वाले बच्चे हों, उस देश में एक भी ऐसी बाल-पत्रिका न हो, जो लाखों बच्चों तक पहुँचे या घर-घर पहुँचे तो यह दु:ख की, चिंता की बात है। यदि देश में सौ से अधिक स्तरीय बाल-पत्रिकाएँ होतीं तो भी पच्चीस करोड़ बच्चों के लिए कम ही होतीं! कभी नंदन, पराग, चंदामामा जैसी पत्रिकाएँ बच्चों का ज्ञानवर्धन करती थीं, हिंदी भाषा एवं साहित्य के प्रति उनकी रुचि जगाती थीं, भविष्य के लिए 'पाठक' तैयार करती थीं! हिंदी में यह शून्य कैसे भरे, इस पर हिंदी के प्रकाशकों को विचार करना चाहिए।

बाल-साहित्य की गुणवत्ता और प्रसार पर भी विचार करने की आवश्यकता है। हिंदी प्रांतों की संस्थाओं ने अब बाल-साहित्य को सम्मानजनक स्थान देने का प्रयास किया है; पुरस्कार राशि, जो पहले अत्यंत दयनीय थी, उसे सुधारा है, किंतु कुछ और गंभीर एवं ठोस प्रयास करने की आवश्यकता है।

अब साहित्य-उत्सव तो अनेक नगरों में आयोजित हो रहे हैं, किंतु उनमें भी बाल-साहित्य की ओर कम ही ध्यान गया है। वैली ऑफ वर्ड्स साहित्य उत्सव ने बाल एवं किशोर लेखन पर एक लाख रुपए का पुरस्कार देने की अच्छी पहल की है, अन्य साहित्य उत्सवों को भी इस दिशा में सोचना चाहिए। प्रतिष्ठित वरिष्ठ साहित्यकारों को भी बच्चों से जुड़ी समस्याओं पर लेखन को प्राथमिकता देनी चाहिए। 'आपका बंटी' जैसी कृति को कई दशक बीत गए। बाल-साहित्य का परिदृश्य समृद्ध बनेगा तो देश एवं समाज के लिए भी हितकर होगा!

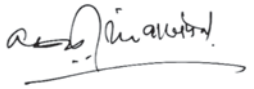

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

गोरी का गाँव

• विवेकी राय

सुप्रसिद्ध साहित्यकार स्व. विवेकी राय की कृतियों में प्रमुख हैं–'बबूल', 'पुरुषपुराण', 'लोकऋण', 'श्वेत-पत्र', 'सोनामाटी', 'समर शेष है', 'मंगल-भवन', 'नमामि ग्राममम्', 'अमंगलहारी एवं देहरी के पार' (उपन्यास); 'फिर बैतलवा डाल पर', 'जुलूस रुका है', 'गँवई गंध गुलाब', 'मनबोध मास्टर की डायरी', 'वन-तुलसी की गंध', 'आम रास्ता नहीं है', 'जगत् तपोवन सो कियो', 'जीवन अज्ञात का गणित है', 'चली फगुनहट बौरे आम' (ललित-निबंध); 'जीवन परिधि', 'गूँगा जहाज', 'नई कोयल', 'कालातीत', 'बेटे की बिक्री', 'चित्रकूट के घाट पर', 'सर्कस' (कहानी-संग्रह); छह कविता-संग्रह, तेरह समीक्षा ग्रंथ, दो व्यक्तित्व व कृतित्व पर आधारित ग्रंथ। कई कृतियों का अन्य भाषाओं में अनुवाद। ८५ से अधिक पी-एच.डी.। प्रेमचंद पुरस्कार, साहित्य भूषण तथा महात्मा गांधी सम्मान, नागरिक सम्मान, यश भारती, आचार्य शिवपूजन सहाय पुरस्कार, राष्ट्रीय शरद जोशी सम्मान, महापंडित राहुल सांकृत्यायन सम्मान सहित कई अन्य सम्मान।

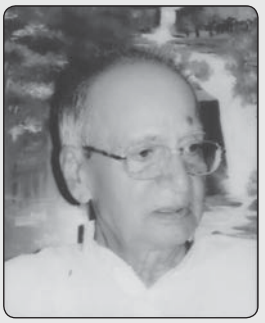

नदी के किनारे जहाँ बाँध बनाया गया है, रामदत्त की वह खूबसूरत औरत गोरी रोज सबेरे बरतन माँजने आ जाया करती है। जब उधर से गुजरता हूँ, उसे देख लेता हूँ। अब उससे ही नहीं, उसके बरतनों से भी परिचित हो गया हूँ। एक तसला, एक कड़ाही, दो थाली और एक कलछुल, बस यही।

आज मैंने सोचा कि यह गोरी भारतमाता है। इसका टीन का चतुर्दिक् से पिचका तसला आज की राजनीति के समान है। यह असली अंत्योदय पात्र है। इसकी लोहे की तरह लगने वाली मिट्टी की कड़ाही सरकारी कड़ाही है। भीतर तेल की चिकनाई और पेंदी में की एक तह कालिख दूर-दूर तक पानी में तैर रही है। दो थालियों में एक टीन की है और एक पीतल की। एक में काम के स्वार्थवादी खाते हैं और एक में नाम के समाजवादी। कलछुल विरोधी पार्टियों के छूँछे नारे परसने का काम करती है। और वह ? वह भारतमाता ?

आइए, उसका एक दिन का किस्सा बताऊँ। गाँव में एक मुकदमेबाज सज्जन हैं। सुविधा के लिए उनका नाम कचहरीसिंह समझ लिया जाए। एक दिन ब्राह्म-मुहूर्त में उठकर उन्होंने अपने दोनों हाथों को देखा और भगवान् का नाम लिया। नित्य-क्रिया से निवृत्त होकर इधर-उधर देखा। कोई नहीं है, रास्ता साफ है, यह देखकर बस्ता बगल में दबाकर निहुरे-निहुरे बाँध की ओर बढ़े।

गोरी बरतन माँज रही थी। बरतन पर बालू-माटी खरखरा रहा था। न जाने कैसे, जिसे हम नहीं देखना चाहते हैं, वही दिख जाता है।

उस पार उस दिन कचहरीसिंह मिले तो बड़बड़ा रहे थे, "जरा भी शऊर नहीं। बैठ गईं बरतन लेकर रास्ते पर! लोग साइत-सगुन पर घर से बाहर होते हैं। ट्रेन का यही वक्त है, घर से निकलने का यही वक्त है। रोज का यही धंधा है। मन करता है कि लौटकर तमाम बरतन उठाकर उधर फेंक दूँ—एक तो काले रंग की कड़ाही, दूसरे जूठी और तीसरे खाली पड़ी। हे भगवान्! न जाने आज क्या होगा ? मुकदमे का काम ठहरा। इस ससुरी ने साइति बिगाड़ दिया। आज लौटकर आते हैं तो मजा चखाते हैं। देखें कि कैसे यहाँ सबेरे-सबेरे खाँची भर जूठी भँडेहर लेकर बैठती है ? पता नहीं, इनके बाप की नदी है, कि यह घाट खरीदी हुई है, कि इनके दादा लोगों ने इस बाँध के पास बैठने का पट्टा लिखाया है।"

अब आप जरा कचहरीसिंह को देखिए। 'सीस पगा न झगा तन में' वाली बात चाहे पूरी तरह सच न भी हो तो 'धोती फटी सी लटी दुपटी, अरु पाँय उपानह की नहीं सामा' वाला कथन तो हू-ब-हू उतरता है। मगर इसका अर्थ यह नहीं कि कचहरीसिंह 'सुदामा' हैं। नहीं, अगर किसी पौराणिक पात्र से उनकी तुलना हो सकती है तो वह पात्र हैं 'नारद', मगर यहाँ भी कमी रह जाती है। नारदजी के बारे में यह कहीं चर्चा नहीं आती है कि वे विष्णु भगवान् की कचहरियों में रुपया बिखेरते रहे। इधर हमारे कचहरीसिंह हाकिमों, वकीलों और बाबुओं के टेबुल पर पैसा खिसकाया करते हैं। इन्होंने भूख-प्यास को जीत लिया है। दिनभर बिना दाना-पानी के जूझते रहेंगे। इन्होंने शीत-ताप को जीत लिया है। कठिन-से-कठिन जाड़े में एक चादर पर रात काट देते हैं। दाढ़ी बढ़ी है, शरीर उकठ गया है। सजीव इनसान नहीं, वे हमें एक धूहा की तरह लगते हैं, कहा जाता है कि ऐसे ही जनम भर से लड़ते-भिड़ते ही 'जिमदार' की जिंदगी बीत गई। मुँह तो खूब बड़ा बनाया, पर कुछ हाथ लगा नहीं···तो आज ये खाली कड़ाही देखकर भड़क उठे।

कसूर किसका है ? कड़ाही कहाँ जाए ? वास्तव में नाचीज कड़ाही को जो वह गरीब माँजनेवाली है, वही झिझक तथा खीज के मूल में है। उसकी सुंदरता इन बरतनों से मेल नहीं खाती है। लोगों की आँखें एक बार उसकी ओर उठती हैं और फिर इन कुरूप बरतनों पर आकर भिनभिना उठती हैं। जैसी वह कमल के समान खुद है वैसी ही सामग्रियों से उसे घिरी हुई होना चाहिए।

लेकिन हमें मालूम है कि सुबह से शाम तक कटिया-बिनिया करने के बाद भी उसे केवल किसी प्रकार सूख-पाख भोजन भर मिल जाता

है। बनिहारिन बिटिया की सुंदरता माटी की सुंदरता है। वह चारों ओर माटी से घिरी है। ऐसी माटी की ढेली, जिसका रवा-रवा गरीबी के घाम में बिखरकर छितरा गया है। हम जो देख रहे हैं, सो अपने देखने के संस्कार को देख रहे हैं। अन्यथा वहाँ देखने लायक कुछ है नहीं। सब उपेक्षित हैं और दुत्कारों से घायल हैं। वह घूर है। गरीबी का घूर है। भारी घूर है। इस पूरे समाज का घूर। अगर घूर पर एक धतूरे का उजला, टटका और मनोहर फूल खिल गया तो वह घूर कमल-बन नहीं हो गया। घूर घूर ही है। उस दिन इस घूर पर एक खाँची 'बातों का बुहारन' एक स्वामीजी ने फेंक दिया और घूर को क्या कहना है? चुपचाप सह लिया।

बात यह हुई कि स्वामीजी, जो भगवान् की भक्ति करते हैं, सो उनके विधान में है कि सुबह-ही-सुबह स्नान हो जाना चाहिए। स्नान के बाद तिलक-त्रिपुंड और उसके बाद आसन-ध्यान। यही उनकी आजीविका है। वास्तव में वे एक मकड़े के समान हैं और रोज जाला तानकर बैठते हैं। पूड़ी, मिठाई, दूध, चीनी, फल, कपड़ा, रुपया और मान-सम्मान के कीट-पतिंग भगवान् उनके लिए भेजा करते हैं।

कहते हैं, किसी गाँव में ही ये स्वामीजी पैदा हुए। इनके पिता एक जमींदार थे। लालन-पालन बहुत प्यार-दुलार से हुआ। जमींदारी टूट जाने पर नमक-तेल की बीहड़-परती तोड़ना पड़ी तो उधर पिता चल बसे और इधर ये 'स्वामीजी' हो गए। अभी ईश्वर-भक्ति की जमींदारी को तोड़ने वाला कोई गोविंदवल्लभ पंत पैदा नहीं हुआ। अब आइए, देखिए इस क्षेत्र के इस एक छोटे 'जमींदार' के नखरे—

स्वामीजी स्नान करने पहुँचे तो वह औरत अपने उन्हीं बासनों पर हाथ चला रही। स्वामीजी गरज उठे—

''जो है सो क्या यही वक्त है बरतन माँजने का? तमाम जल को नास दिया। कटकटाए हुए और जले हुए भात की किकोरी यह पानी में तैर रही है। राम! राम!! न किस जाने अन्न का भात है। अरे, यह तो बाजरा मालूम होता है। जो है सो, क्यों इतना कसके काहे को रीन्ह दिया? तेरे को शऊर नहीं है? फिर उधर देखो, तमाम करिखा-करिखा पानी में उतराया है। साक्षात् कलियुग घाट पर छा गया है। हे प्रभु! अब मैं कहाँ नहाऊँ? रोज-रोज इसका यही धंधा है। रोज सोचता हूँ कि पहले आकर नहा लूँ, परंतु आते-आते ई यहाँ हाजिर! अरे देख, फजिर के बेला में आदमी के नहाने-धोने का वक्त है। देखकर आया कर। शिव-शिव-शिव! रोज तुमसे कहता हूँ—यह पानी गंदा मत कर। भगवान् पर चढ़ता है। कल से उधर हटकर बैठना। साधु-संत और देवता-पितर से डरो। जो है सो, क्या कह रहा हूँ···''

स्वामीजी बड़बड़ाते हुए बाँध के रास्ते उस पार नहाने के लिए चले। नदी मुश्किल से पंद्रह-बीस गज चौड़ी है। इस पार से उस पार जाने के लिए एक बाँध बना है। बाँस के खंभों पर बाँस बिछाकर यह बाँध बना है। बाँस बहुत बेतरतीब और खुले हैं। आने-जाने वालों को भरपूर सरकस करना पड़ता है। यह बाँध बाँध नहीं, गाँव के टूटेपन का प्रतीक है। यह तसवीर गाँव की है। यहाँ सुख-दु:ख के दोनों किनारों के बीच जो जोड़-बटोरकर एक काम-चलाऊ जीवन बाँधा गया है, वह इतना अस्थिर, इतना डगमग, इतना उखड़ा, इतना डरावना, इतना लुजलुज है कि हर चलने वाला त्रस्त है। कोई भरोसा नहीं। पाँव डगमगाते हैं। फिसलन-पर-फिसलन है। अब गिरे, तब गिरे। ऐसा यह गाँव की टूटी जिनगी वाले टूटे लोगों का बाँध।

स्वामीजी ने अपनी चटाकी निकालकर हाथ में ले ली और शिव-शिव करते जब वे उस पार चले गए तो उधर से बसंत बाबू बाँध पर सवार हुए।

बसंत बाबू का किस्सा यह है कि ये गाँव के उस सबसे बड़े किसान के सुपुत्र हैं, जिनका हल उस बरतन माँजने वाली का पति जोतता है। ये आज पाँच वर्ष से इंटरमीडिएट में फेल हो रहे हैं। यह छठवाँ साल है। कॉलेज में 'प्रिपरेशन लीव' हो गई है। गंभीर अध्ययन के लिए गाँव में आए हैं। गाँव में शहर की भाँति टहलने-घूमने वाले स्मरणीय स्थान कहाँ हैं? बसंत बाबू का कथन है कि हमारे गाँव में एकमात्र ब्यूटीफुल प्लेस यदि कोई है तो वह बाँधवाला स्थान ही है। यहाँ नदी के दोनों किनारों पर झाड़ियाँ हैं, जो नदी के पानी में झुकी हैं। ऐसे स्थलों को सिनेमा वाले खोजा करते हैं। यदि सूचना दे दी जाए शूटिंग करने के लिए तो वे बंबई से यहाँ आ जाएँ। सुबह इसकी खूबसूरती बहुत बढ़ जाती है। पानी शांत रहता है। बाँध पर जाते लोगों की शोभा, उनके डगमगाते पाँवों की शोभा, सूरज की किरणों के किनारों पर भिड़ी हरियाली पर खेलने की शोभा, बतखों के तैरते रहने की शोभा और ऊँचे किनारों के बीच नदी के सपाट-सीधे बहार की शोभा! बस इस बीच यदि कोई भद्दगी है तो गोरी का बरतन माँजते रहना। सुबह-सुबह यह गंदे बरतनों को लेकर बैठ जाती है। इस औरत को चाहिए कि बरतनों को तो यह घर पर ही साफ कर ले और यहाँ आकर खड़े-खड़े कुछ निहारा करे या अपनी एड़ियाँ पत्थर पर रगड़े या अपना ब्लाउज उतारती रहे या पानी में तैरती रहे। तब इस स्थान की सुंदरता और बढ़ सकती है।

बाँध पर सवार होकर बसंत बाबू ने रोज की तरह उस औरत, उसके गंदे बरतनों की ओर निहार-निहारकर अनेक नखरे किए और कैसे हवा खाते, टहलते आए थे, उसी प्रकार चले गए।

अब यहाँ आज का प्रसंग बता दूँ, जिसके सिलसिले में मैंने सोचा कि यह गोरी मुझे भारतमाता की तरह लगी, जिसे आरंभ में ही मैंने लिखा है।

आज ऐसा हुआ कि गोरी बाँध के पास आई और नदी के किनारे बैठ गई। वह केवल हाथ धो रही थी। उसके साथ आज एक भी बरतन नहीं था। कचहरीसिंह आए। उसे देखते ही मुसकराते चले गए। स्वामीजी आए। उधर देखकर मन-ही-मन बहुत खुश हुए। बसंत बाबू आए और एकदम अपमा कैमरा ठीक करने लगे, फोटो लेने के लिए। मगर किसी ने यह नहीं सोचा कि आखिर रोज-रोज धोने के लिए आनेवाले उसके जूठे बरतन आज क्यों नहीं आए?

विडंबना

● उषाकिरण खान

१०० नं. मकान का अहाता लगभग एक एकड़ का है। उसके ठीक बीचोबीच विशाल मकान अवस्थित है। पहले उसके सामने बड़ा सा लॉन था, लॉन में क्यारियाँ थीं, क्यारियों में रंग-बिरंगे फूल थे। धरती से सटे पैंजी के फूल भाँति-भाँति के, डालिया के पौधे, हॉलिहॉक्स के सतर फूलों से भरे गाछ गमलों में गुलदाऊदी तथा लक्ष्मण बूटी। पीछे आम अमरूद के पेड़, करौंदे की झाड़, बेर और शहतूत। दरअसल मकान के ऊपरी हिस्से का दो कमरा किराएदार को दे दिया था। किराएदार केरल के दंपती थे। उन्होंने एक स्कूल निकट के किसी मकान में खोल रखा था। इस मकान में छात्रावास बना रखा था। छात्रावास में सभी ग्रामीण छात्र-छात्राएँ आते थे। पहले दिन सारे बच्चे झबरे बालोंवाले तेल चुपड़े आते; लड़कियाँ काजल बिंदी और कलाई भर काँच की चूड़ियाँ पहले आतीं। छह माह के बाद बच्चों के अभिभावक झटके से उन्हें पहचान भी न पाते। बाल प्राय: करीने से कटे-छँटे होते, चूड़ियाँ, नेलपॉलिश, काजल बिंदी नदारत होते। प्रतिदिन सुबह और रात ब्रश करने की आदत बन गई होती सो चमचमाते दाँत होते।

अकसर बच्चे मगही, भोजपुर और मैथिली बोलना ही जानते, पर छह माह में वे हिंदी बोलने लगते, अंग्रेजी के कुछ शब्दों से भी उनका परिचय हो चुका होता। छह माह से लेकर सालभर बच्चे छात्रावास में ही पढ़ते सीखते, बाद में उनके स्कूल जाने लगते। अभिभावकों को बच्चों के विकास देखकर आश्यर्चमिश्रित संतोष होता। कुछ बच्चे जो ग्रामीण निर्धन होते उन्हें स्कूल के संचालक ने मात्र शिक्षा देने लाया होता, उनसे इन्हें किसी प्रकार की फीस नहीं मिलती, परंतु जब वे बच्चे गाँव जाते, तब उसके बदले हुए रूप और संस्कार देख संपन्न लोगों को धक्का लगता। कुछ परिवार अपने बच्चों को उस स्कूल में दाखिल करने को उत्सुक हुए। पर उन्हें यों ही नहीं रखा गया, बल्कि उनसे मोटी फीस ली गई।

विनीता और संगीता वैसी ही किसी मोटी फीसवाले असामी की बच्चियाँ थीं। दस और बारह साल की इन बच्चियों को अक्षर-ज्ञान तो था ही अन्य तरीकों से अनभिज्ञ भी नहीं थीं। ये राज्य के एक मंत्रीजी की बेटियाँ थीं। मंत्रीजी दो बार विधायक रह चुके थे। गाँव में पक्का घर

सुपरिचित लेखिका। हिंदी में चार उपन्यास, पाँच कथा-संग्रह, सौ से अधिक लेख एवं रिपोर्ताज (असंकलित), तीन पूर्णकालिक नाटक मंचित, दो बाल नाटक, कई नुक्कड़ नाटक मंचित, बाल उपन्यास एवं कथाएँ प्रकाशित। राष्ट्र-भाषा परिषद्, बिहार का 'हिंदी-सेवी सम्मान', 'महादेवी वर्मा पुरस्कार' तथा 'राष्ट्रकवि दिनकर पुरस्कार' से सम्मानित। संप्रति स्वतंत्र लेखन।

और पक्के शौचालय बन गए थे। दो बेटों को उन्होंने साथ रखकर स्कूल भेजना शुरू कर दिया था, पर बेटियों को गाँव के स्कूल में ही पढ़ाया। गाँव में अव्वल तो किसी स्कूल में बच्चे रुटीन के अनुसार पढ़ नहीं पाते; फिर अगर पढ़ भी लेते तो घर में कोई बतानेवाला न होता। मास्टरजी पहाड़ा रटने को छोड़ कुरसी पर खर्राटे लेने लगते। बच्चों को पढ़ने की रुचि नहीं जागती। इधर एम.ए. पास मंत्रीजी अपने कुछ मित्रों के परिवार की लड़कियों को देख मन-ही-मन अपने बेटियों के लिए भी यह कल्पना करने लगे। तभी उन्हें इस आवासीय शिक्षण केंद्र का पता चला। लड़कियाँ हिंदी बोलना नहीं जानती थीं, न ही वे ठीक से केरल कन्या की हिंदी समझ पातीं, ऐसे में उसने मुझे बुलवा भेजा आदर सहित। मैं लगभग एक सप्ताह तक उनके बीच सहर्ष दुभाषिया बनी रही। लगभग दो वर्ष वे लड़कियाँ वहाँ रहीं। उनमें आमूलचूल परिवर्तन आ गया था। जब वे लाल हरे चटक फूलोंवाली कुरती-सलवार में नहीं, बल्कि नीले स्कर्ट में रहतीं। तेल से चिपकी चोटियाँ नहीं बल्कि शैंपू से धुले लहराते घनेरे केश थे। वे हाय और बाय करना सीख गई थीं। इन दो वर्षों में मैं भी वहाँ से चली आई थी।

वर्षों बीत गए। सरकारें जनसंत्र में बदलती रहती हैं। जिनको जनादेश प्राप्त होता है, वे ही सत्ता पर काबिज होते हैं। कई बार के विधायक दो बार मंत्री बने संगीता-विनीता के पिता ने अकूत संपत्ति अर्जित कर ली, पर जनता ने और मौका न दिया। तब तक संगीता विनीता स्कूल पास कर चुकी थी। दोनों बहनें अंग्रेजी जीभ ऐंठकर बोलना सीख गए थे, जिसे देख मन मंत्रीजी आनंदित होते। दोनों बहनों का ब्याह धनाढ्य लड़कों से

हो गया। शहरी धनाढ्य व्यापारी। मंत्रीजी के चोर धन को छुपाने के सौ जतन करनेवाले। मैं संगीता के विवाह में गई थी, विनीता के विवाह के समय नहीं थी।

चूँकि हमारा तथा मंत्रीजी का कार्यक्षेत्र अलग था सो मिलना-जुलना संभव ही नहीं था। जीवन में कई प्रकार के लोगों से भेंट मुलाकात होती है, सब अपने अपने रास्ते चले जाते हैं। रह जाती है यादें। कोई प्रसंग उठ जाता है। तब पुन: देखने की कसक उठती है। मंत्रीजी वगैरह पर तरह तरह के केस-मुकदमे चलते रहते हैं और कुछ दिनों की अखबारी सुर्खियाँ बटोर अकसर अपनी मौत मन जाती हैं। उन मंत्रीजी पर भी छींटाकशी हुई, पर तुरंत ही दब गई बात।

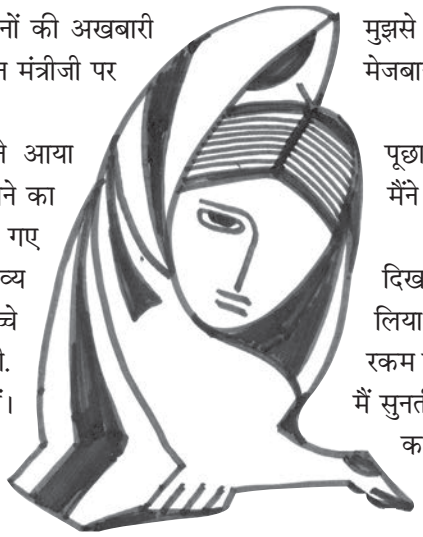

एक दिन एक पड़ोसी युवक मुझसे मिलने आया और एक स्कूल के पुरस्कार वितरण करने को चलने का आग्रह करने लगा। शहर में बड़े-बड़े स्कूल खुल गए थे। राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय डिग्री बाँटनेवाले स्कूल। भव्य बिल्डिंगें, ए.सी. बसें। इस गरीब प्रदेश में जहाँ बच्चे हर कूड़ेदान पर कूड़ा बीनते नजर आते, वहाँ ए.सी. बस में लदकर ए.सी. क्लास रूम में बच्चे पढ़ते हैं। जहाँ स्कूल कॉलेजों में शिक्षकों का अकाल है वहाँ सजी-धजी शिक्षिकाएँ और सजीले नवयुवकों की भरमार है। ऐसे ही स्कूल में चलने की पेशकश कर रहा था बाजूवाले घर का नवयुवक। वह नवयुवक जिस स्कूल का ड्रिल मास्टर था, वह भव्य था। चारों ओर हरा-भरा मैदान था, फूलों से लदे वृक्ष, लताएँ, पौधे थे। छोटा सा कमल फूल का चह बच्चा था। मुख्य मार्ग पर लड़कियाँ एक ही रंग की साड़ी पहन खड़ी थी। फूलों भरी लचीली शाख सी लड़कियाँ। हाथों में फूलों की पँखुड़ियाँ लिये मुझ पर वारतीं मुख्य दरवाजे पर टीका, अच्छत और आरती का प्रबंध था। मैं गुलाब की पँखुड़ियों की खुशबू में सराबोर एस्कोर्ट कर निदेशक के कमरे में पहुँचा दी गई। भव्य कमरा था। खूबसूरत सोफा सेट कीमती कालीन पर रखा था। नाश्ते-चाय का इंतजाम भी वैसा ही नायाब।

निदेशक महोदया लंबी गुदगुदी सी खूबसूरत शख्सियत वाली थीं। उनके कटे आधुनिक केश गरदन के दोनों ओर बिखरे थे। स्लीवलेस ब्लाउज और शानदार शिफॉन साड़ी में सजी बेलौस सी थी। अपने सहयोगियों से अंग्रेजी और मुझे हिंदी में बातें करती वे हौले-हौले मुसकरा रही थीं। स्कूल के कार्यक्रम प्रसाद वितरण के बाद उन्होंने मुझसे लंच करने का आग्रह किया। मैं उनकी मेहमान थी, मेजबान का जादू मुझ पर चल गया था।

लंच के समय मुझसे डायरेक्टर ने हौले से मुझसे पूछा, "मैम, आपने मुझे नहीं पहचाना, मैं संगीता हूँ।" मैंने क्षणांश लिया सोचने में फिर पहचान गई।

"मैम, मैंने सोचा बच्चों को शिक्षा देने, सही राह दिखलाने से बड़ा कोई पुण्य कार्य नहीं। सो स्कूल खोल लिया।" उसने विस्तार से स्कूल खोलने की प्रक्रिया, भारी रकम खर्च कर फ्रेंचायजी लेने की प्रक्रिया का वर्णन किया। मैं सुनती रही। मैं सुनती रही कि उसने मुझे याद किया कि कभी मैंने उसकी शिक्षा आसान कर दी थी। उसीकी ए.सी. गाड़ी में लौटती हुई सोच रही थी कि वह एक गँवई लड़की थी, जिसे केरल से आनेवाली सेवाभावी शिक्षिका मनुष्य बना रही थी, नागर बना रही थी, परंतु इसका ध्यान गाँव की ओर नहीं गया। इसने चौगुने फीसवाला भव्य शिक्षा केंद्र खोल लिया है, जो तिजोरी भर सके। इसने बखूबी शिक्षा का व्यापर करना सीख लिया है। यही विडंबना है।

१, आदर्श कॉलोनी,
श्रीकृष्ण नगर, पटना-८००००१ (बिहार)
दूरभाष : ०९३३४३९१००६

एक हकीकत

लघुकथा

● सेवा सदन प्रसाद

नारी सुरक्षा समिति के आग्रह पर पुलिस ने दिल्ली के एक पॉश इलाके में छापा मारकर देह व्यवसाय में लिप्त कुछ लड़कियों को गिरफ्तार किया। पूछताछ के दौरान इंस्पेक्टर ने एक लड़की से पूछा, "इस दलदल में तुम्हें धकेलने का जिम्मेदार कौन है?"

"मैं खुद।" लड़की बिंदास बोली।

"क्या?" पुलिस इंस्पेक्टर ने आश्चर्य जाताया।

तब नारी सुरक्षा समिति की अध्यक्षा नीरजा वर्मा ने कहा, "नहीं सर, यह झूठ बोल रही है। इस शहर में जिस्मों के सौदागर का जाल फैला हुआ है।"

लड़की तब निडरता से बोली, "जब भूख से मरती रही···ग्रेजुएट होकर नौकरी के लिए भटकती रही···माँ के कैंसर के इलाज के लिए पैसे-पैसे के लिए तरसती रही। तब किसी भी सरकारी या गैर-सरकारी संस्था ने ध्यान नहीं दिया। तब मैंने खुद अपना जिस्म बेचने का फैसला किया।"

तब समाज, व्यवस्था एवं कानून सब कठघरे में नजर आने लगे।

६०१ महावीर दर्शन सोसाइटी
ब्लॉक नं. ११ सी, सेक्टर-२०
खारघर नवी मुंबई-४१०२१०
दूरभाष : ९६१९०२५०९४

अपने जीवन के अमृतकाल का आनंद लें

• सुरेश जैन

हम अपने ऐसे वरिष्ठ नागरिकों का सम्मान करें, जो क्रियाशील रहते हैं, अपने समय, अनुभव, ज्ञान और कौशल का सदैव सदुपयोग करते हैं। स्वस्थ तथा प्रसन्न रहते हैं। सांध्यप्रकाश में पावन गोधूलि को प्रणाम करते हुए अपने अमृतकाल का आनंद लेते हैं। अस्सी के दशक में यात्रा करते हुए हम अपने जीवन के अमृतकाल के तृतीय वर्ष में अपनी आत्मा के अंतिम लक्ष्य की ओर अग्रसर हैं।

७५ वर्ष पूर्ण होते ही हमारे जीवन का अमृतकाल (७५-१००) शुरू होता है। इस काल का आध्यात्मिक महत्त्व है। यह अपनी आत्मा के सन्निकट रहकर आत्मा की उपासना का काल है। पर्व है, महापर्व है। अद्‌भुत समय और विशिष्ट अवसर है। जन-जन के समक्ष विविध आदर्श समुपस्थित करने का अच्छा अवसर है। अलौकिक आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करने का काल है। क्रोध, मान, माया और लोभादिक कषायों के प्रशमन का काल है। क्षमा और समतापूर्वक जीवन जीने का काल है। अपने मन में उलझी हुई राग और द्वेष की ग्रंथियों को सुलझाने का समय है। सबकी भूलों का क्षमा कर अपने जीवन को पवित्र बनाने का समय है। 'गीता' में दिए गए श्रीकृष्ण के उपदेश को आत्मसात् कर प्राणिमात्र को अपने तुल्य समझने का अवसर है। सभी प्राणियों के साथ हमारी मित्रता है, किसी के साथ वैर नहीं है—महावीर के इस सिद्धांत को आत्मसात् करने का पर्व है। हिंसक प्रवृत्तियों को त्यागकर अहिंसक जीवन-शैली अपनाने का काल है। विविध अहिंसक प्रयोग करने का अवसर है। पीछे मुड़कर स्वयं को देखने का स्वर्णिम अवसर है। अहंकार और ममकार के विसर्जन का काल है। आत्म-शोधन और आत्मोत्थान का पर्व है। आत्म-चेतना को जाग्रत् करने का महापर्व है।

हम अपना उद्‌देश्यपूर्ण जीवन प्रसन्नतापूर्वक जिएँ। धीरे-धीरे भौतिक जगत् से ऊपर उठते हुए आध्यात्मिक जीवन जिएँ। हम अपने शरीर को सही ढंग से संचालित करते रहें। घड़ी को टिक-टिक करने दें। बढ़ती आयु की चिंता न करें। अपनी धारणा के अनुरूप ही अपनी आयु का मूल्यांकन करें। उम्र के सूचक समंक के प्रतीक संख्यावाची वर्ष की ओर ध्यान न दें।

कलेक्टर एवं जिला दंडाधिकारी, होशंगाबाद, विदिशा एवं बैतूल, संचालक, लोक शिक्षा, मध्य प्रदेश, महाप्रबंधक, मध्य प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम, अपर आयुक्त, मध्यप्रदेश, अनुसूचित जाति एवं जनजाति कल्याण। भारत में पर्यावरण विधि (अंग्रेजी), मध्यप्रदेश नगर विकास विधि संहिता (हिंदी) मध्यप्रदेश शिक्षा विधि संहिता (हिंदी), अल्पसंख्यक समुदाय विधि संहिता (हिंदी) एवं बड़े भाई की पाती (हिंदी) पुस्तकों का लेखन एवं शताधिक शोध-पत्रों एवं ३०० से अधिक लेखों का प्रकाशन। विभिन्न संस्थाओं का संस्थापन, संचालन एवं संरक्षण।

अपनी जीवटता के कौशल को सीखें और निरंतर अभ्यास से निखारें। अपनी कमजोरियों को दूर करें। अकेलापन महसूस होने पर अपने मित्रों से चर्चा करें। सामाजिक मेल-मिलाप बढ़ाएँ। स्वयं से मित्र की भाँति बात कर अकेलेपन को दूर करें। अपनी इंद्रियों पर अपना ध्यान केंद्रित करें। विषम परिस्थितियों का डटकर मुकाबला करें।

यह उल्लेखनीय है कि अपनी आयु के सत्तर के दशक में इस्कॉन मूवमेंट के जनक श्रील प्रभुपाद ने भगवत-गीता की विशद व्याख्या की। अत: जीवन पथ में आगे बढ़ते हुए उम्र के किसी भी पड़ाव पर हम नया कार्य चालू करने में तनिक भी संकोच न करें। ऐसे कार्य में हमें सफलता निश्चित ही प्राप्त होगी। अपने उत्तराधिकारियों को अपनी संपत्ति का हस्तांतरण करते समय यह ध्यान रखें कि वारेन बफे ने अपनी १०० बिलियन डालर से अधिक संपत्ति में से ९९ प्रतिशत दान कर दी और केवल १ प्रतिशत अपने बच्चों को दी। बफे ने बताया कि उन्होंने अपने बच्चों को इतनी संपत्ति प्रदान की है, जिससे कि वे कुछ भी कर सकते हैं किंतु इतना अधिक नहीं दिया कि वे कुछ न कर सकें। हममें से अनेक वरिष्ठ नागरिक सौभाग्यशाली है कि हमारे पुत्र और पुत्रियाँ अपने माता-पिता की दौलत प्राप्त करने की अपेक्षा ही नहीं रखती है।

हम अपने परिवार के सदस्यों में संस्कारों का बीजारोपण और संवेदनाओं का संपोषण करें। उन्हें अपनेपन, त्याग और सहजीवन की

सीख दें। परिवार में रहकर ही सुघड़ व्यक्तित्व का निर्माण होता है। सर्वाधिक भावनात्मक संतुष्टि हमें अपने परिवार से ही मिलती है। अनेक परिवार मिल-जुलकर समाज का निर्माण करते हैं। प्रत्येक समाज की स्थिरता और प्रगतिशीलता सभी परिवारों की एकता पर टिकी रहती है। अत: हम स्वच्छंदतावादी सोच से ऊपर उठकर पारिवारिक टूटन से बचें और सभी को बचाएँ। अपने परिवार और समाज को संगठित करें। पारिवारिक मूल्यों के संस्थापन, पुनर्संस्थापन और संधारण के लिए ठोस प्रयास करें। परिवार के लोगों को अपने घर के आसपास बसाने का प्रयास करें। इससे सभी के बीच एकजुटता बढ़ती है। समय पर सभी तुरंत ही एक दूसरे के काम आते हैं।

अपनी जीवटता के कौशल को सीखें और निरंतर अभ्यास से निखारें। अपनी कमजोरियों को दूर करें। अकेलापन महसूस होने पर अपने मित्रों से चर्चा करें। सामाजिक मेल-मिलाप बढ़ाएँ। स्वयं से मित्र की भाँति बात कर अकेलेपन को दूर करें। अपनी इंद्रियों पर अपना ध्यान केंद्रित करें। विषम परिस्थितियों का डटकर मुकाबला करें।

वृद्धजन प्रतिदिन हल्की सी कसरत करें। हल्का-फुल्का व्यायाम करें, इससे हमारा दिमाग स्वस्थ और दुरुस्त रहता है। भूलने की बीमारी कम हो जाती है। मस्तिष्क की सिकुड़न रुक जाती है और मस्तिष्क में खून के प्रवाह में वृद्धि हो जाती है। नियमित भ्रमण के साथ-साथ प्राय: एक पैर ९० डिग्री मोड़कर दूसरे पैर के सहारे खड़े होने का अभ्यास करें। हर बार और सायंकालीन भोजन के बाद नियमित रूप से १० मिनिट टहलें। इससे ब्लड शुगर लेवल कम हो जाता है। अधिक मानसिक श्रम से बचें। इससे हमारे सोचने की प्रक्रिया धीमी हो जाती है। थकान इस बात का संकेत है कि हम जो काम कर रहे हैं, अब उसे बंद कर दें। संतोषजनक और आरामदेह काम की ओर बढ़ें। अपने आँगन में पोषण वाटिका बनाएँ। उसमें प्राकृतिक तरीके से सब्जी उगाएँ।

आजकल धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में और कुछ पर्यटन स्थलों पर पैदल यात्रियों की भीड़ की दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही है। यह बड़ी आपदा बनती जा रही है। परिणामत: भीड़ से उत्पन्न भगदड़ जैसी अप्रिय स्थितियों के कारण जन-धन की हानि बढ़ती जा रही है। अत: अब ऐसी स्थिति से बचना आवश्यक होता जा रहा है। ऐसी भीड़ से होनेवाली जोखिम के प्रबंधन की जरूरत बढ़ती जा रही है। ऐसी आपदाओं में समूहों के अमर्यादित और अनुशासनहीन व्यवहार से बड़ी गंभीर परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। अत: वृद्धजन ऐसी परिस्थितियों से बचने का प्रयास करें। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि प्रत्येक वर्ष में दिल्ली एयर पोर्ट पर ७ करोड़, बंबई में ५ करोड़ और बंगलुरु पर ३ करोड़ ओर हैदराबाद एयर पोर्ट पर २ करोड़ यात्री आते-जाते हैं। वरिष्ठ नागरिक यात्रा करने का निर्णय लेते समय इन तथ्यों को सदैव ध्यान में रखें।

कोविड के बाद बढ़ती महँगाई बुजुर्गों को प्रभावित कर रही है। बढ़ती महँगाई से बचत कम होती जा रही है और जीना मुश्किल हो रहा है। उनकी दूसरों पर निर्भरता बढ़ गई है। उनकी हर दिन की लाइफ स्टाइल बदल रही है। वे एल्डर-एव्यूज के शिकार हो रहे हैं और उनके अधिकारों का हनन हो रहा है। बजुर्गों की देखभाल करनेवालों ने उनसे दूरी बना ली है। अत: अनेक वृद्ध व्यक्ति अब निराशा और उदासी में जीने लगे हैं। बेचैनी और हाइपर टेंशन के शिकार हो रहे हैं।

वृद्धजन अपने आपको गंभीरता से लें। अपने बारे में सोचने का समय निकालें। नई भाषा सीखने का प्रयास करें। किसी नए शौक को आगे बढ़ाएँ। अपनी उम्र के सबसे आजाद दौर का पूरा आनंद लें। अपने मन की बात सुनें। कुछ-न-कुछ नया सीखते रहें। स्वस्थ आदतें अपनाएँ। अपने ऊपर भरोसा रखें। कुछ-न-कुछ नया कर दुनिया को दिखाएँ। आत्मनिर्भरता के पथ पर साहसपूर्वक आगे बढ़ते चलें। हमारे जीवन में जटिलताएँ बढ़ने से अनेक चुनौतियाँ उपस्थित हो रही हैं। अत: वृद्धजन उलझनों से निकलने के रास्ते स्वयं बनाएँ। अपने असंतोष को परखें। असंतुष्टि के विविध पहलुओं की पहचानकर उनमें बदलाव लाएँ। बदलाव लाने में हिचकें नहीं। बच्चों के बाहर और परिवार से दूर जाने से हुए अलगाव के कारण, अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए वृद्धजनों को अनेक संघर्ष झेलने पड़ते हैं। परिणामत: चिंता, उत्तेजना और निराशा जन्म लेने लगती है। ऐसी निराशा से बचें और खुश रहें। खुश रहने से वृद्धजनों का हृदय स्वस्थ रहता है। प्रतिरोधक क्षमता और इम्युनिटी बढ़ जाती है। खुश रहने से बीमारियाँ कम हो जाती हैं।

भविष्य में अच्छी घटनाएँ होंगी, ऐसी आशा और विश्वास बनाए रखें। छोटी-छोटी बातों में उत्सुकता बनाए रखें। उनमें खुशी प्राप्त करें। इससे हमारा तनाव कम होता है। हमारा मूड़ बेहतर होता है। छोटी-छोटी खुशियों के विचार आते ही हम बेहतर महसूस करने लगते हैं। भविष्य में होनेवाली घटनाओं की अच्छी तसवीर बनाएँ और खुद को बार-बार दिखाएँ।

खुशहाल बने रहने के लिए महीने में कम-से-कम एक बार आउटडोर एक्टिविटी करें। परिवार के सदस्यों के साथ प्राकृतिक स्थलों के भ्रमण पर जरूर जाएँ। पिकनिक पर जाएँ। पिकनिक पर जाने के पहले खुशियों की कल्पना करें। पिकनिक की अच्छी स्मृतियों को अपने मस्तिष्क में रखें। अपने परिवार और मित्रों के साथ समय बिताएँ। छोटी-छोटी चीजों का आनंद लें। पारस्परिक विश्वास को मजबूत करें। यह विश्वास रखें कि दु:ख में कोई दूसरा मुझे सहारा देकर अवश्य ही उबार लेगा।

साअ

३०, निशात कॉलोनी,
भोपाल-४६२००३ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५०१०१११

अपने-पराए

• एम.डी. मिश्रा आनंद

शुक्ल पक्ष के चाँद की भाँति सुख-समृद्धि बढ़ती जा रही थी और जीवन की डोर का नाप छोटा होता जा रहा था। माह के पूर्णमासी की भाँति बढ़ती उम्र को कौन रोक पाया है। यह तो चंद्रप्रकाश भली-भाँति जानते ही थे, किंतु बाल-बच्चों की शादी-ब्याह, काम-काज, धंधा ठीक-ठाक हो तो मन संतुष्ट हो जाता है। जीवन का यही उद्देश्य होता है, जिसे ईश्वर ने पूरा कर दिया है। परिश्रम, कष्ट भूलकर गृहस्थाश्रम की तपस्या मान लेते हैं। इस सुखानुभूति में चंद्रप्रकाश खोए हुए थे कि उन्हें पता भी नहीं चला था कि विमल कब उनकी बगल में आकर बैठ गए थे। अरे भाई! चंद्रप्रकाश कहाँ खो गए, किस विचार में डूबे हुए हो? अरे भाई! आपके बराबर भाग्यवान और सुखी कौन है, एक लड़का डॉक्टर, एक बड़ी कंपनी में इंजीनियर, दोनों बेटियों की अच्छे घरों में शादी हो गई है। घर में पत्नी, भरा-पूरा परिवार है। सभी लोग अपनी जगह काम-धाम कर रहे हैं और आपके पास रहने का मकान, बीच बाजार में चार दुकानें, पाँच बीघा में खेती-बाड़ी, साग-सब्जी, गल्ला-पानी है। और किस बात की जरूरत पड़ गई, जो मुँह लटकाए बैठे हो? रिटायरमेंट पर साड़े दस लाख की रकम भी सरकार से ऐंठ ली है।

"विमल, तुम्हें तो पता ही है कि दो-दो लाख रुपए चारों को बराबर बाँट दिए थे। अपने पास रखने की आवश्यकता नहीं समझी थी। जो पेंशन प्राप्त होगी और दुकानों का किराया, वह खर्चे के लिए पर्याप्त है। खाने-पीने का अनाज तो कृषि भूमि से ही मिल जाता है।"

"यही बात तो मैं कह रहा था कि 'अंत भला सो सब भला।' अब बुढ़ापा हँसी-खुशी से काटो। अरे! ईश्वर को सबका ध्यान रहता है। जो बचपन-जवानी में अधिक मिठाई खा लेते हैं तो बुढ़ापे का कोटा पूरा हो जाता है। बिना शक्कर के चाय पीनी पड़ती है। भैया, ऐसा ही सुख-दु:ख का हिसाब समझो, क्योंकि जब तुम चौदह-पंद्रह वर्ष की उम्र में अपने गाँव से गरीबी और पारिवारिक कलह के कारण भागकर इस कस्बे में आए थे, उस समय यह भी गाँव जैसा था, जो अब शहर जैसा हो गया है। और एक चाय की दुकान पर तुम्हें काम मिल गया था। लेकिन सिर छुपाने को जगह ही नहीं थी। भला हो उस बूढ़ी अनाथ अम्मा का, जिसने

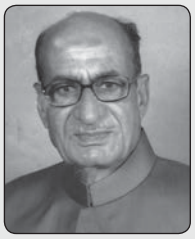

जाने-माने कथाकार। प्रमुख कृतियाँ हैं–'मोक्ष की राह', 'मैं कौन हूँ', 'पंख' (काव्य-संग्रह), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग', 'चलें गाँव की ओर' (कहानी-संग्रह)। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा 'सब' टीवी पर कार्यक्रमों का प्रसारण। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल एवं साहित्य मंडल, नाथद्वारा सहित छोटे-बड़े दर्जनभर सम्मान प्राप्त।

अपने टूटे-फूटे खँडहर में रहने का सहारा दिया था। आपने भी ईमानदारी से माँ समान बुजुर्ग महिला की जीवनपर्यंत सेवा की और दवा-इलाज सब कराया तथा मृत्यु उपरांत संपूर्ण संस्कारों का निर्वहन किया था। उनकी कृपा और आशीर्वाद से करोड़ों की संपत्ति के मालिक बने बैठे हो।"

"सही है विमल, वही टूटी झोंपड़ी जो गाँव के बाहर निर्जन स्थान में थी, आज तो बीच बाजार में बैठे हैं। उसी में चार पक्की दुकानें बन गई थीं और रहने का मकान भी तथा पाँच बीघा खेती, कृषिभूमि भी खरीद ली थी, जिसमें पूरा परिवार पाल-पोस, पढ़ा-लिखाकर, शादी-ब्याह किए हैं। सब उन्हीं की कृपा कहेंगे।"

"अरे भाई! तुमने भी तो उनकी सेवा माताजी के समान की थी, सो उसका फल प्राप्त हो रहा है और वहीं आपने मेहनत करके पढ़ाई भी कर ली थी, जिसकी वजह से शासकीय सेवा में अध्यापक हो गए थे।"

"चंद्रप्रकाश, कुछ लोग तो कानाफूसी कर रहे थे कि उस खँडहर को तोड़ने में तुम्हें सोने के सिक्कों से भरा माटी का डबला मिला था और उसी की बदौलत यह सब बनवाया है।"

"नहीं विमल, सोना तो अपने हाथ का मैल है। अरे! ईमानदारी के साथ लगन से आप कोई काम करेंगे तो ईश्वर अवश्य पूरा कराते हैं।"

"वह तो सब ठीक है। अब दोनों लड़के खूब कमा रहे हैं, वह भी तो आपके लिए रुपया-पैसा भेजते होंगे। आपकी पेंशन, दुकानों का किराया, खेती-बाड़ी, बस और क्या चाहिए आपको? क्यों तिजोरी भरते जा रहे हो? कुछ पुण्य-धरम करो और सुख से रहो।"

"हाँ विमल, यह बात सोलह आने सही है। लेकिन साँप के पाँव

साँप को ही दीखते हैं। जैसा तुम कह रहे थे तो मैंने भी यही सोचा था, किंतु परेशानी, परिश्रम के दिन बीत गए हैं और ईश्वर ने बुढ़ापे में सुख दिया है। बुढ़ापा चैन से बीत रहा है। सभी बच्चों का अपना काम-धंधा ठीक चल रहा है। शादी-विवाह, सब जिम्मेवारियों से निवृत्त हो गए हैं, किंतु ऐसा कहाँ हो पाता है ? सभी को समय और परिस्थितियों के साथ चलना पड़ता है। अभी कल ही ओमप्रकाश का फोन आया था कि अस्पताल बनवा रहे हैं, जिसके लिए रुपयों की आवश्यकता है। आप दो दुकानें बेच दो तो काम बन जाएगा। मैंने कहा कि दुकानें चार हैं। सभी में किराएदार बैठे हैं, समय पर किराया देते हैं और हर काम में हम लोगों का साथ देते हैं। अब अपना परिवार अर्थात् तुम लोग और तुम्हारे बच्चे यहाँ कोई नहीं है तो वे लोग हमारा साथ देते हैं। इसलिए दुकानें बेचना ठीक नहीं है। ओमप्रकाश ने कहा—पिताजी, दुकान के किराएदार ही दुकानें हड़प लेंगे, कुछ नहीं लगेगा हाथ। इसलिए अच्छा है कि समय रहते चारों बेच दो और जितना अपने पास रखना चाहें सो रख लो, बैंक में जमा करा दें, ब्याज आएगा। बाकी हम लोगों को दे दें, जिससे हम लोग भी अपने बाल-बच्चों के लिए कुछ कर सकें, मकान दुकानें अपनी सुविधा के लिए बनाए थे, जमीन खरीदी इन सबमें मेहनत, खून-पसीना लगा है, बेचते नहीं बनती हैं। आखिर पिता यही सब बाल-बच्चों के लिए ही तो करते हैं, सो आपने किया है, इसमें नई कौन सी बात है ? बच्चों को दे दीजिएगा। हाँ, बच्चों को देने के लिए तैयार हूँ, परंतु बेचकर नहीं, स्वयं उपयोग करें और यहाँ पर रहें, किसने रोका है ? ठीक है, पिताजी हम तो चाहते थे कि अस्पताल बन जाए, फिर जैसी आपकी इच्छा, यह कहकर फोन काट दिया।"

कुछ समय पश्चात् रतना की बड़ी पुत्री अपने पुत्र के साथ आई और दो-चार दिन रहने के बाद अपने माता-पिता से कहा कि बाबूजी रजनी भाभी का फोन आया था और जो बातें ओमप्रकाश भाईसाहब ने माता-पिता से कही थीं, वही रतना दीदी ने सुनाई कि दुकानें, जमीन बेचने में ही सबका भला है। रतना ने पिता से कहा, "देखो पिताजी, बुढ़ापे में तो छोटा-छोटा काम भी भारी लगने लगता है, अम्मा से भी काम होता नहीं है। आपका नाती प्रतीक खेती-बाड़ी का प्रशिक्षण लेकर आया है और पपीते का बाग लगाना चाहता है। पपीते की खेती बहुत फायदे का धंधा है, लोग अभी जानते ही नहीं। अरे! उसका दूध बहुत महँगा बिकता है। फल तो लाभदायक होते ही हैं। आपको भी कोई सहारा चाहिए, सो आपके पास ही रहेगा, आप लोगों की देखभाल करेगा और काम सँभालेगा, फिर जैसा आप लोगों का विचार बने सो बता देना।"

इस प्रकार का सुझाव देकर रतना अपने घर वापिस चली गई थी। किंतु दो-चार दिन में जरूर पूछती रहती कि आप लोगों ने क्या सोचा है ? रतना ने अपने घर पति से भी इस संबंध में विचार किया, वह पेशे से वकील थे। उन्होंने कहा कि माता-पिता की जमीन-जायदाद में पुत्रों के बराबर ही पुत्रियों की हिस्सेदारी होती है। जब चर्चाएँ चलती हैं तो सभी संबंधियों के कानों तक पहुँचती हैं। अब छोटी पुत्री मणि को पता लगा तो उसने शाम के समय फोन लगाया और कहा कि मम्मी, आप कोई दुकानें नहीं बेचना और कृषि खेती की जमीन भी नहीं बेचना। आप लोग आराम से रहें, नहीं तो बाद में परेशान हो जाएँगे। उसी दिन छोटे पुत्र व्योमप्रकाश की पत्नी रोशनी का फोन आया कि मम्मी, हमने सुना है कि जेठजी पापा से दुकानें बिकवाने की बात कर रहे हैं ? वह नहीं बेचना, कम-से-कम प्रतिमाह किराया तो आता रहता है। इससे अच्छा तो खेतीवाली जमीन बेचना ठीक है। ज्ञानवती ने कहा—बहू, खेतीवाली जमीन नहीं बिकने देंगे। मैंने तो व्योम के पिता से कह दिया है कि उस भूमि में ही मेरी चिता जलावें, क्योंकि गरीबी के समय पेट भरने को अनाज इसी भूमि में उपजाकर पेट की आग बुझाई थी, इसलिए इस देह को उसी भूमि में जला देना।

दीपावली का त्योहार सबसे बड़ा और खुशियों का उत्सव है, जिसमें परिवार के अधिकांश सदस्य इकट्ठे होते हैं। चंद्रप्रकाश के बेटे-बेटियाँ भी घर आकर त्योहार मनाते थे, किंतु इस बार तो उत्सव मनाने से अधिक जमीन-जायदाद बेचने का प्रश्न सभी के दिलो-दिमाग पर छाया हुआ था। बहू-बेटियाँ भी अपने-अपने विचारों में थीं। कहीं ऐसा न हो कि बाबूजी सबका ध्यान न रखकर किसी एक पक्ष में शामिल हो जाएँ।

इस बार लगभग सभी लोग अपने परिवार के साथ आए थे और सभी ने मिलकर दीपावली का पूजन किया। हँसी-खुशी से त्योहार मनाया। माता-पिता के लिए नए वस्त्र, मिष्टान्न के पैकेट सबकुछ आया था। दूसरे दिवस ओमप्रकाश और व्योम घंटों बैठ विचार-विमर्श में मग्न रहे। इधर ननद-भाभी, देवरानी-जिठानी सब मिलकर वही जमीन-जायदाद की बातें करती रहीं। माता-पिता इसी सोच में डूबे थे कि क्या निर्णय लिया जाए। शाम को सभी लोग इकट्ठे हुए और ओमप्रकाश ने कहा, "देखो पिताजी, सभी लोग धन-संपत्ति, जमीन-जायदाद अपनी संतान के लिए ही कमाते हैं और जब संतान सक्षम हो जाती है, कुछ करने की क्षमता होती है। उस समय ही माँ-बाप की कमाई का सही उपयोग होता है, इसलिए सभी जमीन-मकान बेचकर हम लोगों को दे दो। अरे! व्योम भी किराए के फ्लैट में रहता है। वह भी सिर छुपाने के लिए छोटा-मोटा फ्लैट ले लेगा। हमारा भी अस्पताल बन जाएगा। दीदी और मणि को जो दोगे, उनके बच्चों की पढ़ाई और धंधे में सहयोग हो जाएगा।"

बड़ी बहू रजनी ने कहा, "मम्मी, आप और पापा यहाँ अकेले क्यों रहते हैं ? अपने बच्चों के साथ, यानी हम लोगों के पास रहें तो अच्छा लगेगा। परिवार में बुजुर्गों की छत्रच्छाया भी तो चाहिए।" ओमप्रकाश ने कहा, "रजनी ठीक ही तो कह रही है।" व्योमप्रकाश ने कहा, "भाई, यही तो हम लोग चाहते हैं कि यहाँ का घर, मकान, जमीन, दुकानें सभी बेचकर आराम से मम्मी-पापा हम लोगों के पास रहें, जहाँ अच्छा लगे। बड़े भाई-भाभी के साथ अथवा हम लोगों के साथ रहें।"

चंद्रप्रकाश ने कहा, "तुम लोगों के पास बड़े शहरों में इतने शोर-शराबे में हम लोग नहीं रह पाएँगे और यहाँ पर तो हमारे संगी-साथी हैं,

रिश्तेदार भी पास हैं, इसलिए समय आराम से कट जाता है। वहाँ हम लोगों के परिचय का कौन है? हाँ, यह बात अवश्य है कि प्रातः घूमने के समय कुछ हमउम्र साथी घंटे-दो घंटे को मिल जाएँगे, बाकी समय तो अकेलेपन में निकलेगा। इसलिए जब तक हम लोग जीवित हैं, यहीं रहने में अच्छा लगता है।"

"ठीक है, अगर आप और मम्मी ऐसा ही चाहते हैं तो केवल रहने का मकान भर रखे रहिए, उसे मत बेचिए। आप चिंता क्यों करते हैं, आपके खर्चे-पानी के लिए प्रतिमाह पेंशन बैंक के खाते में जमा हो जाती है। बीमारी आदि के लिए घर का डॉक्टर और अपना अस्पताल···बीच में ही मणि ने टोका, "नहीं, यह ठीक नहीं, माता-पिता जब तक हैं, सब उनके पास रहेगा। हम सभी सक्षम हैं, अपना कमाएँ, अपना बनाएँ।" रतना ने कहा, "मणि चुपकर, बड़ों की बातों में तू क्यों बोल रही है?" मणि ने कहा, "मैं ऐसा नहीं होने दूँगी।" रजनी ने कहा, "ठीक है, अभी सबने अपनी बात रख दी है, बाबूजी और मम्मी को सोचकर विचार करने का समय देना चाहिए, जैसा उन्हें ठीक लगे। बाद में बता देंगे।" रोशनी ने धीरे से कहा, "सभी लोग हैं, अभी विचार कर लेते, तो ठीक था। हम सभी को खाने के लिए गेहू बाजार से ही तो खरीदना पड़ता है। खेती की जमीन से क्या लाभ है?"

इसी प्रकार के वार्त्तालाप में काफी रात्रि बीत चुकी थी, अब सभी अलसाते हुए विश्राम करने चले गए। चंद्रप्रकाश और ज्ञानवती की नींद तो हवा हो गई थी। ज्ञानवती ने कहा, "क्या हो गया है बच्चों को? सब जमीन-जायदाद मिटाने पर तुले हैं।"

"देख ज्ञानवती, संसार ऐसे ही तो चल रहा है। बँधी मुठ्ठी लाख की खुल गई तो खाक की।"

"अरे, तो आप सभी लोगों से साफ-साफ कह दो, हम कोई तोड़-फोड़ नहीं करना चाहते हैं। अब हम लोगों को इसी गृहस्थी में जीवन व्यतीत करना है, तुम सब लोग अपना-अपना करो।"

"नहीं ज्ञानवती, हमारा मन कहता है कि लड़के-लड़की सब ठीक ही तो कह रहे हैं। अरे! जो हम लोगों के नहीं रहने पर होना है, क्यों न जीतेजी निपटा लें, क्योंकि हम लोगों के बाद जब हमारे बच्चे जमीन-जायदाद पर झगड़ेंगे और कोर्ट-कचहरी के चक्कर लगाएँगे तो क्या हम लोगों की आत्मा को शांति मिलेगी?"

ज्ञानवती ने कहा, "यह तो आप सही कह रहे हैं। लेकिन यह भी आवश्यक नहीं है कि जिस संपत्ति को तिल-तिल जोड़ते जीवन बीता है, अब उसी को मिटाने में शेष जीवन नष्ट कर दें। रात्रि बहुत बीत गई है, आप सो जाइए।"

थोड़ी-बहुत झपकियों के बाद सवेरा हो गया। बाल-बच्चे अपने स्थान को वापस लौटने लगे। एक-दो दिन बाद चंद्रप्रकाश और ज्ञानवती अकेले रह गए थे, किंतु एक प्रश्न उन लोगों के साथ जुड़ गया था, जो रात्रि-दिवस उन्हें बेचैन कर रहा था और सुख-शांति के पंख निकल आए थे। अब प्रतिदिन प्रातः-शाम ओमप्रकाश के फोन आने लगे थे, "पिताजी, समय निकल रहा है, क्या निर्णय किया आपने? अस्पताल का कार्य अधूरा पड़ा है। व्योम कहता कि किराए के फ्लैट में ग्यारह माह से अधिक नहीं रह पाते, स्थान बदलते परेशान हो रहे हैं। एक फ्लैट सस्ता मिल रहा, आप आर्थिक सहयोग कर दीजिए।"

"रतना फोन करती कि प्रतीक को जो पपीता उत्पादन का प्रोजेक्ट पूरा करना है, उसके लिए एक विदेशी बड़ी कंपनी रुपया लगाएगी, केवल भूमि के स्वामित्व का पंजीकरण करना पड़ता है, सो आप कर देना। इसके पश्चात् प्रतीक को विदेश में प्रशिक्षण के लिए भेजा जाएगा। वहाँ से वापिस आने पर वही प्रोजेक्ट करोड़ों का हो जाएगा।"

अब मणि भी फोन करती—"मम्मी-पापा, आप जमीन-जायदाद बिल्कुल नहीं मिटाना, चाहे कोई कितना ही कहे।" फिर कभी रजनी तो कभी रोशनी इसी संदर्भ में फोन करती थीं। चंद्रप्रकाश और ज्ञानवती को फोन की घंटी सुनते घबराहट होने लगती, क्या उत्तर किसको दिया जाए? चंद्रप्रकाश ने कहा, "देखो ज्ञानवती, घर-परिवार से जीत पाना अत्यंत कठिन कार्य होता है। बाहर वालों से तो आप जीत भी सकते हैं। कभी सोचते हैं कि स्वस्थ दीर्घ जीवी माता-पिता बच्चों के सुख का कारण हैं कि दुःख का। क्यों न इस मायाजाल, घर-गृहस्थी से मोह त्यागकर सुख के साथ जिया जाए।" ज्ञानवती ने कहा, "विचार तो अच्छा है, जीवन ईश्वर का दिया है, संतान सुख सबसे बड़ा सुख है। यह तो घर में बातें होती ही हैं आप अपने मन को हल्का नहीं करें, कभी-कभी तो मन में प्रसन्नता होती है कि अपने-अपनों से ही तो माँगते, अरे, वह तो बड़े अभागे होते हैं, जिनकी जीवन की कमाई संपत्ति का कोई वारिस नहीं हो, कोई माँगनेवाला, चाहनेवाला नहीं होवे। यही तो मन का अंतर्द्वंद्व है।"

किसी ने दरवाजा खटखटाया। चंद्रप्रकाश ने कहा, "कौन है? भाई, अंदर आ जाइए।" विमल ने दरवाजा खोलते हुए हँसकर कहा, "अरे भाभीजी, नमस्ते! क्या चले गए हैं सब लड़के-बच्चे?" ज्ञानवती ने कहा कि भाईसाहब, नमस्ते, आइए बैठिए, बच्चे तो कल ही सब चले गए थे। चंद्रप्रकाश ने कहा, "अरे विमल भाई, अब तुम ही बताओ, हम लोगों को क्या करना ठीक रहेगा?" विमल को सभी बातें बताई गईं, विमल ने कहा, "देख भाई, अलग-अलग कहानी होती है प्रत्येक परिवार की। कोई एक सूत्र नहीं है अंक गणित की भाँति। आप तो पढ़े-लिखे, समझदार हैं, शिक्षक भी रहे हैं। वैसे तो आप एक मामूली पक्षी से भी सीख सकते हैं कि एक नर-मादा एक-एक तिनका इकट्ठा करके घोंसले का निर्माण करते हैं, और जब मादा अंडा देती है तो दोनों मिलकर उसको सेते हैं, मतलब उनकी सेवा-सुरक्षा करते हैं। उनसे जब नन्हे बच्चे निकलते हैं तो स्वयं भूखे रहकर दाना लाकर उनके मुँह में डालते हैं और जब उन बच्चों के पंख निकल आते हैं तो उन्हें खुले आसमान में उड़ान भरने के लिए छोड़ देते हैं।"

साअ

आनंद भवन, मेन रोड
पृथ्वीपुर-४७२३३८ (म.प्र.)
जिला-टीकमगढ़
दूरभाष : ९४२४३४५३५५

कविता

बाल-कविताएँ

● जे.पी. रावत

सुपरिचित रचनाकार। हास्य, सामाजिक, आध्यात्मिक, पर्यावरण, व्यंग्य, कविता, गद्य लेख, कहानी और नाटक विधा में लेखन! 'काव्य सागर' पुस्तक प्रकाशित। अनेक काव्य गोष्ठी और कुछ कवि सम्मेलनों में सहभागिता। संप्रति परिधान और आई.टी. निर्यात के व्यवसायी!

प्रेम

जब लिखूँ में गीत कोई,
प्रेम पूरित भाव लेकर!
हो रहे अहसास मन में,
प्रेम मधुरिम साधना है!

रंग भी हैं द्वंद्व भी हैं,
प्रेम पूरित छंद भी हैं!
हो कठिन जितनी डगर,
प्रेम तो आराधना है!

अब कभी नीरस न हों,
प्रेम पूरित शब्द मेरे!
है यही शाश्वत जगत् में,
लिप्त इसमें भावना है!

जब पुलक अहसास होगा,
तो सतत विश्वास होगा!
इस जगत् से उस जगत् तक,
गूँजती सी कल्पना है!

लहर सागर की निनादित,
झील में है मौन पल्वित!
दिव्यता का भान लेकर,
कह रहा क्यों अनमना है!

एक मधुरिम रागिनी सी,
हो रही झंकृत हृदय में!
दूर चाहे हो कहीं भी,
चित्र ज्यों मन में बना है!

कुछ नहीं इसमें ठिकाना,
दर्द की गहराइयों का!
महक बन दिल में समाया,
प्रेम हर दिन दो गुना है!

ले समाधी लीन रहना,
इस जगत् से कुछ न कहना!
प्रेम की माला पिरोना,
अन्यथा सब वर्जना है!

गुमसुम गुड़िया

गुड़िया तुम क्यों गुमसुम हो,
क्या बात है बात बता हमको!
जो चाहो सो ला देंगे,
या मम्मी से मँगवा देंगे!

आँसू से पलकें न भिगा,
सबकुछ पापा को समझा!
किसने डाँटा इतना बता,
देंगे उसको आज सजा!

उँगली जो उठी मैं चौंक गया,
था टी.वी. पर एक हाल नया!
अब दिल मैं एक तूफान उठा,
मैं समझ गया क्यों छाई घटा!

कुछ जलती आग के घेरे थे,
कुछ जलते घर कुछ डेरे थे!
एक मौत का मंजर छाया था,
खुद मेरा मन घबराया था!

हरियाली पर कालिख देखी,
कुछ जिस्मों की हालत देखी!
सब राज धमाके ने खोला,
ऊपर से गिरा एक बम गोला!

कुछ जिस्म के बिखरे टुकड़े थे,
कुछ रक्त सने कुछ मुखड़े थे!
एक बहुत भयावह मंजर था,
ये इंसानों का खंजर था!

मैं समझ गया चैनल बदला,
देखा एक मंजर फिर अगला!
मारो-मारो कह भीड़ भगी,
मैं चुप था गुड़िया भी थी ठगी!

कहीं पत्थर आग के गोले थे,
काले धुएँ के शोले थे!
उन्मादी भीड़ तो गायब थी,
बस खत्म हुए जो भोले थे!

मैं देख सका न दिखा पाया,
फिर आगे दृश्य नजर आया!
फिर रोते-बिलखते लोग दिखे,
पर थे सबके अरमान लुटे!

कुछ कह न सका चुप रह न सका,
गुड़िया को उठा झट छत पे गया!
थी मेरी नजर सितारों पर,
गुड़िया की नजर इशारों पर!

कहा तुमको चाँद दिला देंगे,
हम दुनिया नई बसा देंगे!
टी.वी. दिखलाना बंद किया!
घर में उग आया चाँद नया!

सीने से लगाया चुनमुन को,
गुड़िया तुम क्यों गुमसुम हो?

बंद गली

हँसती-गाती इस बस्ती में,
चंद खुली खिड़की दिखती हैं!
दूर नजर फैलाता हूँ तो,
दिखती है बस बंद गली!

हरे-भरे थे बाग जहाँ पर,
अब ऊँची मीनार खड़ी हैं!
सिर्फ मुँड़ेरों पर दिखती हैं,
कहीं-कहीं कुछ फूल कली!

कुछ हरे पेड़ तो देख रहा हूँ,
सर धरती पर टेक रहा हूँ!
जड़ के नीचे धरा कहाँ है?
पक्का गमला सिर्फ वहाँ है!

जम पाएँगी जड़ें कहाँ तक,
फैलेंगी ये शाख कहाँ तक!
इनका वो विस्तार कहाँ है,
चिड़ियों का संसार कहाँ है!

क्यों फूलों में महक नहीं है,
क्यों चिड़ियों की चहक नहीं है!
केवल शोर-शराबा भर है,
समझ न आता अजब शहर है!

भरा हुआ है शहर ये सारा,
मगर आदमी हारा हारा!
कहीं-कहीं इतनी खामोशी,
ज्यों मरघट के अंदर होती!

माना परिवर्तन तो होना है,
मगर खुशी को क्यों खोना है!
क्या वक्त के आगे नहीं चली,
मुझे न लगती बात भली!

कोई बात समझ तब आती,
नियति संतुलन स्वयं सिखाती!
सच्ची लगन असर जब लाती,
रस्सी खुद रस्ता बन जाती!

क्यों बोझिल बस्तों के नीचे,
दबती है मासूम कली!
दूर नजर फैलाता हूँ तो,
दिखती है बस बंद गली!

सा
अ

ए-९१, प्रथम तल, सेक्टर-३३
नोएडा-२०१३०१
गौतमबुद्ध नगर (उ.प्र.)

पुराख्यान और स्त्रीत्व की निष्कंप लौ–द्रौपदी

(प्रसंग : व्यथा कहे पांचाली)

• ओम निश्चल

मिथकों की बड़ी महिमा है। पुरा चरित्र हमें खींचते हैं। हम उनकी कहानियाँ पढ़ते हैं तो उसी भावलोक की सैर करने लगते हैं। रामायण और महाभारत तो उपजीव्य कहे ही जाते हैं। आज के तमाम आधुनिक काव्यों की अंतर्वस्तु में इन्हीं दो आर्शग्रंथों का रस सत्त्व और अंतस्तत्व समाया हुआ है। परवर्ती लेखक या कवि इन प्रसंगों और चरित्रों को अपनी तरह से देखता है और उसमें नया अर्थ भरता है। आज के आधुनिक हिंदी लेखकों में एक नरेंद्र कोहली का दो–चार कृतियों को छोड़कर सारी अंतर्वस्तु इन्हीं दो ग्रंथों से ली गई है और वे इस कला के महान् आचार्य माने जाते हैं। महाभारत, रामायण और विवेकानंद, ये तीन उनके लेखकीय जीवन और औपन्यासिक उद्यम के तीन बड़े पड़ाव या केंद्रबिंदु रहे हैं। महासमर व दीक्षा और तोड़ो कारा तोड़ो की कड़ियाँ भारतीय जन–जीवन और संस्कृति में रचे–बसे इन पुरा आख्यानों का पुनरवतरण हैं। इस आधुनिक होती दुनिया में जहाँ जीवन यथार्थ के रेतीले लम्हों में बीतता है, जीवन का अपना ही संघर्ष कितना बड़ा होता है, आज भी लाखों पाठक हैं, जो इन्हीं पुरा आख्यानों को पढ़ने–गुनने में जीवन धन्य मानते हैं। एक बार कविवर कुँवरनारायण से उनकी पसंदीदा कृतियों के बारे में जानना चाहा था तो उन्होंने कुछ कृतियों के साथ उस कृति 'भारत सावित्री' का नाम भी सुझाया था कि उसे जरूर पढ़ना चाहिए, जिसे वासुदेव शरण अग्रवाल जैसे संस्कृतिविद् ने लिखा है और जो महाभारत के उपेक्षित प्रसंगों पर है, जिसे महाभारतकार ने महत्त्व नहीं दिया है, पर वे प्रसंग महत्त्वपूर्ण हैं। कुँवरजी आधुनिक विचारणा के लेखक थे, पर पुरा आख्यानों और मिथकों में उनकी रुचि थी। वे इनमें कोई जीवन–मूल्य तलाशने में लगे रहते थे। नचिकेता और वाजश्रवा जैसे चरित्रों के माध्यम से उन्होंने कालजयी कृति लिखी और उनके बहाने कविता तथा साहित्य में नई काव्यदृष्टि का प्रक्षेपण किया। लेकिन वे इतिहास, मिथक और पुराख्यानों में विचरण करते रहते थे। इसी तरह रामायण की उर्मिला का चरित्र कवियों को मथता रहा है। कभी रवींद्रनाथ टैगोर ने अपने एक लेख में कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता पर चिंता व्यक्त की थी। तब 'सरस्वती' में महावीरप्रसाद द्विवेदी ने उर्मिला के उद्धार की ओर कवियों का ध्यान खींचा। द्विवेदीजी की इसी चिंता से प्रेरित होकर मैथिलीशरण गुप्त ने 'उर्मिला उत्ताप' की रचना आरंभ की, किंतु बाद में उसका आयाम वृहत्तर होने पर उसे संपूर्ण रामकथा में बदलते हुए उसे 'साकेत' नाम दिया। किंतु इस काव्य का नवाँ सर्ग इसलिए ज्यादा मर्मस्पर्शी बन पड़ा है, क्योंकि वह उर्मिला की व्यथा–कथा पर केंद्रित है। यों तो बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने भी एक खंड–काव्य उर्मिला पर लिखकर उर्मिला की पीड़ा का निर्वचन किया है किंतु गुप्तजी की बात ही और है। उन्होंने तो 'साकेत' में कैकेयी के खल चरित्र को भी धो–पोंछकर निर्मल कर दिया है। 'शबरी' पर दोहा–शैली में काव्य आख्यान लिखकर उर्वशी उर्वी ने भी इस चरित्र को भी बहुत मन से पवित्र आसन पर बिठाया है, यानी समकालीन दुनिया की एक कवयित्री को शबरी का चरित्र उठाना आज भी कविता का केंद्रीय विषय लगता है। जबकि इससे बहुत पहले शबरी पर जाने–माने कवि नरेश मेहता ने भी एक खंड काव्य लिखा था और जैसी कि नरेश मेहता की वैदिक आभा से युक्त भाषा–शैली है, उन्होंने शबरी के माहात्म्य के बारे में राम तक से यह कहलवा लिया कि "है अन्य कौन त्रेता में जो श्रेष्ठ भक्त शबरी से। है मंत्र यज्ञ यह सबकुछ सब सिद्ध इसी शबरी से।" द्रौपदी पर भी हिंदी और लोकभाषाओं में अनेक कृतियाँ लिखी गई हैं। भोजपुरी कवि चंद्रशेखर मिश्र का काव्य 'द्रौपदी' इसका प्रमाण है। द्रौपदी काव्य लिखकर जाने–माने कवि पंडित नरेंद्र शर्मा ने भी इस चरित्र पर मार्मिक

हिंदी के सुपरिचित कवि, आलोचक एवं भाषाविद्। शब्द सक्रिय हैं (कविता-संग्रह), खुली हथेली और तुलसीगंध (संस्मरण) व कविता का स्थापत्य, कविता की अष्टाध्यायी एवं शब्दों से गपशप सहित समीक्षा व आलोचना की कई पुस्तकें। कई ख्यात कवियों की कृतियों का संपादन। तत्सम् शब्दकोश के सहयोगी संपादक एवं बैंकिंग वाङ्मय सीरीज (पाँच खंड) के रचयिता। उ.प्र. हिंदी संस्थान से 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल आलोचना पुरस्कार' सहित अन्य सम्मानों से विभूषित।

लेखनी चलाई है। ओड़िया लेखिका प्रतिभा राय को भी द्रौपदी का चरित्र इतना भाया कि उन्होंने उन पर पूरा उपन्यास ही लिख दिया, जो बाद में पर्याप्त चर्चित और पुरस्कृत हुआ। शकुंतला तो कवियों का प्रिय विषय ही रही हैं। कालिदास ने 'अभिज्ञान शाकुंतल' लिखकर शकुंतला के चरित्र को महाभारत के आख्यान से उठाकर कविता के केंद्र में ला दिया। कर्ण के चरित्र को महनीय मानते हुए मराठी लेखक शिवाजी सावंत ने क्या खूब बेहतरीन उपन्यास 'मृत्युंजय' लिखकर कर्ण के चरित्र को साहित्य में अमर कर दिया है तो राष्ट्रकवि दिनकर की भी दृष्टि कर्ण पर कमतर नहीं रही है, उन्होंने 'रश्मिरथी' लिखकर अविवाहित मातृत्व से जनमे और जीवन की तमाम अस्वीकार्यताओं एवं छल-छद्म से गुजरनेवाले इस कालजयी चरित्र को निर्मल-धवल कर दिया है। उसके मुँह से यह कहलवाकर दिनकर ने उसके प्रति जातीय विद्वेष को जैसे निरस्त कर दिया है—

जाति-जाति रटते, जिनकी पूँजी केवल पाखंड,
मैं क्या जानूँ जाति? जाति हैं ये मेरे भुजदंड।
···पढ़ो उसे जो झलक रहा है मुझमें तेज प्रकाश,
मेरे रोम-रोम में अंकित है मेरा इतिहास।

(—रश्मिरथी, दिनकर)

तो कहना यह कि जिस 'पोयटिक जस्टिस' की बात कविता में सदियों से उठाई जाती रही है, वह आज भी कवियों के अंत:करण में विद्यमान है। यह और बात है कि यह प्रबंध काव्यों का दौर नहीं रहा किंतु नई कविता में जहाँ प्रयोगों का बोलबाला है, कविता अर्थोद्भावन की दृष्टि से सूक्ष्म से सूक्ष्मतर हुई है, कविता या समाज पर जो प्रभाव महाकाव्यों और प्रबंधकाव्यों का पड़ता रहा है और कवि व्यक्तित्व के सामर्थ्य की दृष्टि से भी जो मानदंड साहित्य में निर्मित हुए हैं, उन कसौटियों पर कवियों को परखा जाता रहा है। प्रसाद, हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, सियारामशरण गुप्त, दिनकर, नरेश मेहता और कुँवर नारायण इन्हीं कसौटियों पर परखे और पहचाने गए। उनके काव्यप्रयत्नों को उनके महाकाव्यात्मक कौशल से जाना-पहचाना गया। दिनकर ने आत्मजयी (कुँवर नारायण) को पढ़कर उनसे पहली मुलाकात में ही कहा था, जब इसी उम्र में तुमने आत्मजयी लिख दी है तो आगे क्या लिखोगे। नई उम्र में लिखी 'आत्मजयी' लंबी कविताओं या प्रबंधकाव्यों की कोटि में एक बड़ी काव्य-रचना के रूप में शुमार की गई।

कविता मानवीय अभिव्यक्ति का शृंगार है। सदियों से कविता वाचिक रूप में हमारी स्मृति में उतरती हुई उस जगह आ पहुँची है, जब छपने के लिए अपार कागज, कहने के लिए अगाध सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा मानवीय मुद्दे और विभिन्न काव्य शैलियाँ हमारे लिए उपलब्ध हैं, फिर भी कुछ सार्थक रचनात्मकता का अभाव दिखता है। कवि होना सब चाहते हैं किंतु कवि के कार्यभार से बँधना नहीं। कविता सदियों से अपने सामाजिक सांस्कृतिक उत्तराधिकार और उत्तरदायित्व को वहन करती आई है। इसीलिए हमारे समय के कवियों ने सोच-समझकर अपने काव्य की विषयवस्तु निर्धारित की। महाकाव्यों के दौर में भी एक-से-एक बढ़कर रचनाएँ की गईं। खंडकाव्य और प्रबंधकाव्य की कोटि में भी काफी रचनाएँ हुईं। आज का युग नई कविता का है। लेकिन नई कविता के इस दौर में भी कई कवियों ने प्रबंधकाव्य का प्रारूप अपनी रचनाओं के लिए सुनिश्चित किया तथा अनेक ऐसे विषयों और चरित्रों पर काव्य लिखे, जिनके साथ अभी साहित्य की अदालत में न्याय नहीं हुआ। खोजिए तो शबरी, केवट, पांचाली, कर्ण इत्यादि पर अनेक कविताएँ और काव्य मिल जाएँगे, किंतु ऐसे चरित्रों के साथ न्याय कोई बड़ा कवि ही करता है, जिसका कविता कला पर असाधारण अधिकार होता है। उर्वशी उग्रवाल उर्वी ऐसी ही उर्वर कवयित्री हैं, जिन्होंने पांचाली यानी द्रौपदी के व्यक्तित्व पर चौपाई शैली में प्रबंध काव्य 'व्यथा कहे पांचाली' लिखकर जैसे पांचाली पर काव्यात्मक न्याय करते हुए समाज पर लदा उसका ऋण अदा कर दिया है।

उर्वशी उर्वी को आज से कोई दो-तीन बरस पहले से जानता हूँ, जब पहली बार उन्हें एक कवि समवाय में सुना था। कविता की गीति शैली और छंद में महारत की परिणति देखने का यह पहला सुअवसर था तथा उनके कविकर्म और छंदबोध से आश्वस्त हुआ था। यों छंदसिद्ध होना किसी के कवि होने की गारंटी तो नहीं है किंतु केवल चौपाई छंद में पूरे काव्य का विन्यास रच देना और खूबसूरत अंत्यनुप्रासों से कविता की छटा को लहरा देना कोई आसान काम नहीं और यही उर्वशी की विशेषता है। उनके भीतर छंद को लेकर एक उद्विग्नता सी दिखती थी, जैसे कोई कविता में छंद का पुनर्वास करना चाहता हो। तभी यह आशा बलवती हो चुकी थी कि यह कवयित्री आगे चलकर कुछ ऐसा असाधारण करने या रचनेवाली है, जो कविता के हेतु और मूल्य दोनों दृष्टियों से वरेण्य हो।

आज का दौर विमर्शों का है। स्त्री-विमर्श के लिए कई कवियों ने इधर मिथकों की राह अपनाई है। पिछले कुछ वर्ष पहले स्फुट कविता शैली में सुमन केशरी का कविता-संग्रह 'याज्ञवल्क्य से बहस' आया था, जिसमें उन्होंने याज्ञवल्क्य और गार्गी की पारंपरिक बहस को आधार बनाकर कविता को आधुनिक स्त्री की प्रगतिशीलता और प्रश्नाकुलता को रेखांकित किया था। हाल में पुन: अपने नए संग्रह 'निमित्त मैं' में सुमन केशरी ने द्रौपदी, कुंती, गांधारी, माद्री, गंगा, सत्यवती, सुभद्रा, हिडिंबा, चित्रांगदा, भानुमती, दु:शला, शकुंतला, माधवी, सावित्री, उत्तरा आदि पर कविताओं की शृंखला लिखी है। द्रौपदी के चरित्र को इसी करुणा से निहारते हुए उन्होंने द्रौपदी की पीड़ा उरेहते हुए लिखा—'इतिहास गवाह है/मैंने केवल कुछ प्रश्न उठाए/कुछ शंकाएँ और जिज्ञासाएँ/और तुमने मुझे नाम से ही वंचित कर दिया।' इस नाम विहीनता ने ही उन्हें अपने को कृष्णा मानने पर विवश किया। कृष्ण का मोह द्रौपदी को आजीवन भाता रहा है, 'मैं' आज भी वहीं पड़ी हूँ प्रिय/मुझे केवल तुम्हारी बंशी की तान सुनाई पड़ती है अनहद नाद सी।' (निमित्त नहीं) 'प्रश्न पांचाली' काव्य के माध्यम से पांचाली की पीड़ा को कवयित्री सुनीता बुद्धिराजा ने भी बहुत मार्मिकता से उठाया था। जैसे यह पुराकाल की स्त्रियों के जीवन को दुबारा पढ़ने और आज के आईने में परखने की कोशिश हो, जैसे कुँवर नारायण ने कठोपनिषद् से नचिकेता-यम प्रसंग को लेकर 'आत्मजयी' काव्य लिखा और उसके लगभग एक दशक बाद 'वाजश्रवा के बहाने' लिखकर उसे

आधुनिक कविता में एक महत्त्वपूर्ण जगह दिलाई।

'व्यथा कहे पांचाली' छंदबद्ध खंडकाव्य है, जो चौपाई शैली में विरचित होते हुए जहाँ एक ओर कवि के छंद सामर्थ्य का प्रमाण देता है, वहीं स्त्री-विमर्श के आईने में पांचाली के जीवन संघर्ष, उसकी नियति, चीरहरण, वनगमन, द्रौपदी हरण, युधिष्ठिर-द्रौपदी संवाद, अज्ञातवास, कृष्ण-द्रौपदी युद्ध-संवाद, अभिमन्यु वध, कर्ण वध, दुर्योधन वध, गांधारी के शाप, पांचाली पुत्रों का वध, स्वर्ग गमन इत्यादि की कथा रुचिर शैली में प्रस्तुत कर कवयित्री ने महाभारत के इन प्रसंगों को जैसे पुनर्जीवित कर दिया है।

द्रौपदी का चरित्र महाभारत में जाना-पहचाना है। जैसे सारा महाभारत उसके कारण रचा गया हो। वह पाँच पतियों में बँटी स्त्री जीवन में किस-किस हालात से गुजरती है, यह महाभारत के प्रसंग बताते हैं। अधर्म की इस लड़ाई में स्त्री का मान-सम्मान किस हद तक खतरे में रहता है, यह किसी से छिपा नहीं है। पर पाँचों पतियों के रहते हुए जिस तरह द्यूत क्रीड़ा में द्रौपदी को हार जाने के बाद दुर्योधन चीरहरण का व्यूह रचता है, कोई पति उसकी रक्षा के लिए आगे नहीं बढ़ता। धर्मराज कहे जानेवाले युधिष्ठिर भी नहीं, गंगापुत्र भीष्म भी नहीं। पहली बार महाभारत काल में किसी स्त्री की मर्यादा इस तरह दाँव पर लगी कि उसकी मानरक्षा के लिए कृष्ण को आना पड़ा। कैसे-कैसे लाक्षागृह, अज्ञातवास और अपमान के अवसरों से गुजरते हुए पांडवों ने यह लड़ाई लड़ी और कृष्ण जैसे सारथी के चलते जीती, यह भी एक चमत्कार है। किंतु यह प्रतीकात्मक रूप से अधर्म पर धर्म की विजय थी। यही वह मूल्य था, जो महाभारत हमें देता है। गीता के उपदेश के जरिए जीवन का अमूल्य दर्शन कृष्ण के माध्यम से पूरे समाज के सामने आता है। लेकिन सवाल यह है कि युद्धों में सबसे ज्यादा प्रताड़ित स्त्रियाँ ही क्यों होती हैं। उन्हीं को साफ्ट टार्गेट क्यों बनाया जाता है। उन्हीं के बलात्कार होते हैं, उन्हीं के सामने उनके बच्चों की हत्याएँ होती हैं। द्रौपदी इसका जीता-जागता उदाहरण है। उर्वशी ने द्रौपदी के चरित्र को उदात्त बनाकर प्रस्तुत किया है। वह जिस तरह भरी सभा में चीरहरण का दृश्य देखनेवाले वीरों को ललकारती है और हर एक को प्रश्नांकित करती है, वह ध्यातव्य है। जीवन भर दुखों और विसंगतियों का वरण करनेवाली द्रौपदी के पाँच पुत्रों की जिस नृशंसता से हत्या होती है, वह उसके भीतर की माँ को हिला देनेवाला है।

उर्वशी ऐसे सारे प्रसंगों को अपनी काव्यात्मक मथानी से मथती हैं। आत्ममंथन करती हैं। वे बहुत सधे कदमों से द्रौपदी की परकाया में जैसे प्रवेश करती हैं तथा उसकी व्यथा को आत्मसात् करते हुए उसी के आत्मकथन के रूप में यह सारा प्रबंधकाव्य प्रस्तुत करती हैं। आइए, देखते हैं किस खूबी से उन्होंने अपने कवि-सामर्थ्य का परिचय इस प्रबंधात्मक आख्यान में किया है। काव्य के प्रारंभ में ही दी गई चौपाई जीवन को समझने का सार है—जिसने खुद को मथा नहीं है/उसकी कोई व्यथा नहीं है। यहाँ कवि ने अपने को खूब मथा है। द्रौपदी के संबोधनों में कवयित्री के संबोधन बोलते हैं। महाभारत काल की एक पाँच पतियोंवाली स्त्री जैसे कवयित्री से बतियाती लगती है। हम न भूलें कि कविता का जन्म ही जैसे कहानी कहने के लिए हुआ था। इस काव्य के माध्यम से भी उर्वी ने महाभारत की पुरानी कहानी फिर से कहीं अधिक प्रभावी ढंग से कही है। सबसे पहले द्रौपदी किन-किन ऊहापोहों और असमंजसों से गुजरती है, कवयित्री ने उसे अपने शब्दों में बयान किया है। क्या खूब द्रौपदी कहती है—

काश वचन स्वीकार न करती
मैं भी रेखा पार न करती।
काश न मेरे हिस्से होते
शुरू नहीं ये किस्से होते। (कुंती को लेकर ऊहापोह)
काश कर्ण को वर लेती मैं
वाणी वश में कर लेती मैं (कर्ण को लेकर ऊहापोह)

अपनी बात न कटने देता
काश न मुझको बँटने देता। (अर्जुन को लेकर ऊहापोह)

काश नहीं मैं उस पर हँसती
जान मुसीबत में क्यों फँसती। (दुर्योधन को लेकर ऊहापोह)

इसी तरह वह दुशासन, धृतराष्ट्र, गांधारी, भीष्म, जयद्रथ सबको लेकर अपने ऊहापोह व्यक्त करती है। वह अपने प्रतिशोध को लेकर भी पाश्चात्ताप करती है। वह यहाँ तक कहती है कि नारी का अपमान न होता/कुरुक्षेत्र श्मशान न होता।

हम जानते हैं, महाभारत की यह या अन्य कथाएँ हजारों बार कही और दुहराई जा चुकी हैं। कविता के लिए सदैव रामायण और महाभारत उपजीव्य ग्रंथ रहे हैं। अनेक महाकाव्य, खंडकाव्य, लंबी कविताएँ महाभारत के अनेक प्रसंगों पर लिखे गए हैं। लेकिन काव्य के कुछ हेतु होते हैं। ऐसे आख्यानों के पीछे कुछ मूल्य काम करते हैं। कवि सदैव सत्य के पक्ष में खड़ा होता है। एक जरा सी भूल के लिए कितनी क्षति उठानी पड़ती है। एक जरा से उपहास के लिए द्रौपदी को दुर्योधन की यातना का शिकार होना पड़ा। एक जरा सी असावधानी से एक स्त्री पाँच पतियों में बँट गई। जैसे वह कोई वस्तु हो। कहा ही गया है—विनाशकाले विपरीतबुद्धिः। ऐसा ही होता है। बिना बिचारे किए गए कार्य का परिणाम भयंकर हो सकता है—सहसा विदधीत न क्रियाम्/अविवेकः परमापदामपदम्। कवयित्री इसके संकेत जगह-जगह करती चलती हैं। द्रौपदी का बचपन बहुत लाड़-प्यार में बीता था। वह निडर और साहसी थी। उसके भीतर प्रश्नों की एक ज्वलंत दुनिया थी, जो उसके प्रति लोगों को ईर्ष्यादग्ध भी बनाती थी।

यह काव्य अपनी प्रकृति में इतिवृत्तात्मक है, जैसे हमारे समय की भारत भारती या प्रियप्रवास। सो वर्णन की सरलता का वैभव यहाँ सहज ही देखने को मिलता है। ऐसा इसलिए भी संभव हुआ है कि कवयित्री को छंद सिद्ध है। वह किसी भी कथा या नैरेटिव को छंद में पिरोकर सहज भाव से प्रस्तुत कर सकती है। तो सबसे पहली बात यह कि इसमें वर्णन की नैरेटिव की सरलता है। प्रवाह है। भाषा की भी सरलता यहाँ द्रष्टव्य

है। चौपाई की एक लता जैसी छटा यहाँ दिखती है। कुछ चौपाइयाँ जो मुझे पढ़ते हुए भाईं, उनमें से कुछ यहाँ बतौर उदाहरण—

कुल का तेरे सूरज डूबे
माधव तेरा यूँ ध्वज डूबे।
यादव कुल की गगरी डूबे
सागर तल में नगरी डूबे।
वंशज एक रहे ना बाकी
मौत मरेगा तू एकाकी।

यह गांधारी का शाप है, जो उसने कृष्ण को दिए। क्योंकि गांधारी को पता था कि यह सारा युद्ध कृष्ण की ही लीला का परिणाम है। उन्हीं के कारण यह युद्ध हुआ, जिसमें वह अपने सारे पुत्र खो बैठी। यह एक लाचार और विवश माँ का शाप था और हमें यह ज्ञात ही है कि यह शाप बाद में प्रतिफलित हुआ, जब सारा यदुवंश द्वारका के अतल में समा गया और कातर कृष्ण ने एकाकी होकर बहेलिया के बाण से विद्ध होकर प्राण त्यागे।

'व्यथा कहे पांचाली'—में सारी कथा महाभारत जैसी है, किंतु कल्पना की उड़ान कवि की अपनी है। उसे कुशलता से कथा शैली में काव्यबद्ध रूप में कहा गया है। काव्य का प्रवाह किस्सागोई को खोलता हुआ सा दिखता है। किंतु यहाँ पांचाली कवयित्री की दृष्टि में क्या है। कवि का पक्ष क्या है उसे लेकर, वह इसे इन शब्दों में सामने रखती है—

हवन कुंड की ज्वाला थी वो
रुद्राक्षों की माला थी वो
टूटे उसके सारे सपने
दुःख देनेवाले थे अपने
पुरुष-प्रधान व्यवस्था सारी
कृष्णा थी किस्मत की मारी
आज व्यवस्था है गांधारी
हर नारी पर पड़ती भारी
चीरहरण अब भी होते हैं
कृष्ण मगर शायद सोते हैं
अगर पाप का वरण न होता
गीता का अवतरण न होता
कली ज्ञान की खिलती कैसे
अद्‌भुत गीता मिलती कैसे।

कभी युद्ध में किसी को ज्ञान मिला है क्या? पूरी सत्ता धूलिसात् हो जाने के बावजूद आदमी अपने कृत्य या दुष्कृत्य पर चिंतन नहीं करता, पीछे मुड़कर नहीं देखता। द्रौपदी देखती है, यह कवयित्री देखती है। वह आज की गांधारी व्यवस्था को भी चिह्नित करती है। कवि यही करता है। कलिंग वध के बाद तो सम्राट् अशोक को भी वैराग्य हो गया था। वह बौद्ध बन गया। द्रौपदी ने जीवनभर संघर्ष किया, पाँच पतियों में बाँट दी गई, पर उफ न की। उसके मन की बात न माँ ने सुनी, न पतियों ने। उसकी संतानें मारी गईं, वह देखती रही। जुए में पांडव कुल की वह इज्जत दाँव पर लगा दी गई। प्राणिमात्र से एक वस्तु के रूप में अवमूल्यित की गई। वह भी महाभारतकाल में जहाँ सभा में पाँच पांडवों के अलावा भीष्म पितामह हों, न्याय और धर्मप्रिय युधिष्ठिर हों, सुमधुर बोलने और हिताहित पर विचार करनेवाले विदुर हों। आज भी स्त्री को पुरुष सत्ता किस निगाह से देखती है, क्या किसी से छिपा है? जबकि स्त्रियों ने पग-पग पर अपने सामर्थ्य का लोहा मनवाया है। पारिवारिक सत्ता को प्राणवायु दी है। हाल ही में आई एक काव्यकृति 'इस बार उनके लिए' में कवयित्री मीना सिंह का यह कहना कि 'जिस घर में रोती हैं औरतें, वहाँ चिराग नहीं जलते।' कौरव कुल ने जिस एक स्त्री को रुलाया, उसका भयावह परिणाम क्या निकला, यह हमें पता है। जिस एक स्त्री सीता पर रावण की कुदृष्टि पड़ी, उस कुल का क्या हुआ, यह किससे छिपा है।

कहना न होगा कि यहाँ यानी 'व्यथा कहे पांचाली' में कवि का पक्ष प्रबल है, जो कि स्त्री यानी पांचाली के पक्ष में है, अतीत में सताई हुई स्वाभिमानी स्त्री के पक्ष में है। वह जानती है कि महाभारत काल में भी आखिर थी तो पुरुष प्रधान व्यवस्था ही, तो स्त्री की बात कहाँ से सुनी जाती! ऐसे में यह उचित ही था कि कृष्ण पांचाली की रक्षा के लिए दौड़े आए और अन्यायियों को दंड दिया। पांडवों की ओर से लड़े। न लड़ते तो अधर्म जीतता। धर्म के अनुयायी मारे जाते। सच्चे कवि का धर्म यही है कि वह न्याय का पक्ष ले। सत्य का पक्ष ले। हमारा महाभारतकालीन अतीत हमें बताता है कि युद्ध और महासमर में क्या होता है, कैसे लोगों की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, जिसके कारण सारा कुल नष्ट हो जाता है। निष्कर्षतः उर्वशी 'उर्वी' का यह काव्य हमें अतीत के गलियारे से होते हुए महाभारत के पांचाली प्रसंग में ले जाता है, हम पांचाली की अकथनीय पीड़ा से भी गुजरते हैं और तमाम सोपानों से गुजरते हुए यह काव्य उस बिंदु पर हमें छोड़ता है, जहाँ हम सभी चरित्रों को उनके कृतित्व के दर्पण में देख सकते हैं और इस प्रसंग को कवयित्री बहुत ही गहरे डूबकर व्यक्त करती हैं। शब्दसंयम, छंदसंयम, कथासंयम में यह काव्य सिद्ध है। प्रबंध काव्यों के क्षीण होते समय में एक प्रसंग को महाकाव्यात्मक नहीं तो महाकाय (यद्यपि यह सर्गों व विभिन्न छंद शैलियों में उपनिबद्ध महाकाव्य नहीं है) रूप देना कविता के खजाने को मालामाल करना है। हिंदी साहित्य उर्वशी 'उर्वी' के इस कृतित्व के लिए ऋणी रहेगा। वे इस काव्य से सहज ही उस काव्यधारा की कवयित्री बन गई है, जिसमें हमारे आधुनिक समय के बड़े कवि परिगणित किए जाते हैं।

'व्यथा कहे पांचाली'—प्रबंध काव्य, कवयित्री : उर्वशी उर्वी, प्रकाशन : प्रभात प्रकाशन, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली ११०००२, पृष्ठ ६४८, मूल्य ७५० मात्र।

जी-१/५०६ ए, उत्तम नगर,
नई दिल्ली-११००५९
दूरभाष : ९८१००४२७७०

चीर-हरण

• विकेश निझावन

जीजाजी अपने बॉस के साथ उनकी इंपोर्टेड इंपाला में बैठकर केवल दो घंटे के लिए आए थे। देहरादून जा रहे थे, गाड़ी जरा इधर को घुमा ली। बहाना था कि बहुत दिन से हमारी कोई चिट्ठी नहीं गई थी और वे काफी चिंतित थे। यह बात दीदी कह बैठती तो ज्यादा अजीब न लगता। और फिर आज के वक्त में चिट्ठी! दिन में कम-से-कम एक बार तो दीदी से बात हो ही जाती है। जीजाजी के मुँह से यह सब सुनकर तो जैसे अपने ही मुँह का जायका बिगड़ गया।

अम्मा तो इसी बात पर निहाल हो आईं कि जमाई बाबू हमारा हालचाल पूछने आए हैं। जीजाजी के सिर पर हाथ फेरती अम्मा उन्हें भीतर तक ले आई थीं, 'आओ-आओ, भीतर आओ न। सबकुछ दरवाजे पर खड़े ही कह डालोगे। ये तो चबर-चबर सवाल-जवाब ही किए जाएगी।'

'छोटी साली है, अम्मा! एक नहीं, दस सवाल भी करेगी तो जवाब तो देना ही पड़ेगा।' एकाएक वे पीछे-पीछे चले आ रहे अपने बॉस की ओर मुड़े थे, 'आइए, राव साहब। मीट माई सिस्टर-इन-लॉ, सुनीता।'

'हाय!' उन्होंने कहा और प्रत्युत्तर में मैंने अपने दोनों हाथ जोड़ दिए। यों अभी तक इस अदने से आदमी को खींसें निपोरते देख मैंने अंदाजा लगा लिया था कि जीजाजी का बॉस ही होगा, निश्चय ही जीजाजी की तरक्की के दिन नजदीक आते लगते हैं। तभी तो गाड़ी देहरादून जाती हुई इधर को घुमा ली। बॉस को आकर्षित करने के लिए ससुर की आठ कनाल की कोठी और उसमें रहनेवाली एक खूबसूरत जवान लड़की क्या कम है।

'सुनीता, पहले कुछ ठंडा दे देना, बाद में चाय लेंगे। राव साहब चाय में शक्कर कम लेते हैं।'

मन हुआ पूछ लूँ, डायबिटीज के मरीज हैं क्या? पर मन-ही-मन खिसियाकर रह गई थी।

जीजाजी सभी कमरे पार करते राव साहब को पीछे दालान में ले गए।

मैं किचन की ओर मुड़ी तो अम्मा ट्रे में दो गिलास पानी लिये खड़ी थीं, 'यह पानी ले जा, मैं चाय रखती हूँ।'

'ओह अम्मा! तुम भी अजीब हो, ठंडे का मतलब नहीं समझतीं।' अम्मा के हाथों से ट्रे को लगभग छीनते हुए मैंने दोनों गिलासों का पानी जग में पलटा और चीनी का बाउल उठाते हुए बोली, 'अम्मा, बाहर से दो निब्बू तोड़ लाओ।'

चीनी हिलाते हुए ध्यान आया, राव साहब शुगर के मरीज नहीं हो सकते। वरना जीजा ठंडे के लिए भी रोक देते। निब्बू-पानी लेकर बाहर गई तो जीजाजी अपना पुराना भाषण दोहरा रहे थे, 'पापा ने यह कोठी पंद्रह साल पहले बनवाई थी। राव साहब, उस वक्त इस कोठी पर पचास लाख लग गया था। अब तो इसकी कीमत करोडों में है। जमीन के भाव ही देख रहे हैं, चार गुना हो गए हैं।' मुझे देखकर मेरी तारीफ करना भूलना जीजाजी के लिए सबसे बड़ी चूक जानेवाली बात थी। 'अपनी सुनीता को संगीत में भी बराबर रुचि है।' कुरसी जरा आगे को सरकाते हुए वे बोले, 'एम.ए. भी तो संगीत में किया है।'

अब मुझसे गाने की फरमाइश कर बैठेंगे। सुनीता तो चाबी की गुड़िया है, जब जी चाहा, उसे किसी के सामने बिठाकर उसका गाना सुन लिया। नहीं सुनाऊँगी तो दीदी छोड़ेंगी मुझे?

दीदी और जीजाजी की चालों की मुझे पहले कहाँ खबर थी! पहली बार इनके कुलीग मिस्टर रंजन आए थे तो मैंने गाने से साफ इनकार कर दिया था। और उसके लिए मुझे कितने खिताब दे दिए गए थे। घमंडी, अभिमानी, बदतमीज, दीदी ने यह भी स्पष्ट लिखा था कि रंजन जीजाजी

सुपरिचित लेखक। अब तक पाँच कविता-संग्रह, दस कहानी-संग्रह, दो उपन्यास, एक लघुकथा-संग्रह तथा कुछ बाल पुस्तकें और देश की लगभग सभी पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी से कविताओं तथा कहानियों का नियमित प्रसारण। अनेक कहानियों का अंग्रेजी, उर्दू, गुजराती, मलयालम, पंजाबी व मराठी में अनुवाद। 'साहित्य शिरोमणि पुरस्कार' तथा 'लाला देशबंधु गुप्त सम्मान' से सम्मानित।

के बॉस का भतीजा है। उसी के दम पर जीजाजी की प्रमोशन के चांसेज हैं। पत्र पढ़ते ही मेरी रुलाई फूट पड़ी थी। बड़ा गुस्सा आया था। बॉस के भतीजे को पटाने के लिए मेरे गीत-संगीत का सहारा लिया जा रहा है। पंद्रह दिन बाद दीदी खुद ही आ गई थी और वही बातें फिर से दोहराई गईं। लेकिन अबके मैं रोई नहीं थी। बस इतना ही कहा था, 'दीदी, पापा के बाद संगीत मेरा सुख का नहीं, दु:ख का साथी रह गया है।'

पापा के होते हुए आए दिन छोटे-बड़े समारोहों में गीत-संगीत के कार्यक्रम दिया करती थी और ढेरों ईनाम जीतकर लाती। लेकिन पापा के बाद स्टेज का नाम सुनते ही मैं ठंडी पड़ जाती। बस कभी-कभार रात के वक्त, जब बहुत मन होता, तानपूरा लिये पीछेवाले बरामदे में जा बैठती। एक-दो भजन ही रह गए थे अब तो, जो बार-बार दोहराया करती। अम्मा को भी शायद यही अच्छा लगता था। तानपूरा उठाकर बाहर जाने को होती तो अम्मा प्राय: कह देतीं, 'वो सुना दे, सुख के सब साथी, दु:ख में न कोय।'

'सुनीता, अपना तानपूरा तो ले आओ।' जीजाजी ने कहा तो मैं यंत्रवत् सी उठ खड़ी हुई। जरा भी ना-नुकुर नहीं कर पाई। रंजन तो बॉस का भतीजा था, अब बॉस खुद सामने हैं। उन्हें प्रसन्न करने में जरा भी कसर रह गई तो दीदी मुझे कच्चा न चबा जाएगी।

'ले आ न, शरमा क्यों रही है।' भीतर से आती अम्मा ने कहा तो मैं बुरी तरह से कुढ़ गई। क्या मैं इनकार कर रही थी, जो अम्मा के कहने की जरूरत आन पड़ी। कहीं बेटी के जरा भी इनकार न करने पर बेटी की बेशर्मी पर परदा तो नहीं डाल रहीं।

तानपूरा उठाते हुए एक बार तो मन हुआ, खूँटियाँ घुमाकर तानपूरे के सारे तार ही तोड़ डालूँ। लेकिन इससे क्या मुक्ति मिल जाएगी मुझे। जीजाजी कहेंगे, बिना तानपूरे के ही सुना दे। तुम्हारी आवाज में तो संगीत भी साथ ही मिला हुआ है। इतनी बढ़ाई तो किसी ने संगीत सम्राट् तानसेन की भी न की होगी, जितनी वे मेरी कर डालते हैं।

'अरी चाय ठहर के पिएँगे, पहले तानपूरा ले आ।' अम्मा की आवाज से मैं एक बार फिर तिलमिला गई। कभी-कभी अम्मा से बहुत विद्रोह करने को जी चाहता है। लेकिन अम्मा बेचारी भी क्या करे, पापा के बाद तो वे बावली सी हो आई हैं। जो कोई जैसा कहता है, वैसा करती चली जाती हैं।

तानपूरा लेकर पहुँची, तो अम्मा और जीजाजी का चेहरा पूरी तरह से खिल गया। सच कहूँ तो उन्हें देख मैं उनके प्रति सहानुभूति से भर आई थी।

ये महाशय भजन या क्लासिकी क्या पसंद करेंगे। तभी मीर की एक गजल मस्तिष्क में उभरी और मैंने उसे ही छेड़ दिया।

अम्मा मेरी आधी गजल के बीच से ही उठ गई थीं। एक तो गजल में उनकी कोई रुचि नहीं थी। दूसरे जमाई बाबू के लिए चाय-पानी का इंतजाम भी तो करना था।

'वाह भई! बहुत बढ़िया!' अंतिम पंक्ति के उतरार्द्ध में ही उनकी दाद शुरू हो गई थी। लेकिन मुझे इसकी जरूरत नहीं थी। तानपूरा वहीं छोड़ एक झटके से मैं भीतर चली आई।

अम्मा केतली में चाय उँड़ेल रही थीं। बिस्कुट, नमकीन और पिन्नियाँ अम्मा ने प्लेटों में लगा दी थीं।

'कुछ और तो नहीं मँगवाना?' अम्मा के लिए ये सब रख देना कम नहीं था, लेकिन मैं जानती थी, अम्मा भी कहीं दीदी से डरती हैं। बॉस की आवभगत में कुछ कमी रह गई तो अम्मा को भी सुननी पड़ सकती है।

'जीजाजी की प्रिय पिन्नियाँ तुमने रख दी हैं, और क्या चाहिए उन्हें?' खाने की तीनों प्लेटें ट्रे में रख मैं बाहर ले आई। वही हुआ जो मैं सोचती चली जा रही थी। ट्रे पर नजर पड़ते ही अम्मा की बनाई पिन्नियों की तारीफ शुरू हो गई।

चाय का आखिरी घूँट भरते हुए जीजाजी बोले, 'सुनीता, राव साहब को अपना बगीचा तो दिखाओ।'

एक बाहर के व्यक्ति को हमारे बगीचे में क्या दिलचस्पी हो सकती है, मैं नहीं समझ पा रही थी। पापा का लगाया बारहामासी नीबू, बादाम, लीची, आड़ू के बारे में जीजाजी बखान करते चले गए थे और राव साहब जीजाजी के हर वाक्य के बाद मेरी ओर देखकर मुसकरा पड़ते। संभवत: वे इन चीजों की तारीफ में हामी भर रहे हों, लेकिन मेरे भीतर एक टीस बराबर उठ रही थी। जितना इन पेड़-पौधों के बारे में सोचती हूँ, पापा बहुत याद आने लगते हैं।

कहाँ-कहाँ से, किस-किस नर्सरी से पापा ये पेड़-पौधे जुटाकर लाए थे। 'पाइन-ट्री' के लिए पापा ने शिमला का स्पेशल टूर बनवाया था। मैदानी इलाके में पहाड़ी वृक्ष, लोग-बाग देखकर हैरान होते।

'कभी गरमियों में आइए राव साहब, तब आमों की बहार देखिएगा।' तो ये लोग गरमियों में भी आने की सोच रहे हैं। जीजाजी, दीदी तो आएँ, लेकिन इस आदमी को साथ लाने का अर्थ?

हमारी और इस घर की एक-एक चीज की तारीफ करने के बाद जीजाजी राव साहब की ले बैठे, 'राव साहब को फोटोग्राफी का बहुत शौक है। पिछले दिनों तुम्हारी दीदी के ऐसे फोटोज लिये कि देखते ही बनते हैं। शौक तो तुम्हें भी है, लेकिन राव साहब के फाटोग्राफ्स जरूर देखना।' अगर ऐसा ही था तो दो-चार फोटोग्राफ्स तो साथ ले ही आते।

'राव साहब, अपना कैमरा तो लाइए। कुछ फोटोज यहाँ भी हो जाएँ।' अजीब लोग हैं ये, आते हुए तो कहा था, केवल दो ही घंटे रुक पाएँगे। अब तीन घंटे से ऊपर हो चले हैं और जनाब अभी फोटोज खींचने बैठेंगे।

राव साहब तुरंत अपना इंपोर्टेड कैमरा उठा लाए थे। लेकिन बड़ा बुरा हुआ बेचारों के साथ। कैमरे का कोई पुर्जा रास्ते में ही ढीला पड़ गया था और सही फोटोज आने के कोई आसार नहीं रह गए थे। बड़ी

सोच में पड़ गए थे बेचारे। त्-त्-त्! मन हुआ, अफसोस जाहिर कर दूँ। पर फिस्स-सी हँसी मेरे होंठों के बीच ही दबकर रह गई। अम्मा मेरी ओर देखकर आँखें न तरेरतीं तो शायद यह हँसी अपने पूरे उफान के साथ बाहर आ जाती।

'सुनीता, अपना कैमरा ही ला दे।' अम्मा मुझे पूरी तरह से जला देना चाहती हैं। अच्छा-भला जानती हैं, मैं उस कैमरे को किसी को हाथ नहीं लगाने देती। लेकिन इस वक्त इनकार कर देना क्या संभव था।

इस कैमरे में मैं सारी दुनिया कैद कर लेना चाहती थी। इस घर का ऐसा कौन सा कोना होगा, जिसका फोटो मैंने नहीं खींचा। अम्मा-पापा के तो ढेरों फोटोज लिये होंगे। जब फोटो खींचने लगती थी, तब किसी को कहाँ पता चलता था। बरामदे में रोटियाँ बेलती अम्मा-क्लिक! छत पर बाल सुखाती अम्मा-क्लिक! लॉन में आरामकुरसी पर कुछ सोचते हुए पापा-क्लिक! हैंडपंप के नीचे नहाते हुए पापा-क्लिक! पेड़ों पर उग आए बौर को एकटक देखते हुए पापा-क्लिक!

जिस दिन पापा गुजरे, मैं बिल्कुल जड़ हो गई थी। लगा था, मस्तिष्क बिल्कुल खाली हो आया है। बस एक शून्य है, जो मेरे बाहर-भीतर व्याप गया है। बिल्कुल नहीं रोई थी मैं। लग तो रहा था, अभी हँसी का फुहारा मेरे मुँह से फूट पड़ेगा। देखो तो पापा कैसे सोए पड़े हैं। पहले सोते थे तो फ-र्-र्-र खर्राटों की आवाज आया करती थी। अब तो साँस भी रोके हुए हैं। मुझे इन्हें सतर्क कर देना चाहिए। अगर देर तक इसी तरह पड़े रहे तो मैं 'क्लिक' कर दूँगी।

कोई त्योहार खाली नहीं जाता होगा, जब पापा खुद ही मेरे कैमरे में नई रील न डलवा लाते हों। महीने में एक-आध बार तो आऊटिंग भी हो जाती। आकाश को छूते हुए देवदार के वृक्ष, पिंजोर बाग की ऊँची-ऊँची दीवारों पर फैला बोगनवेलिया, छतबीर चिड़ियाघर के जानवर, रॉक गार्डन। पापा खुद ही ले जाते सब जगह।

जिस तरह से मेरी फोटोग्राफी में निखार आता गया था, पापा हैरान थे। अम्मा तो बराबर चिल्लाती रहतीं, 'ऐसे शौक भी कभी लड़कियों ने पाले। ये चीजें तो मर्द के हाथ में ही जमें। कोई सिलाई-कढाई हो तो लड़कियों के हाथ में शोभा भी दे।'

'अम्मा, जरा इसी तरह गुस्से में चिल्लाती रहना। मैं अभी आई, एक मिनट!' अगले ही पल कैमरा मेरे हाथों में होता और टेढ़ी भौंहों वाली अम्मा-क्लिक! मेरा और पापा का ठहाका देर तक हवा में गूँजता रहता। अम्मा बेचारी की हमारे आगे जरा भी न चल पाती।

जिस दिन पापा गुजरे, मैं बिल्कुल जड़ हो गई थी। लगा था, मस्तिष्क बिल्कुल खाली हो आया है। बस एक शून्य है, जो मेरे बाहर-भीतर व्याप गया है। बिल्कुल नहीं रोई थी मैं। लग तो रहा था, अभी हँसी का फुहारा मेरे मुँह से फूट पड़ेगा। देखो तो पापा कैसे सोए पड़े हैं। पहले सोते थे तो फ-र्-र्-र खर्राटों की आवाज आया करती थी। अब तो साँस भी रोके हुए हैं। मुझे इन्हें सतर्क कर देना चाहिए। अगर देर तक इसी तरह पड़े रहे तो मैं 'क्लिक' कर दूँगी।

'अरी, तू क्या सोच रही है?' अम्मा ने आकर मुझे कंधे से झिंझोड़ा था, 'तू तो सारी दुनिया अपने कैमरे में कैद कर लेना चाहती थी। अपने पापा को भी इसमें कैद क्यों नहीं करती? जल्दी उठ, नहीं तो ये लोग तेरे पापा को ले जाएँगे।'

अम्मा यह क्या कह गईं! मैं जार-जार फूट पड़ी थी, 'नहीं अम्मा, मैं पापा को अपने कैमरे में कैद नहीं कर सकती। नहीं कर सकती।'

'पागल मत बन! जल्दी उठ!' और अम्मा ने खुद ही कैमरा मेरे हाथ में लाकर थमा दिया था।

मरे हुए पापा-क्लिक! नहीं, पापा नहीं मर सकते।

लेकिन पापा सच में मर गए थे। उस वक्त पापा की फोटो न खींची होती तो आज मैं सच में पछताती।

राव साहब कब से मेरे कैमरे के इंतजार में खड़े थे। यों मेरा कैमरा लाने तक उन्होंने अपने कैमरे के काफी पुर्जे इधर-उधर घुमा लिये थे, लेकिन कहीं से मशीनरी ऐसी अड़ गई थी कि इस वक्त वह कैमरा न होकर मात्र एक डिब्बा ही रह गया था।

आठ-दस फोटो लिये थे राव साहब ने। दो जीजाजी और अम्मा के। शेष मुझ अकेली के।

'सुनीता, जरा अपनी फोटोग्राफी का कमाल भी तो दिखाओ।' जीजाजी बोले थे। एकाएक वे राव साहब से मुखातिब हुए, 'राव साहब, आपका और सुनीता का मुकाबला है इस वक्त। देखते हैं, किसके खिंचे फोटो ज्यादा सुंदर आते हैं।'

'अगर मुकाबले की बात थी तो कुछ दाँव पर भी लगाया होता।' पता नहीं कैसे मेरे मुँह से फिसल गया था।

'दाँव पर तो हम लगा ही चुके हैं।' जीजाजी ने धीरे से कहा तो मैं जरा चौंकी थी। लेकिन मजाक करने का मूड बराबर बना हुआ था, सो कह दिया, 'किसी द्रौपदी को लगा रहे हैं क्या?' पता नहीं क्यों, जीजाजी एकाएक चुप से हो आए। चेहरे के भाव भी एकदम से बदल गए थे। मेरी इस बात पर इतना नाराज क्यों हो आए हैं? मैं तो मजाक कर रही थी।

लेकिन मेरे इस मजाक पर वे नाराज नहीं हुए थे। दरअसल मैं बात ही इतनी सच्ची कह गई थी कि जीजाजी उसे झेल ही नहीं पाए थे।

दस-पंद्रह मिनट के लिए जीजाजी बाजार का कहकर गए तो अम्मा पूछने लगीं, 'कैसा लगा लड़का?'

'लड़का! कैसा लड़का? कौन लड़का?' अम्मा की बात पर सच में असमंजस में पड़ आई थी मैं।

'राव की ही बात कर रही हूँ। उसने तो हाँ कह दी है।'

'राव साहब! यह क्या कह रही हो अम्मा! वह लड़का है या आदमी?'

'बस-बस! बहुत जुबान खुल गई है तेरी। अपनी उम्र का भी सोचा

है कभी। पूरे पैंतीस की होने को आ रही है। और फिर कमी भी क्या है उसमें। डेढ लाख तनख्वाह लेता है।'

'अम्मा, मुझे सोचने का मौका दो।'

'सोचने का मौका अब न दूँगी। मैं सब समझती हूँ। बाद में ना-नुकुर कर जाएगी। मेरे को इतना बता दे, कब तक मेरी छाती पर मूँग दलेगी। उसे देख, जो फरिश्ता बनकर आया और तेरे लिए घर पर ही रिश्ता लेकर आया है। एक रोज तू ही बिछी थी न उसके आगे। बच्ची समझ माफ कर दिया उसने तेरे को।'

अम्मा यह क्या कह गईं! जीजा के जिन राक्षसी पंजों ने मुझे लहूलुहान किया था, वे आज तक मेरे भीतर रिस रहे हैं। दीदी से कहा था तो चिल्ला पड़ी थीं, 'मुझसे क्या कह रही है! तुझे खुद को बचाना था। मर्द लोगों की फितरत में होता है यह सब। मैं क्या कहूँ इन्हें? क्या अपना घर बरबाद कर लूँ? अब अम्मा से न कहती फिरना।'

अम्मा फिर चिल्लाई हैं, 'अपनी नहीं, मेरी इज्जत पर तो परदा डाल।'

'अगर ऐसा ही है अम्मा, तो तू हाँ कह दे।'

सोचा था, जीजा और राव साहब के लौटने तक अम्मा का मन अवश्य बदल जाएगा। लेकिन यह क्या! वे लोग लौटे तो राव साहब के हाथ में मिठाई के दो डिब्बे थे।

'इन सबकी क्या जरूरत थी?' अम्मा कह रही थीं।

'मुँह तो मीठा करवाना था।'

'हाँ-हाँ, क्यों नहीं!' अम्मा तेजी से रसोई की ओर मुड़ी और स्टील की दो तश्तरियाँ उठा लाईं।

राव साहब ने एक तश्तरी में गुलाब-जामुन पलटे और दूसरी में बर्फी।

'लीजिए, पहले आप मुँह मीठा कीजिए।' राव साहब ने प्लेट मेरी ओर बढ़ाई तो जीजाजी ठहाका मारकर हँस दिए, 'अरे भई, ऐसे भी मुँह मीठा करवाया जाता है कभी!' राव साहब समझ गए थे। जरा झेंपते हुए उन्होंने एक गुलाब जामुन उठाकर मेरे होंठों की तरफ बढ़ा दिया।

'अरे-रे, जरा रुकना!' जीजाजी एकाएक चिल्लाए, 'बस इसी तरह एक मिनट प्लीज!' अगले ही पल कैमरा उनके हाथ में था।

सुनीता को गुलाबजामुन खिलाते राव साहब-क्लिक!

एक द्रौपदी दाव पर लगती-क्लिक!

'ओह ब्यूटीफुल! लवली! देखो सुनीता, हमने तुम्हें अपने कैमरे में कैद कर लिया।'

मुझे! मन तो हुआ कह दूँ, केवल मुझे नहीं, मेरी एक पूरी जिंदगी को आपने इसमें कैद कर लिया।

अब कैमरा राव साहब के हाथ में था। और मैं खुद को चीर-हरण के लिए तैयार करने लगी थी।

५५७ बी, सिविल लाइंस
अंबाला-१३४००३ (हरियाणा)
दूरभाष : ८१६८७२४६२०

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

संवाद की परंपरा में लोकमंथन की सार्थकता

• कुमुद शर्मा

विचार को शब्दों में कैद करके नहीं रखा जा सकता। शब्दों के पिजंडे में कैद विचारों को उड़ान के लिए संवाद चाहिए। पररस्पर सहृदय संवाद। भारतीय संस्कृति सदैव संवाद की निरंतरता के महत्त्व को प्रतिपादित करती आई है। जीवन और जगत् से संवाद स्थापित करने की आकांक्षा से ही हमारी तमाम सृजनात्मक कलाओं और विधाओं का प्रस्फुटन हुआ है। उपनिषद् और गीता के संदेश की संप्रेषणीयता संवादधर्मिता के कारण ही है। हमारे यहाँ ऋग्वेद में भी परस्पर स्नेहपूर्ण संवाद की तथा साथ-साथ ज्ञान प्राप्त करने की कामना की गई है। भारतीय ज्ञान-परंपरा में विद्या-अर्जन के क्षेत्रों में संवाद की केंद्रीय भूमिका है। यही ज्ञान की स्वाभाविक प्रक्रिया है। मानवता के मंगल विधान का रास्ता तैयार करने में भी स्वस्थ संवाद की भूमिका को महत्त्वपूर्ण माना गया है। हमारी संवाद परंपरा में शास्त्रों के साथ पूरी प्रकृति और लोक समाहित रहा है।

संवाद का कोई और विकल्प नहीं है, लेकिन विडंबना यह है कि आज हम संवाद नहीं करते बल्कि एक-दूसरे के विचारों के प्रति हिंसा से भर उठते हैं। हम संवाद की जगह ऐसी बहसों और विवादों को जन्म दे देते हैं, जिनकी अंतिम परिणति हिंसा में होती है। ऐसे समय में लोक कल्याण और राष्ट्रीय महत्त्व के प्रश्नों पर मिल बैठकर सौहार्दपूर्ण संवाद कर सकें, यह जिम्मेदारी सभी की है। सामूहिक साझेदारी की परिकल्पना के साथ संवाद के माध्यम से हम अपनी ज्ञान-परंपरा से जुड़ें और समूचे देशवासियों को जोड़ें। राष्ट्रहित में वैचारिक मंथन होता रहे, इस दृष्टि से लोकमंथन की परंपरा का सूत्रपात हुआ।

प्रज्ञा प्रवाह के अखिल भारतीय संयोजक माननीय जे. नंदकुमारजी ने 'राष्ट्र सर्वोपरि' के भाव को अंतर्मन का अभिन्न हिस्सा माननेवाले विचारकों, चिंतकों और कर्मशील व्यक्तियों के बीच संवाद का पुख्ता पुल बनाने की जिम्मेवारी को महसूस किया। उन्होंने संवाद की भारतीय परंपरा को पुनर्स्थापित और पुनर्जीवित करने का उद्देश्य लेकर लोकमंथन की परिकल्पना की। विभिन्न प्रांतों में बसनेवाले भारतीयों के बीच सांस्कृतिक साझेदारी के लिए एक मंच तैयार किया। उन्होंने लोकमंथन को 'राष्ट्रीय सोच को पुनर्जीवित करने का प्रयास' बताया। उन्होंने कहा कि 'राष्ट्र को सर्वोपरि रखनेवाले चिंतकों और कार्यकर्ताओं का यह सम्मेलन देश के समक्ष उपस्थित ऐसी समकालीन समस्याओं (जो देश ही नहीं, पूरे विश्व पर प्रभाव डाल रही है) को साझा करने, उन पर मंथन व विचार करने के लिए सार्वजनिक विमर्श का एक मंच है। 'मंथन भारतीय दर्शन का मूल आधार है। स्वस्थ विचार-विनिमय और रचनात्मक संवाद ने इस महान राष्ट्र के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।' लोक मंथन ऐसे व्यक्तियों की संगोष्ठी होगी, जो विचारशील हैं और अपने विचारों को कार्य रूप में परिणित करते हैं। हम किसी सर्वाधिकारवादी शासक, किसी संविधान या किसी एक भाषा के कारण एक राष्ट्र नहीं हैं। हम हमेशा से एक थे और हैं, क्योंकि हमारी संस्कृति, परंपराएँ और रीति-रिवाज एक हैं। हमारी संस्कृति की यह समानता, हमारे देश के साधारण लोगों के दैनिक जीवन में अभिव्यक्त होती है।" उन्होंने यह भी याद दिलाया कि "हम जीवन के हर पहलू विशेषकर, बौद्धिक चर्चाओं के मामले में अपने अस्तित्व के ब्रह्मांड को विस्तार देने के लिए प्रयासरत हैं। इस कठिन प्रयास में हम हर प्रकार की छोटी-छोटी अस्मिताओं से ऊपर उठकर एक बड़ी अस्मिता में उनका विलय करने के पारंपरिक रूप से आदी रहे हैं। यह आत्मोन्नति का हमारा सदियों पुराना तरीका और मुक्ति की राह है।"

पहला लोकमंथन कार्यक्रम २०१६ में भोपाल में आयोजित हुआ था।

लेखिका, समीक्षक, मीडिया विशेषज्ञ और स्त्री विमर्शकार। भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार, साहित्य भूषण सम्मान, बालमुकुंद गुप्त साहित्य सम्मान तथा प्रेमचंद रचनात्मक सम्मान से सम्मानित। नई कविता में राष्ट्रीय चेतना, हिंदी के निर्माता, भूमंडलीकरण और मीडिया, स्त्रीघोष, विज्ञापन की दुनिया, समाचार बाजार की नैतिकता, जनसंपर्क प्रबंधन, गाँव के मन से रूबरू, आधी दुनिया का सच, अमृतपुत्र पुस्तकें चर्चित। साहित्य अमृत की पूर्व संयुक्त संपादक। प्रसार भारती बोर्ड के अंतर्गत 'लिटरेचर कोर कमेटी' की पूर्व सदस्य। संप्रति वरिष्ठ प्रोफेसर हिंदी विभाग एवं कार्यवाहक निदेशक, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।

जिसने देश-काल-स्थिति को विमर्श के केंद्र में रखकर भारतीय जनमानस पर पड़ी औपनिवेशिक धूल को साफ करने की दिशा में भारतीयता पर स्वस्थ संवाद के लिए शिक्षाविदों, विचारकों और कर्मशीलों को एकत्र कर लोकमंथन किया। लोकमंथन की द्विवर्षीय शृंखला की कड़ी को आगे बढ़ाते हुए दूसरा लोकमंथन कार्यक्रम राँची में सन् २०१८ में आयोजित हुआ। इसमें चिंतन का विषय था 'भारतबोध : जन-गण-मन'। इसमें राष्ट्र क्या है? भारत का जन क्या है? भारत का मन क्या है? शास्त्र और लोक-व्यवहार को आधार बनाकर इस पर गंभीर चिंतन-मनन हुआ। झारखंड के सांस्कृतिक कलेवर में पर्व और उत्सवों की परंपरा में भारत की लोक-संस्कृति के विभिन्न परिपार्श्वों ने अपना रंग बिखेरा। पहले और दूसरे लोकमंथन में भारतीय जीवन-पद्धति और रागात्मक दृष्टि के साथ भारतबोध के प्रति संलग्नता का भाव जगाने और राष्ट्र जीवन को समृद्ध करने का उद्देश्य समाहित था। लोक-मंथन की प्रारंभिक दोनों कड़ियों ने उस भारतबोध को जगाने का काम किया, जिसे कभी हिंदी के बड़े कवि अज्ञेय ने 'मानवीयता का निचोड़' कहा था।

लोक के उत्सवधर्मी स्वरूप में आयोजित लोकमंथन २०२२ के समापन-सत्र में राष्ट्रीय स्वयंसेवक के सरकार्यवाह श्री दत्तात्रेय होसबोलेजी ने लोक को राष्ट्र का चैतन्य स्वरूप माननेवाली भारतीय दृष्टि को सामने रखते हुए कहा कि हमें शास्त्र और लोक के बीच के भेद को वर्गीकरण की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। राष्ट्र की अभिव्यक्ति, समाज की चेतना और मनुष्य की उन्नति के धर्म को निभाने के उद्देश्य में हमें इस तरह के भेद करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

कोरोना काल के वैश्विक संत्रास में नए किस्म के यथार्थ से टकराने-जूझने के कारण द्विवर्षीय लोकमंथन का प्रवाह भी थमा। जब कोरोना काल की भयावहता से देश सँभला, तब लोकमंथन शृंखला की तीसरी कड़ी में कार्यक्रम आयोजित करने का उत्साह जगा और असम में पूर्वोत्तर का प्रवेश द्वार कहे जानेवाले, ब्रह्मपुत्र घाटी के बीच बसे शहर गुवाहाटी में बौद्धिक कुंभ के रूप में तीसरे लोक-मंथन ने आकार पाया। पूर्वोत्तर की समृद्ध लोक-संस्कृति को देश से जोड़ने का काम किया।

गुवाहाटी के श्रीमंत शंकरदेव कलाक्षेत्र का विशाल प्रांगण २१ सितंबर से २४ सितंबर, २०२२ के बीच चार दिनों तक चलनेवाले लोकमंथन में सहभागिता करनेवाले बौद्धिकों और लोक-कलाकारों के अद्भुत संगम का साक्षी बना। इस कार्यक्रम में देशभर से ३७०० से अधिक संख्या में प्रतिनिधि पहुँचे। इसी लोक-मंथन ने उप-राष्ट्रपति जगदीप धनखड़ ने चेतावनी के स्वर में कहा कि "वर्तमान दौर में यदि बुद्धिजीवी चुप रहने का विकल्प चुनते हैं तो समाज का यह महत्त्वपूर्ण वर्ग हमेशा के लिए चुप हो जाएगा। समाज में 'सलेक्टिव एजेंडा' चलानेवालों के विरुद्ध उन्हें स्वतंत्र रूप से संवाद और विचार-विमर्श करना चाहिए, ताकि सामाजिक नैतिकता और औचित्य संरक्षित रहे। इसके लिए बुद्धिजीवियों के वर्तमान मुद्दों पर बोलना होगा।"

बुद्धिजीवियों ने इस लोकमंथन के मंच पर राष्ट्र विरोधी शक्तियों की चुनौतियों को समझा। सामयिक जीवन से जुड़े विविध आयामों को चिंतन और विमर्श का केंद्र बनाकर अपनी बात रखी। 'लोक परंपरा में कार्य विभाजन : संस्कार और कर्तव्य-बोध', 'लोक परंपरा में पर्यावरण और जैव विविधता', 'भारत में आस्था और विज्ञान की लोक परंपरा', 'लोक परंपरा में शक्ति की अवधारणा' तथा 'धार्मिक यात्राएँ और अन्नदान की लोक परंपरा' पर चर्चा हुई। इन संवाद सत्रों से सबने जाना कि शास्त्र, लोक परंपरा और संस्कृति में क्या अंतर है? ये हमारे कर्तव्य-बोध को कैसे जगाते हैं? आज जब मीडिया के माध्यम से हमारा लोकपूर्ण संस्कार आहत हो रहा है, तब हमारा प्रयत्न क्या होना चाहिए? धार्मिक यात्राओं ने नदियों और पर्वतों की कहानियों से किस तरह लोक आस्था को सुदृढ़ किया है? धार्मिक यात्राओं में कथा प्रवचन की प्रवृत्ति ने किस तरह भारत की सांस्कृतिक सीमाओं को बाँधा? पर्यावरण संरक्षण और जैव-विविधता के सूत्र हमारी लोक परंपरा में किस तरह अनुस्यूत हैं? देशहित में मानव हित में, वैश्विक हित से जुड़े प्रश्नों और चुनौतियों का जबाव किस तरह हमारी लोक-संस्कृति में सन्निहित है। फोक और लोक में क्या अंतर है? लोकाभिव्यक्ति का मूल क्या है? लोक की अनुभवजन्य पाठशाला से निस्सृत ज्ञान हमें कैसे दीक्षित करता है? कितना जरूरी है लोक-परंपराओं का संरक्षण करना? वेद की भाषा और लोक की भाषा किस तरह एक हो जाती है? यह समझ भी पुख्ता हुई कि लोक-संस्कृति की सृजनधर्मिता शास्त्रों की पूरक बनती है।

इस वैचारिक मंथन को सामयिक जरूरत के रूप में देखा जाना चाहिए। जब लोक को फोक का पर्याय बताकर फोक के नाम पर 'पॉपुलर कल्चर या लोकप्रिय संस्कृति' के ढाँचे में भोंड़ी, निकृष्ट, अप-संस्कृति का 'पॉप एलबम' परोसकर युवा पीढ़ी को सांस्कृतिक दृष्टि से विसंगतियों के चौराहे पर खड़ा करने का प्रयास किया जा रहा हो। समान शैलियों और रुचियों का 'ग्लोबल मॉडल' विकसित किया जा रहा हो। पश्चिम से आयातित मुहावरों में युवा पीढ़ी को सुनियोजित ढंग से विखंडन का मंत्र सौंपा जा रहा हो। हमारे आदर्शों और प्रतिमानों पर पश्चिम मेटा थ्योरी के वर्चस्व को स्थापित करने का प्रयास जारी हो। हमें अपनी गौरवशाली सांस्कृतिक अध्यायों से काटकर उपभोग की संस्कृति में दीक्षित किया जा रहा हो तब भारत के आत्मबोध को जगाने के लिए अपने सांस्कृतिक स्रोतों की तलाश के लिए, परंपराओं, स्मृतियों और इतिहास-बोध को आत्मसात् करने के लिए सामूहिक चेतना के अर्थपूर्ण संवाद की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है। उद्घाटन सत्र में श्री जे. नंदकुमारजी ने लोक को मानव जाति के सामूहिक चैतन्य का प्रतीक बताते हुए आगे कहा कि 'लोक हमें समग्रता में जोड़ता है। यह हमारे अस्तित्व और आत्मरंजन का विषयवस्तु।' इस तरह गुवाहाटी में 'लोकमंथन २०२२' का समूचा आयोजन को समय की माँग बनकर प्रस्तुत हुआ।

इस लोकमंथन में आदिवासी लोककला अकादमी, संस्कृति परिषद्, मध्य प्रदेश के पूर्व निदेशक डॉ. कपिल तिवारी ने बीज भाषण में लोक की

अवधारणा को खोलते हुए बताया कि लोक एक वाक् केंद्रित परंपरा का शब्द है। निरंतर प्रवाहित होनेवाली लोक परंपरा के व्यापक आयामों को समेटते हुए उन्होंने कहा कि भारत की चेतना में लोक का विस्तार षड् मातृकाओं से होता है—धरती माता, प्रकृति माता, नदी माता, स्त्री माता, गाय माता व मातृभाषा।" उन्होंने भारतीय संस्कृति की जड़ों की गहराई का संकेत देते हुए कहा कि "भारत की लोकसंस्कृति पर बर्बर लोगों के अनेकानेक आक्रमण हुए। परंतु ये संस्कृति की भौतिक परत को ही नष्ट कर पाए। उन्होंने लोगों के सिर काटे, परंतु उनकी चेतना को न मिटा पाए। भौतिक परत के बार-बार नष्ट होने पर भी यह संस्कृति फिर से खड़ी हो गई, क्योंकि इस संस्कृति में विविधता नहीं एकसूत्रता है; और वह सूत्र ज्ञान, बोध व चेतना है।" उन्होंने भारतीय लोक परंपरा के वैशिष्ट्य को रेखांकित करते हुए कहा कि लोक परंपरा यह बताती है कि धरती न जीतने के लिए होती है, न हारने के लिए, यह रहने के लिए होती है।

हमारे चिंतकों और मनीषियों ने शास्त्र और लोक को एक-दूसरे का पूरक माना है। उनके लिए धर्म की गोचर लय ही लोक है। उन्होंने यह भी माना है कि लोक शास्त्र के ठहराव को तोड़ता और झकझोरता है। लोक शास्त्र द्वारा विस्मृत जीवन पद्धति और मूल्यों को पुनः सृजित करता आया है। भारत का स्वाधीनता आंदोलन लोक-शक्ति के आह्वान या जागरण के बिना लड़ा ही नहीं जा सकता था। हमारे शास्त्रकारों ने कभी लोक की उपेक्षा नहीं की।

इस बौद्धिक मंथन में सांस्कृतिक एकता की शक्ति का बार-बार स्मरण कराया गया। लोक और शास्त्र में भेद माननेवाली दृष्टि को अनुचित बताया गया। उप-राष्ट्रपति ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा कि "हमारी अद्वितीय सांस्कृतिक एकता की सुंदरता और ताकत हमारे राष्ट्रीय जीवन के हर पहलू में परिलक्षित होती है। सांसारिक, पंथनिरपेक्ष मामलों से लेकर उच्च आध्यात्मिक पहलुओं तक, बुआई के मौसम में किसानों द्वारा गाए जानेवाले गीतों से लेकर पर्यावरण के प्रति हमारे समग्र दृष्टिकोण तक भारतीयता की अंतर्निहित एकता को महसूस किया जा सकता है।"

इस अवसर पर असम के मुख्यमंत्री हिंमता विश्व सरमा ने कहा कि "सांस्कृतिक रूप से भारत सनातन काल से एक रहा है। हमें वामपंथी विचारकों के उस विचार को अकादमिक रूप से चुनौती देनी है, जो भारत को मात्र संवैधानिक राष्ट्र और राज्यों के संघ के रूप में देखते हैं। इस विचार को प्रचारित करने की जरूरत है कि भारत एक सांस्कृतिक राष्ट्र है।"

असम की संस्कृति का दर्पण कहे जानेवाले श्रीमंत शंकरदेव कलाक्षेत्र के समूचे प्रांगण में लगे चित्र और प्रदर्शनी पूर्वोत्तर की बहुविध संस्कृति का परिचय दे रहे थे। नीलाचल पहाड़ी पर अवस्थित कामाख्या देवी के मंदिर की झाँकी लोक-मानस की धार्मिक आस्था और विश्वास की कहानी सुना रही थी। सबने पूर्वोत्तर तथा देशभर के विभिन्न प्रांतों से पधारे लोक कलाकारों की नृत्य और संगीतमय प्रस्तुतियों के साथ-साथ लोकोत्सव का अद्भुत आनंद दिया। सांस्कृतिक प्रथाओं में अंतर्निहित पारंपरिक ज्ञान के प्रदर्शन ने जनजातीय परंपरा के वैशिष्ट्य को उद्घाटित किया। इस तरह प्रदर्शनी, लोक संगीत, लोक नृत्य, लोक अनुष्ठानों में हमने लोक की चेतना को ही सृजनात्मक कलाओं में ढलते हुए देखा। यह भी जाना कि लोक-मानस में व्याप्त शाश्वत कला तत्त्वों की परख करानेवाले लोक कलाकार राज्य शासन से, किसी सरकारी संरक्षण के बिना लोक-संस्कृति का संरक्षण और संवर्धन कर रहे हैं। भारत की लोक संस्कृति को प्रदर्शित करनेवाले पंडालों ने यह दर्शाया कि हम अलग-अलग प्रांतों में बसते हैं। हमारा खान-पान, परिधान अलग है, लेकिन हम एक साझी सांस्कृतिक विरासत के संवाहक हैं। हमारी लोक-संस्कृति वैश्विक संकटों से निपटने में कितनी कारगर भूमिका हो सकती है, इसके विचार बिंदु भी उभरकर आए। सचमुच यह लोक-मंथन देशकाल और स्थिति के चिंतन का मंच बना।

बौद्धिकों और कर्मशीलों की साझेदारी में जीवन की गहरी संपृक्तता को विस्तार देनेवाली जीवन और व्यवहार की बारीकियाँ भी इस लोक-मंथन में साझा हुईं। इस बौद्धिक कुंभ में पूर्वोत्तर के लोक चरित्रों, लोक आस्थाओं और विश्वासों से समन्वित लोक-संस्कृति के राग-बोध का परिचय मिला। देश भर से यहाँ जुटे लोगों ने यह भी प्रत्यक्षत: देखा कि संस्कृति संकुलों के अर्थपूर्ण योग से निर्मित पूर्वोत्तर की लोक-संस्कृति भारत की सामूहिक लोक चित्ति का ही प्रतिबिंब है। समूचे आयोजन के वैचारिक सत्रों और कर्मशीलों की क्षमताओं के प्रदर्शन ने लोक संस्कृति में समाहित साहचर्य प्रणाली की सामूहिकता और जीवंतता के दर्शन कराए। पूरा प्रांगण लोकोत्सव की परंपरा में गीत, नृत्य और संगीत की सौंदर्य लहरी से उत्साह के साथ जीवन को अखंड भाव से जीने का संदेश देता प्रतीत हुआ।

लोक के उत्सवधर्मी स्वरूप में आयोजित लोकमंथन २०२२ के समापन-सत्र में राष्ट्रीय स्वयंसेवक के सरकार्यवाह श्री दत्तात्रेय होसबोलेजी ने लोक को राष्ट्र का चैतन्य स्वरूप माननेवाली भारतीय दृष्टि को सामने रखते हुए कहा कि हमें शास्त्र और लोक के बीच के भेद को वर्गीकरण की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। राष्ट्र की अभिव्यक्ति, समाज की चेतना और मनुष्य की उन्नति के धर्म को निभाने के उद्देश्य में हमें इस तरह के भेद करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

समापन-सत्र के मुख्य अतिथि केरल के राज्यपाल श्री आरिफ मोहम्मद खान ने कहा कि "जिसे हम लोक परंपरा कह रहे हैं, वह वास्तव में भारत की सार्वभौमिक दृष्टि है। जिनके पास धन रहा है, फौज रही है, वे कभी भारतीय समाज के आदर्श नहीं रहे। भारतीय समाज के आदर्श हमेशा ऋषि-मुनि रहे। राजाओं में भी आदर्श वे बने, जिन्होंने मर्यादा की रक्षा की है; जिन्होंने भारतीय सभ्यता को, भारतीय प्रज्ञा को नए आयाम के साथ परिभाषित किया है। अपने समय के शानदार महल तो खँडहर होते हुए हजारों मिल जाएँगे, लेकिन रामायण और महाभारत कभी खत्म नहीं होंगे। मतलब जो चीज मानस से पैदा होती है, वह दिलों में घर कर जाए तो समय उसे खत्म नहीं कर पाता।"

हमारे चिंतकों और मनीषियों ने शास्त्र और लोक को एक-दूसरे का पूरक माना है। उनके लिए धर्म की गोचर लय ही लोक है। उन्होंने यह भी माना है कि लोक शास्त्र के ठहराव को तोड़ता और झकझोरता है। लोक शास्त्र द्वारा विस्मृत जीवन पद्धति और मूल्यों को पुनः सृजित करता आया है। भारत का स्वाधीनता आंदोलन लोक-शक्ति के आह्वान या जागरण के बिना लड़ा ही नहीं जा सकता था। हमारे शास्त्रकारों ने कभी लोक की उपेक्षा नहीं की। उन्होंने लोक और शास्त्र के परस्पर संबंध को परिभाषित करते हुए लिखा कि 'सही लोकदृष्टि कोई अलग दृष्टि नहीं है। वह न तो शास्त्र की विरोधी है, न शास्त्र से निरपेक्ष है। इसी प्रकार शास्त्र भी लोक-विरोधी नहीं और लोक से निरपेक्ष नहीं है।' इसी तथ्य का प्रतिपादन लोकमंथन २०२२ में हुआ।

लोक-संस्कृति के उत्सव में भागीदारी कर मुझे पूर्णता में सार्थकता तलाश करनेवाली लोकदृष्टि के वैशिष्ट्य को रेखांकित करती पं. विद्यानिवास मिश्र की इन पंक्तियों का स्मरण हो आया, "इस लोक में मनुष्यों का समूह ही नहीं, सृष्टि के चर-अचर सभी सम्मिलित हैं, पशु-पक्षी, पर्वत सब लोक हैं और सबके साथ साझेदारी की भावना ही लोकदृष्टि है। सबको साथ लेकर चलना लोक-संग्रह और इन सबके बीच जीना लोकयात्रा है।" कुल मिलाकर सभी ने राष्ट्रीय-सांस्कृतिक एकता के जयघोष की अंतर्ध्वनि को सुना। भारत के बौद्धिकों और कर्मशीलों के इस संगम ने इस तथ्य को सिद्ध किया कि भारत की लोक-संस्कृति स्वतः प्रेरणाओं से उपजी एक ऐसी प्रक्रिया है, जो अपनी भावधारा से शास्त्र को प्रमाणित करते हुए निरंतर प्रवहमान है। विश्वास है, लोकगंगा में डुबकी लगाकर लोकमंथन से निकले अमृत का कलश लिये बौद्धिक तीर्थयात्री भारत की सांस्कृतिक एकता को मजबूत कर देश को जोड़े रखने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे और तोड़नेवालों को संवाद तथा विचार-विमर्श की भूमि पर कड़ी चुनौती भी देंगे। देशभर के लोगों में लोक में रमने, अंतरंग होने और लोक-संस्कृति को जाने-समझने की उत्कंठा जगाएँगे। विचार-मंथन से निकले अमृत के उद्घोषक रूप इस संदेश को जन-जन तक पहुँचाएँगे कि 'भारत एक राजनीतिक इकाई नहीं, एक जाग्रत् देवी है, जिसे हम भारत माता कहते हैं।' इसे जानने का मतलब है 'विराटता और परस्परता को जानना।'

तीनों लोकमंथन कार्यक्रमों में हिस्सा लेनेवाले प्रतिनिधि इस सत्य से इनकार नहीं कर पाएँगे कि लोकमंथन लोक-मानस की सामूहिक चित्ति का आख्यान रच रहा है। यह भारतीय ज्ञान परंपरा और भारतीय संस्कृति को मजबूत करने का सशक्त मंच बन गया है। लोक-जीवन की व्यापकता में समाहित सनातन संस्कृति की अनुगूँज की पहचान कराने में लोकमंथन की शृंखला अपना प्रदेय सिद्ध कर चुकी है। लोकमंथन का प्रवाह बहुत प्रामाणिकता के साथ भारतीय चिंतकों के इस भाव को संप्रेषित कर रहा है कि "लोक-जीवन के श्वास-प्रश्वास से मुखरित होनेवाला स्वर जिस राग को गुंजरित करता है, वह संस्कृति का सबसे मर्मभूत, सबसे अनश्वर और सबसे शिवप्रद राग होता है।"

अतः लोकोन्मुखी संवेदना के जागरण के लिए, अज्ञानता के अंधकार को चीरकर सनातन संस्कार को जगाने के लिए, देशहित में लोक ऊर्जा के उद्रेक के लिए 'लोकमंथन' शृंखला में विचार-कुंभ आयोजित होता रहे, यह कामना हम सबकी होनी चाहिए।

१८८ नेशनल मीडिया सेंटर
एन.एच.-८, गुरुग्राम-१२२००२ (हरियाणा)
दूरभाष : ९८११७१९८९८

लिबास

लघुकथा

• सेवा सदन प्रसाद

मैं ऑटोरिक्शा में बैठकर ऑफिस जा रहा था। सिग्नल के करीब सभी वाहन थम गए। रेड सिग्नल होने के पहले ही कुछ हॉकर और भिखारी अंदर घुस आए।

सामने से एक बूढ़ी औरत अपनी मजबूरियों को घसीटती हुई आती दिखी। वह हर एक कारवाले के समक्ष हाथ फैलाती। पर कुछ लोग अपना शीशा बंद कर लेते तो कुछ लोग आगे बढ़ने का इशारा कर देते। भीख देना ठीक नहीं, पर मदद से परहेज क्यों? कोई भी उसकी आँखों में बसी मजबूरी को पढ़ने का प्रयास नहीं करता।

तब मैंने अपने पॉकिट से एक दस का सिक्का निकाला। भिखारिन मेरे करीब से गुजर गई, पर उसने हाथ नहीं फैलाया। मैं आवाज देता, तभी सिग्नल हरा हो गया और ऑटो चल पड़ा। ऑटोरिक्शे का ड्राइवर शीशे में मेरे लिबास को देखकर मुसकरा पड़ा। दस का सिक्का मुजरिम की तरह मुट्ठी में बंद हो गया।

६०१ महावीर दर्शन सोसाइटी
ब्लॉक नं. ११ सी, सेक्टर-२०
खारघर नवी मुंबई-४१०२१०
दूरभाष : ९६१९०२५०९४

कहानी

सलोनी का फोन

● राजेश ओझा

आज होली के त्योहार में जहाँ सब मगन थे, वहीं महँगू का चित्त खोया-खोया था। न तो रंग-अबीर खेला था, न ही नए कपड़े पहने थे। कोई कुछ पूछता तो बताने के बजाय टाल देते उसे। महँगू की दुलहिन कुछ-कुछ अंदाजा लगा तो रही थीं, पर एक अनजान भय से काँप जातीं। घर में अन्य सदस्यों का उल्लास देख वे ललक उठतीं, पर महँगू को उदास देख कलपकर रह जातीं। दोपहर के एक बज गए थे। बच्चे नहा-धोकर नए-नए कपड़े पहने, अबीर लगाए घूम रहे थे, पर महँगू बाहर दालान में उदास हुए बैठे थे।

"अम्मा! बापू से आज खाने को नहीं कहोगी?" बहू ने महँगू की दुलहिन से कहा तो था, पर उनकी हिम्मत नहीं हो रही थी कि महँगू से कुछ कहें। वह समझ रही थीं···बहुत कहने पर वे खाने तो आ जाएँगे, पर खा नहीं पाएँगे।

महँगू के पिता जब मरने को हुए थे तो महँगू को अपने पास बुलाकर बोले थे—"महँगू तुम बड़े हो···सहतुआ नालायक निकल गया···उसे अपने भविष्य की चिंता नहीं है···उसे भाई की तरह नहीं, अपने बेटे जैसा रखना।"

बाप की अंतिम इच्छा पूरी करना महँगू के लिए चारों धाम के पुण्य जैसा था। नालायक सहतू को ढर्रे पर लाने के लिए महँगू ने हर वह प्रयत्न किया, जो एक बाप कर सकता है, पर स्वभाव की प्राकृतिक अवस्था यह है कि वह बदलती नहीं···कुत्ते की पूँछ कभी सीधी नहीं होती'···सहतू को न सुधरना था न सुधरा। महँगू की दुलहिन जब कलह और किचकिच से परेशान हो जातीं तो खाना-पीना छोड़ देतीं, पर महँगू से कुछ न कहतीं।

खेती-पाती ठीक थी। गुजारा ठीक से चल रहा था। भले ही सहतू का भी खर्चा उन्हें उठाना पड़ता, पर घर में किसी चीज की परेशानी नहीं थी। भारतीय समाज का एक कड़ुवा सच यह भी है कि पड़ोसी के घर के सुख से अगले पड़ोसी के घर की शांति विचलित होने लगती है, कुछ-कुछ खदबदाने जैसी स्थिति हो जाती है। पड़ोसियों ने महँगू की दुलहिन के कान भरना शुरू किया···"पूरी जिंदगी का ठेका ले रखे हो तुम लोग, तुम्हारे भी एक लड़का है, कुछ उसके लिए भी सोचा है कि नहीं?' संगति ने अपना कमाल दिखाया। महँगू की दुलहिन पर असर हुआ और उन्होंने विरोध भी किया, पर ना महँगू को मानना था, ना माने···जैसे कर रहे थे, वैसे ही करते रहे···वे अकसर लोगों से कहते, 'मरने पर बाप से नजर मिला सकूँगा अब।'

सुपरिचित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ, कविताएँ, लघुकथाएँ प्रकाशित। संप्रति जिला न्यायालय गोंडा में विधि-व्यवसाय।

पर सहतू के चाल-चलन की वजह से महँगू के घर का बजट अकसर गड़बड़ा जाता। पिछले सप्ताह उसके कारनामों की वजह से पुलिस एक बार फिर उसे उठा ले गई थी। इस बार उसे छुड़ाने की पैरवी में बिटिया के दहेज के लिए रखे रुपयों में से भी महँगू को कुछ निकालना पड़ा था, जिससे पूरा परिवार महँगू के विरोध में खड़ा हो गया था। इधर महँगू पूरा दिन कचहरी में भाग-दौड़कर थककर चूर हो गए थे, उधर घर के सदस्य आज महँगू से बिल्कुल स्पष्ट बतकही कर लेना चाहते थे। घर पहुँचते ही महँगू ने पत्नी से चाय लाने को कहा और स्वयं नल पर हाथ-मुँह धोने चले गए थे। पत्नी तो भरी बैठी ही थीं, गरजते हुए बोली थीं, "जाकर सहतू से चाय माँगो···और कौन बैठा है आपका?"

महँगू बोले तो कुछ नहीं, पर उनकी आँखें भर आईं···पत्नी उनकी इस अवस्था से थोड़ा विचलित तो हुईं, पर मन को सख्त करते हुए बोली थीं, "फिर नाटक शुरू आपका···काहे हम सबको भावनात्मक कलाबाजी दिखा रहे हो?"

महँगू पत्नी के पास आकर धीरे से बोले, "अब तुम भी नहीं समझोगी मुझे। तुम्हारी बात मेरी बुद्धि तो मानती है, पर दिल नहीं मानता। क्या करूँ···सहतुआ भी उसी कोख से पैदा हुआ है, जिस कोख से मैं पैदा हुआ हूँ। भाई है मेरा, क्या करूँ?"

कहकर अपने कमरे में चले गए। महँगू की दुलहिन जानती थीं कि वे वचन से बँधे हैं। वचन के चलते प्राण जाने तक का पौराणिक आख्यान उन्होंने संत-महात्माओं के मुँह से सुन रखा था, ऐसा सोचते ही वे सिहर गईं···तुरंत महँगू के लिए चाय बनाने चली गईं। शेष परिवार बैठा एक-दूसरे का मुँह देखता रह गया था।

सहतू के आचरण से महँगू परेशान रहते। अकसर किसी हितैषी को देखकर मन हल्का करने लगते। बड़े-बुजुर्गों ने सलाह दी···"बैल कितना

भी बिगड़ैल हो, जुआठा गले में पड़ते ही सुधर जाता है। विवाह कर दो इसका।" महँगू का सामाजिक स्तर बहुत बढ़िया था। इधर उन्होंने एक-दो लोगों से सहतू का विवाह इस लगन में करने को अपनी इच्छा प्रकट की उधर फटाफट रिश्ते आने लगे। महँगू ने सोच-समझकर, देख-परखकर सहतू का विवाह कर दिया और संतुष्ट हो गए, पर प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ-न-कुछ अधूरा रह ही जाता है। महँगू ने सहतू का विवाह तो कर दिया, पर सहतू की बहुरिया सहतू से बीस निकली। अगर सहतू किसी के समझाने से कुछ समझने का प्रयास भी करते तो सहतू की दुलहिन अड़ जातीं। वह अहेरिया पारसी बोलने में दक्ष थी। महँगू पति-पत्नी चाहे जितना ध्यान रखते, उसका नाक-भौं सिकुड़ा ही रहता। ऐसे में महँगू की पत्नी कुढ़कर रह जातीं। खाना-पानी छोड़ना ही आसान लगता, सो छोड़ देतीं। मगर सहतू की नन्ही बिटिया सलोनी में महँगू पति-पत्नी का दिल बसता था। अपने बच्चे बड़े हो चुके थे, ऐसे में सलोनी की बाल सुलभ हरकतें महँगू पति-पत्नी को बहुत भातीं। वह भी बड़ी अम्मा-बापू के बिना नहीं रह पाती। उसे जैसे ही भान होता कि बड़ी अम्मा नाराज होकर भूखी रहनेवाली हैं, वह मनुहार करने चली आती। महँगू की दुलहिन कितनी भी नाराज क्यों न हों, पर सलोनी की बाल सुलभ मनुहार से पसीज जातीं और उसे दुलराते हुए खाने आ जातीं। सहतू की दुलहिन अपनी बिटिया सलोनी को जैसे ही महँगू की दुलहिन के पास देखतीं, जल-भुन जातीं। वह तुरंत बिटिया को खींच ले जाती और पता नहीं क्या-क्या बड़बड़ाती।

महँगू धर्म-संकट में थे। एक तरफ अपनी पत्नी और बच्चा, दूसरी तरफ बाप को दिया हुआ वचन। घर का कलह जब जीवन समाप्त करने की हद तक पहुँच गया तो फिर गाँव के बूढ़े-बुजुर्गों की राय मानकर महँगू ने सहतू के लिए अलग मकान बनवा दिया। पर सलोनी का मन नए घर में न लगता। बिना बड़ी अम्मा के उसे नींद नही आती···बिना बड़े बप्पा के साथ खाए उसका पेट नही भरता। उधर यही हाल महँगू और उनकी दुलहिन का बिना सलोनी के होता, लेकिन सहतू की दुलहिन जैसे ही सलोनी के साथ उनका लाड़-प्यार देखती, वह मारे क्रोध में तनतना जाती। बिना किसी ठोस वजह के झगड़ा शुरू हो जाता। जिससे अब महँगू और उनकी दुलहिन सलोनी से दूरी बनाने लगे थे। मगर यह संभव नहीं था। सलोनी बिना बड़ी अम्मा के रह ही न पाती। वह अपने माँ-बाप की नजर बचाकर आ जाती बड़ी अम्मा-बापू के पास।

यह सही है कि खूनी रिश्ते अकसर पारिवारिक बँटवारे को लेकर खून-खराबे पर उतर आते हैं, फिर भी हम भारत के लोग रिश्तों में खुशी ही तलाशते हैं। और इस खुशी को बढ़ाने हेतु रिश्तों की दुनिया को विस्तार देते हैं। रिश्तों का अपना अर्थ संबंध होता है।

यदि भ्रम, संदेह आदि से आपसी संबंधों में कटुता आती है तो रिश्तों को सँवारने के लिए हम अकसर अगले की कमी दूर करने का प्रयास करते हैं। यही सब महँगू, सहतू से संबंध बनाए रखने के लिए कर रहे थे। लेकिन सहतू और सहतू की पत्नी के अमर्यादित व्यवहार की वजह से महँगू की पत्नी-बच्चे बहुत खुश नहीं थे। एक सलोनी दोनों परिवारों को जोड़नेवाली सेतु बनी थी, जिसके सहारे महँगू इस घर से उस घर तक पहुँच जाते थे। लेकिन सलोनी जब विवाह योग्य हुई और महँगू ने उसके विवाह की चर्चा अपने घर में की तो एक बार फिर वे पूरे परिवार के निशाने पर आ गए। दरअसल सहतू को न कभी किसी चीज की परवाह थी, न उन्होंने कोई जिम्मेदारी निभाई थी। ऐसे में जब सलोनी विवाह करने की उम्र तक पहुँची, फिर भी सहतू के कान पर जूँ नहीं रेंगी तो महँगू का विचलित होना स्वाभाविक था। किसी तरह पूरे परिवार को मनाया और ब्याह दिया सलोनी को। सलोनी को विदा करके वे बहुत संतुष्ट नजर आ रहे थे। एक बार पुनः वे लोगों से कहने लगे, 'मरने पर बाप से नजर मिला सकूँगा अब।'

महँगू की दुलहिन जब कभी खर्चे का रोना लेकर बैठतीं और सलोनी के बियाह में हुए खर्चे का जिक्र कर बैठतीं तो महँगू उन्हें समझाते, "कन्यादान से बड़ा कोई दान नहीं होता पगली···तुमने तो लड़की पैदा ही नहीं की तो हम यह दान कैसे कर पाते···हमें सहतू और उनकी दुलहिन का एहसान मानना चाहिए।" महँगू की पत्नी सब समझ रही थीं, पर घर में कलह न हो, इसलिए शांत रहतीं।

सबकुछ बहुत ठीक चल रहा था कि एक दिन सहतू दोनों परानी आए—

"मेरा खेत अलग कर दो!" सहतू रूखे स्वर में बोला।

"पर हुआ क्या? अलग करने की क्या जरूरत आन पड़ी?"

"बेचना है।"

महँगू सन्न रह गए!

"भैया, मकान मैंने बनवा दिया, बिटिया मैंने ब्याह दी, घर खर्च मैं देता ही हूँ···अब कौन सा खर्चा आन पड़ा, पुरखों का खेत बेचना, इज्जत गँवाने जैसा होता है भाई।" महँगू ने समझाने का प्रयास किया।

सहतू दोनों परानी जैसे कोई सलाह करके आए हों। उनको न समझना था न समझे, बात की बात में बात बढ़ गई। महँगू ने फिर कहा, "होली आ रही है···सलोनी और उसके दूल्हे को पहली बार घर आना है···होली बीत जाए, वे लोग आकर लौट जाएँ, फिर कर लेना बँटवारा।" महँगू ने अंतिम तर्क दिया।

"खबरदार जो सलोनी को लाने का नाम लिया। उसे लाओ तो अपने बेटे का मरा मुँह देखो, हमारी बेटी है हम लाएँगे।"

सहतू के ऐसा कहते ही महँगू अचेत होते-होते बचे। कुछ बड़े-बुजुर्गों को बुलाया और उन लोगों ने गहना-गुरिया, घर-दुआर, खेत-पात का बँटवारा कर दिया। महँगू जब खेत की तरफ जाते और खेत के बीच नई-नई बनी मेंड़ देखते तो किलसकर रह जाते। जब अकेले होते तो बड़बड़ाते, "बापू माफ कर देना मुझे···नहीं सँभाल पाया सहतुआ को।" और रोने लगते। वहीं मेंड़ पर बैठे-बैठे पता नहीं क्या-क्या बड़बड़ाते। महँगू की दुलहिन जब देखतीं कि गौधुरिया का समय हो गया और वे खेत से अभी नहीं आए तो समझ जातीं कि आज फिर मेंड़ पर बैठे रो रहे होंगे। महँगू शरद के भोर में झरे ओस के कणों के समान निर्मल थे। महँगू की दुलहिन को उनपर दया के साथ गुस्सा भी आता, पर क्या करतीं। उन्हें भी पता था, 'स्वभाव नहीं बदलता।' वे चुपचाप जाकर खेत से बुला लातीं बस।

आज होली थी। महँगू उदास बैठे थे। डरते-डरते आई थीं महँगू की दुलहिन और बोलीं, "चलो, एक गुझिया ही खा लो। दिन चढ़ आया है···

हू भी बिना खाए-पिए बैठी हैं। होली का दिन है···उपास ठीक नहीं।"

महँगू मन मारकर उठे। हाथ-पैर धुला। चौके पर बैठकर पहला कौर ही तोड़ा था कि फोन की घंटी बजी—

"हलो!"

"बापू मैं सलोनी···!"

हाथ का कौर छूट गया और बदन लरज उठा। गला भर आया। किसी तरह भरे गले से बोले थे महँगू—

"हाँ, बोल बिटिया···सहतुआ लेने नहीं गया तुम्हें?"

"बापू मैं तुम्हें कहती हूँ बापू, वह क्यों आएँगे? अम्मा का फोन आया था कि वे शराब पिए कहीं पड़े हैं, तुम चली आओ। ननदें ताना मार रही हैं कि पहली होली में ही इन्हें लेने कोई नहीं आया।" कहते-कहते फफक पड़ी सलोनी।

"रो मत बेटा, आ रहा हूँ मैं। तेरा बापू अभी जिंदा है।"

महँगू हाथ धुलाकर कुरता पहनने लगे। महँगू की दुलहिन को सहतू की कसम याद हो आई। काँप उठीं वह।

"हमारे बेटे से ज्यादा हो गई सलोनी?" महँगू की दुलहिन ने सलोनी को लाने का विरोध किया।

"बहुत कथा भागवत सुनती हो तुम। भगवान् को भी मानती हो कि नहीं?"

"अब इसमें भगवान् कहाँ से आ गए?"

"तुम्हीं तो कहती हो कि भगवान् जो करता है अच्छा ही करता है। जन्म मृत्यु उसी के हाथ में है।"

"तो···?"

"तो यह कि भगवान् सलोनी की अम्मा के कहने में नहीं चलते। यदि सलोनी नहीं आई तो दो जानें अवश्य जाएँगी···उधर सलोनी की इधर मेरी।"

महँगू की दुलहिन की जिद ढीली पड़ गई। महँगू ने छड़ी उठाई और विदा कराने चल पड़े। चेहरे पर संतुष्टि थी। सारा क्षोभ गायब था। सारी उदासी उड़न-छू···चेहरे पर अलौकिक दमक थी।

ग्राम व पोस्ट-मोकलपुर,
जनपद-गोंडा (उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : ९८३९२३५३११

लघुकथा

रहस्य

• दिनेश प्रताप सिंह 'चित्रेश'

"मास्टरजी!"

खुरदरी आवाज से आकृष्ट हो, सामने देखते ही एक आशंका भरी सनसनी मेरे पूरे शरीर में दौड़ गई। मुहल्ले का कुख्यात गैंग मास्टर बैठक में दाखिल हो रहा था। फिर भी खुद को निर्द्वंद्व दिखाने के लिए मैंने दीवान के पासवाली कुरसी की तरफ इशारा किया और धड़कते दिल पर काबू रख, औपचारिक लहजे में बोला, "आओ बैठो, मेरे लायक कोई सेवा?"

मेरा खयाल था, किसी लड़के को पास-वास कराने के चक्कर में आया होगा। किंतु संभावना के विरुद्ध कुरसी के पार्श्व पर चौड़ी-चकली पीठ टिकाते हुए उसने सदरी की जेब से नीला मनीबैग निकाला और दीवान पर रख दिया, "आपका है।"

"हाँ···" परसों पान की दुकान पर उड़ाया गया पर्स देख मेरे मुँह से बरबस निकल गया, "मगर यह तुम्हें कहाँ मिला?"

"मेरे ही जमूरे ने पार किया था।" उसने लापरवाह अंदाज में कहा, "देख लें, है पूरी रकम!" दो नोट सौ की एक पचास और तीन दस की···"हाँ ठीक है।" गिनने के बाद मैंने जवाब दिया।

अगले क्षण उसकी लाल डोरेवाली बेधती आँखें मेरे चेहरे पर जम गईं, "फिर पर्स के साथ चार हजार रुपए गुमने की रपट लिखाने की वजह···?"

मैं बगलें झाँकने लगा। बता भी कैसे सकता था कि मेरे कीमती लिबास और सामाजिक हैसियत के बीच इस रकम की संगति नहीं बैठ रही थी। लिहाजा अपने मध्यवर्गीय संस्कार पर परदा डालने के लिए मैंने गोल-मोल बात बनाई, "मुझे रिपोर्ट ही नहीं करनी थी। मगर मौके पर मेरे मित्र चौकी के इनचार्ज खड़े थे, उन्होंने एक तरह से जबरन और खुद ही रिपोर्ट लिख डाली। मुझे क्या उम्मीद थी कि पर्स का सुराग लगेगा, जो उनकी लिखी रकम में संशोधन कराता।"

चौकी इनचार्ज से मेरा दुआ-सलाम का वास्ता था, बस। मित्रता की बात महज रोब जमाने के लिए थी। उस पर असर भी पड़ा। क्षणभर में उसके तने हुए चेहरे पर ढीलापन आ गया। वह कुरसी के हत्थे पर जोर दे, थोड़ा सा सामने झुका और बोला, "खैर, अब चौकी में जाकर कह दें, पर्स घर में छूट गया था।"

मेरे दिमाग में सवाल कौंधा, ऐसा क्यों? उसके नरम रुख के सामने इस संदिग्ध प्रकरण की टोह के लिए मुझे विशेष हिम्मत से काम नहीं लेना पड़ा। मैंने स्वाभाविक ढंग से चलने के लिए कुरसी छोड़ चुके उस व्यक्ति को हाथ के इशारे से रोका, "यह तो बताते जाओ, मामला क्या है?"

"मास्टरजी! वह आपका मित्र इनचार्ज अपने हिस्से का दो हजार रुपया माँग रहा है। कहाँ से दूँ?" सवालिया जवाब देता वह बैठक से निकल गया।

ग्राम व पोस्ट-जासापारा
वाया-गोसाईंगंज-२२८११९
जनपद-सुलतानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष : ७३७९१००२६६१

गजलें

• प्रीति चौधरी 'प्रीत'

: एक :

सागर-नदियाँ
करते बतियाँ

नीली-पीली
उड़ती परियाँ

जीवन बगिया
आशा कलियाँ

गीत सुनातीं
नन्ही चिड़ियाँ

सारी दुनिया
देखें अँखियाँ

बुनतीं सपने
सूनी रतियाँ

गलियाँ छूटीं
बिछुड़ी सखियाँ।

: दो :

घर में होकर जैसे बेघर लगते हैं,
दिल पर जब शब्दों के खंजर लगते हैं।

चलने की आजादी जिन पर होती है,
रस्ते ऐसे मुझको बेहतर लगते हैं।

सीखा मैंने जीवन जीना जिनसे भी,
सचमुच मुझको वे सब रहबर लगते हैं।

डूबी रहती जिन आँखों में हरपल ही,
वो उल्फत के मुझको सरवर लगते हैं।

छोड़ मीरा ने महलों के सुख-वैभव,
प्यारे उसको केवल गिरधर लगते हैं।

आँखों से गिरते हैं जो हँसते-हँसते,
आँसू वे तो मुझको निर्झर लगते हैं।

वो कहता है 'प्रीति' तुम्हीं से है लेकिन,
बदले-बदले उसके तेवर लगते हैं।

: तीन :

ताजगी से भरी पाँखुरी के लिए,
फूल हमने चुने आरती के लिए।

चाँद को जब कभी बादलों ने ढका,
वो भटकता रहा चाँदनी के लिए।

खाक फसलें हुईं बिजलियाँ जब गिरीं,
पेट भर अन्न दो तुम सभी के लिए।

आ गया अब जमाना यहाँ कौन सा,
साँस भी बिक रही जिंदगी के लिए।

साथ दे जो कड़ी धूप में भी सदा,
प्रीति है बस समर्पित उसी के लिए।

: चार :

बात इस दिल की बताने हम भला जाते कहाँ,
आप जैसा जिंदगी में हमसफर पाते कहाँ?

दिल सुनें दिन-रात केवल जब सदाएँ प्यार की,
रंग फीकी महफिलों के तब हमें भाते कहाँ?

सुपरिचित रचनाकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। अनेक सम्मानों से सम्मानित तथा काव्य मंचों पर सक्रिय। संप्रति शासकीय शिक्षा सेवा से संबद्ध।

अंजुमन उजड़ा हुआ था शाख भी गमगीन थी,
गीत उस माहौल में हम प्रीत के गाते कहाँ?

वक्त कुछ देना मुनासिब भी नहीं समझा मुझे,
फिर भला नजदीक दिल के वो कभी आते कहाँ?

बस यही तो सोच पल-पल मुसकराते हम रहे,
भीड़ में ये जख्म अपने प्रीति दिखलाते कहाँ?

: पाँच :

गुनगुनाया है गजल को जब कभी अवसर मिला,
इक पुरानी झील को बहता हुआ सरवर मिला।

उम्र के इस ताल में जैसे कमल-सा खिल गया,
साथ चलने को उसे जब धूप में रहबर मिला।

गीत गजलों छंद कविता संग कुछ ऐसा लगा,
ये शहर अंजान था मुझको नया सा घर मिला।

जिंदगी का एक ये भी ख्वाब अब पूरा हुआ,
अश्क अपने पोंछने को 'प्रीति' को दिलबर मिला।

११ फ्रेंडस कॉलोनी
गजरौला, अमरोहा-२४४२३५
दूरभाष : ९६३४३९५५९९

साहित्य में सौंदर्यवादी सृष्टि

● धीरेंद्र प्रसाद सिंह

'सत्य काव्य का साध्य और सौंदर्य साधन है।' महादेवी वर्मा के उक्त कथन पर विचार करें तो कहना होगा कि काव्य जीवन की अजित अभिव्यक्ति है। इसलिए जीवन के मूल में जो भावनाएँ, प्रेरणाएँ गतिशील हैं, वे ही काव्य-चेतना की जनक हैं। मुंडकोपनिषद् में कहा गया है—"जीवन प्राणों की धारा का रसमय बिलास है।" काव्य साहित्य का एक प्रमुख अंग है। साहित्य की विविध विधाओं में काव्य ही सबसे पहले अस्तित्व में आया। यद्यपि पंचतंत्र की कहानियाँ या दादी-अम्माँ की कथाएँ—कब शुरू हुईं, इसका कोई निश्चित काल नहीं है। ऐसा अनुमान है कि ये कथाएँ अपने श्रुत रूप में सदियों से प्रचलित रही हैं। लेकिन जब साहित्य की ललित-कला (काव्य) पर विचार करते हैं तो जीवन के मूल में व्याप्त अनंत साल के ताल-ताल पर नर्तन करती हुई यह धारा अनादिकाल से प्रवाहित होती आ रही है।

कविता विषाद से उत्पन्न हुई वह अभिव्यक्ति है, जिसमें मुनष्य जो दुख सहता और रुदन करता है, कवि है। उसका प्रत्येक आँसू पद्य है और प्रत्येक भाव एक कविता। यानी सघन संवेदना, सूक्ष्मत: ऐसी जीवंत मानसिक मूर्ति जैसी होती है, जिसके पास होते-होते, सहते-सहते अनुभव-अनुभूति स्मृति-पटल पर बिंबों-प्रतीकों, छाया-छवियों, ध्वनियों-अलंकृतियों की तह में जाकर एक दृश्य उपस्थित करता है। यों कविता का जो कथ्य नितांत बाहरी विषय-वस्तुपरक व प्रधान होता है, कविता में से होकर जैसा 'कथन' बनता है, वह समग्रत: संयोजनात्मक रूप में भाव-स्वभाव-संस्कारपरक होता है।

पहले की कविता और आज की कविता में शिल्प का ही नहीं, भाव और विचार का भी अंतर है। पहले मनुष्य (कवि) अपने को व्यक्त करने के लिए इतना आतुर नहीं था, जितना आज वह व्याकुल व बेचैन है। उसकी सिसृक्षा उसे चैन से बैठने नहीं दे रही है। रूप-रंग-रस-रास देखने के बावजूद वह अन्यमनस्क बना हुआ है। कुछ महत्त्वाकांक्षी बन अपना प्रचार-प्रसार करने, अपनी कलाबाजी को रूपायित कराने की होड़ में जी-तोड़ दम लगा रखे हैं, जबकि ऐसी कविताओं के कथ्य-कथन के प्रतिमानों-प्रयोगों का और फिर स्वस्थ परिणाम निकालने का काम बहुत खतरनाक होता है। खतरनाक से भी ज्यादा खतरनाक तब होता है, जब कुछ मुखापेक्षी समीक्षक/आलोचक वादों-प्रतिवादों की सीमा में जकड़कर एक नयापन का प्रदर्शन करते हैं। कविता में किसी विषय का ही 'कथ्य' होता है। कविता इस 'विषय कथ्य' के नएपन के अर्थ में वस्तुत: कभी नितांत नई नहीं हो सकती, न पुरानेपन के अर्थ में पुरानी ही हो सकती है। वह कल्पना, जल्पना, स्वप्न-सत्य, धर्म-दर्शन, पुराण-इतिहास, संस्कृति-भूगोल, विज्ञान, प्रकृति-सौंदर्य की विविधताओं तक भी संभवत: नयापन नहीं लिये होती है। फिर नएपन का रोना क्यों? यह विचारणीय है।

हिंदी-अंग्रेजी में कविता, कहानी, दर्शन, संस्कृति, इतिहास का प्रभावी लेखन करनेवाले धीरेंद्र प्रसाद सिंह भावुकता से उत्पन्न आँसुओं की बूँद आँखों से नहीं निकल, रक्त में विलीन होता रहा, जिसकी अभिव्यक्ति इनकी रचनाओं में हुई है।

व्यक्ति की अनुभूति से स्पंदित होकर भी कविता अवैयक्तिक धरातल पर आस्वादित होती है। रसास्वादन ही किसी कविता की काबिलीयत का प्रमाण देता है। कविराज गोपीनाथ का कथन कौंधता है—"हम संसार में जितना आनंद पाते हैं, सौंदर्य जितना ही देखते हैं, उतनी ही हृदय में अभाव प्रतीति और भी अधिक जाग उठती है। देखकर भी देखने की साध किसी तरह भी मिटती नहीं, मालूम होता कि वह अपूर्ण है। हमारा हृदय पूर्ण सौंदर्य को चाहता है, किंतु वृत्ति के द्वारा उसका आस्वादन कभी किया ही नहीं जा सकता। वृत्ति में तो खंड सौंदर्य ही आभासित होता है। इसलिए व्याकुलता बनी रहती है। इस साधना में विरह इसलिए नित्य तत्त्व माना गया है। रूप की प्यास उसमें कभी मिलती नहीं, वृत्तिपूर्ण सौंदर्य की

प्रतिबंधक है। सौंदर्य का जो पूर्ण आस्वाद है, वृत्ति रूप में वह विभक्त हो जाता है, वह खंड सौंदर्य है, परिच्छिन्न आनंद है। पूर्ण सौंदर्य स्वयं ही अपने को प्रकट करता है, उसे अन्य कोई प्रकट नहीं कर सकता।"

भारतीय मनीषियों ने साहित्य के सौंदर्य तत्त्व पर विचार करते हुए कहा है कि सौंदर्यानुभूति जीवन की विशिष्ट अनुभूति है। इसका प्रभाव अमित उन्मादकारी होता है।···सौंदर्य की भावना से हमारी वृत्तियों का परिष्कार और चेतना का विकास होता है। सौंदर्यानुभूति क्षोभ, उद्वेग से रहित परम विश्रामदायिनी होती है। डॉ. रामशंकर द्विवेदी के शब्दों में, 'सौंदर्य साधना' निखिल के साथ आत्मा के योग का सोपान है। उसकी 'कुक्षि' में अमृत का घट विराजमान है, उस घट पर जीवन और प्राणों के आम्रपल्लव सुशोभित है। आनंद की प्राप्ति सुंदरम् की साधना का लक्ष्य है और सुंदरम् की यह साधना मनुष्य की इच्छाशक्ति की ही साधना है। इन इच्छाओं की संवेदना जितनी ही परिमार्जित एवं सुसंस्कृत अर्थात् सौंदर्यमयी होगी, कर्म उतना ही श्रेय से संयुक्त होकर शिवमय बन जाएगा। पतंजलि ने वाणी को 'कामधेनु' कहा है। वाणी के विलास से ही तमासावृत्त संसार प्रकाश से भर उठता है।

डॉ. रामशंकर द्विवेदी के शब्दों में, 'सौंदर्य साधना' निखिल के साथ आत्मा के योग का सोपान है। उसकी 'कुक्षि' में अमृत का घट विराजमान है, उस घट पर जीवन और प्राणों के आम्रपल्लव सुशोभित है। आनंद की प्राप्ति सुंदरम् की साधना का लक्ष्य है और सुंदरम् की यह साधना मनुष्य की इच्छाशक्ति की ही साधना है। इन इच्छाओं की संवेदना जितनी ही परिमार्जित एवं सुसंस्कृत अर्थात् सौंदर्यमयी होगी, कर्म उतना ही श्रेय से संयुक्त होकर शिवमय बन जाएगा। पतंजलि ने वाणी को 'कामधेनु' कहा है। वाणी के विलास से ही तमासावृत्त संसार प्रकाश से भर उठता है।

यदि प्राचीन साहित्य का थोड़ा परोक्ष करके अर्वाचीन साहित्य पर विचार करें तो जीवन और प्रकृति के निरीक्षण के साथ-साथ रवींद्रनाथ टैगोर ने ज्ञान-साधना के द्वारा अपने मन को खूब समृद्ध किया है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है—"रवींद्रनाथ पारस थे। जो कोई भी उनके संपर्क में आया, धन्य हो गया। उन्होंने अपने साहित्य में जो कुछ लिखा है, वही उनका जीवन था।···खंड-प्रेम और खंड नित्य प्रेम व सौंदर्य के साथ युक्त कर देखना रवींद्रनाथ की कल्पना का अन्यतम वैशिष्ट्य है। इसी कल्पना का उन्मेष कड़ी-ओकोमल में दिखाई देता है। रोमांटिक कल्पना का भी प्रारंभ यहीं से हो जाता है। रोमांटिक कल्पना का प्रधान वैशिष्ट्य है अंतर्निर्दिष्ट सौंदर्य व्याकुलता भाव-विह्वलता, एक अतृप्ति का स्वर, प्रकृति-सौंदर्य के प्रति चेतना, अतीत संधानी दृष्टि, इसका आभास हमें यही से मिलता है। यहीं सौंदर्य-व्याकुलता आगे चलकर सौंदर्य प्रेरणामूलक और विश्वात्म, बोधात्मक कविताओं में उत्सारित हो उठती है। कड़ी-ओ-कोमल में कवि सौंदर्य और प्रेम की लालसा सत्योग से ऊपर उठाने की चेष्टा करता है।"

सौंदर्यानुभूति और प्रेम-भावना का चित्रण रोमांटिक काव्य की महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है। रोमांटिकयुगीन अंग्रेजी काव्य एवं छायावादी हिंदी काव्य—दोनों में उक्त प्रवृत्ति प्रसूत परिमाण में प्रकट हुई है। वड्र्सवर्थ की सौंदर्य-भावना के अध्ययन के लिए हमें उनके प्रकृति संबंधी दृष्टिकोण पर विचार करना होगा, क्योंकि वड्र्सवर्थ मूलत: प्रकृति के कवि हैं। किंतु उनकी कविता में प्राकृतिक सौंदर्य के साथ मानवीय सौंदर्य की भी मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। बाल सौंदर्य पर कुछ पंक्तियाँ—

O blessed vision? happy child?

That art so exquisitely wild,

I think of the with many fears,

for what may be they lot in future years?

रोमांटिक पाश्चात्य कवियों में शैली और कीट्स की कविताओं में प्राकृतिक सौंदर्य की छवि-छटाएँ देखी जा सकती हैं। यद्यपि शैली की सौंदर्य-भावना पर प्लेटो का प्रचुर प्रभाव परिलक्षित होता है। फिर भी उसमें सौंदर्य की अति आदर्शीकृत रूप की व्यंजना हुई है। यानी शैली की सौंदर्य-भावना उसके आदर्शवाद से अनुप्राणित है तो कीट्स नारी की आकृति एवं प्रकृति के ब्राह्य सौंदर्य के प्रति अधिक आकृष्ट होने वाले कवि हैं। 'Ode to crecian urn' की रचना तक आते-आते कीट्स ने सौंदर्य और सत्य का तादात्म्य कर दिया। इस कविता में उन्होंने कहा कि सत्य ही सौंदर्य और सौंदर्य ही सत्य है, यह लोगों को ज्ञात है तथा यही चरम श्रेय है।

जबकि छायावाद की सौंदर्य-दृष्टि विषय प्रधान है, जिसे अंतर्दृष्टि का 'सौंदर्य दर्शन' कहा गया है। उसमें सौंदर्य दृष्टि की प्रधानता होती है। विषय जैसा होता है, उससे थोड़ा हटकर विषयी उस पर अपनी अनुभूति और कल्पना का प्रक्षेप करके उसे नए आयाम दे देता है। इसलिए दो स्तर बनाए गए हैं—वस्तुनिष्ठ और व्यक्तिनिष्ठ। वस्तुनिष्ठ सौंदर्य पदार्थ का स्थूल सौंदर्य है और व्यक्तिनिष्ठ सौंदर्य पदार्थ को देखती हुई द्रष्टा की आँखों का सौंदर्य है, वह द्रष्टा की आलोपलब्धि है, उसमें उसके निजी-राग का समावेश होता है।

छायावाद का कवि जलन में भी संतोष, सुख तथा तृप्ति का अनुभव करता है, यथा—

निर्मल जगती को तेरा मंगलमय मिले उजाला।
इस जलते हुए हृदय की कल्याणी शीतल ज्वाला॥ (आँसू)

'पल्लव' में कविवर पंत की पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

देखता हूँ, जब उपवन पियालों में फूलों को,
प्रिये भर-भर अपना यौवन पिलाता है मधुकर को। (पृष्ठ ६७)

प्रसादजी ने 'प्रेमपथिक' और 'लहर', विशेषकर 'प्रलय की छाया'

शीर्षक कविता में विरह के मर्मोद्‌गार को प्रकट किया है, उनका 'आँसू' तो विरहानुभूति की अत्यंत हृदयस्पर्शी रचना है, देखिए—

मेरी आहों में जागो सुस्मित में सोनेवाले
अधरों में हँसते-हँसते आँखों से रानेवाले
इस स्वप्नमयी संस्कृति में सच्चे जीवन तुम जागो
मंगल किरणों से रंजित मेरे सुंदरतम जागो (आँसू, पृष्ठ ७४)

निराला के विरह हृदय को तो उनका प्रिय जीवन में प्रभात जगाता-सा दिखाई देता है—

ऊषा सी क्यों तुम कहो, द्विदल सुप्त पलकों पर कोमल हाथ
फेरती हो रक्षित मंगल, जगा देती हो वही प्रभात
वही सुख, वही भ्रमर गुजार, वही मधुगलित पुष्प संसार। (अपरा, पृष्ठ १२२)

विरह की वेदना मतादेवी के काव्यों का प्रमुख स्वर है। वे विरह-भावना की अमर गायिका हैं। उनकी प्रेमानुभूति में विरह-भाग ही मुख्य है। पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात?
वेदना में जन्य करुणा में मिला आवास,
आयु चुनती दिवस इसका, आयु गिनती रात
जीवन विरह का जलजात। (यामा, पृष्ठ १३८)
और यह कि-नयन में जिसके जलद वह तृषित चातक हूँ,
शालभ जिसके प्राण में वह निठुर दीपक हूँ। (वही, पृष्ठ १३९)

छायावादी कवि और कविता की परवर्ती कुछ कवियों की कविताओं में विरह-भावना और उसके परिप्रेक्ष्य में सौंदर्य की प्रभावी अभिव्यक्ति हुई है। इन कविताओं का सौंदर्य-बोध व प्रेम-भावना ऊपरी या सतही प्रतीत नहीं होता। मैथिलीशरण गुप्त (शकुंतला-यशोधरा) जानकीवल्लभ शास्त्री, दिनकर (उर्वशी और कुरुक्षेत्र), धर्मवीर भारती (अंधायुग), नीरज, वीरेंद्र मिश्र, कीर्ति चौधरी, जीवन प्रकाश जोशी कृत 'हृदयावेश' 'आग और आकर्षण' की कविताएँ विशेष गौरतलब हैं तो डॉ. राहुल की 'एक झलक' और मिट्‌टी की संवेदना की कविताएँ सौंदर्य-बोध का विशिष्ट दृष्टांत हैं—

निर्जन रजनी में वरुणा सरिता को पार किए जब,
कौतूहल लेकर आते हम देख मगन होते तब।

इसी प्रकार 'माँ' कृति की पंक्तियाँ गहरी वेदनापूर्ण हैं। कवि के वेदना-भाव के मूल में अनेक कारण हैं। प्रथम कारण तो व्यक्तिगत जीवन का आर्थिक अभाव, असंतोष, अपनों का कुंठित-घृणित व्यवहार, आक्षेपों और निराशा की भावना के बीच खुशियाँ व्यंजित हुई हैं, मगर बिना व्यक्तिगत पक्ष को समझें डॉ. राहुल के सौंदर्य-बोध को नहीं समझा जा सकता। देखिए—

आया वसंत का मौसम सरसों, अलसी, तृण फूले,
लग गए बौर आमों में, फूलों पर भौंरे झूले।
पीला परिधान पहनकर दिखती है धरा वधू-सी,

इस अंक के चित्रकार

राजेंद्र परदेसी

राजेंद्र परदेसी सुपरिचित लेखक एवं चित्रकार हैं। इनके रेखांकन विभिन्न लघु पत्रिकाओं में लगातार प्रकाशित हो रहे हैं। इनके रेखांकनों में भारतीय कला-परंपरा और यूरोप की आधुनिक कला-दृष्टि का खूबसूरत समावेश दिखाई पड़ता है।

संपर्क : ४४ शिव विहार, फरीदी नगर
लखनऊ-२२६०१५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१५०४५५८४

खुशियों का आलम फैला, बाधाएँ उड़ीं ज्यों भूखी।
खतों से वन-बागों तक दीखता रंग फूलों का,
वीणा के झंकृत स्वर में श्रृंगारिक हो हूलों का। (पृष्ठ ६२)

रूप-सौंदर्य के साथ भाव-सौंदर्य का विश्लेषण किया जाना समीचीन होगा। डॉ. संजीव कुमार की उच्छ्‌वास कृति में नई अनुभूति और प्रकृति के सौम्य सौंदर्य की रूपाभिव्यक्ति हुई है। यथा—

सजल लोचनों ने महका दीं
दीपशिखा मतवाले मन की।
कितने मोती व्यर्थ बिखेरते
पलकों पर घन जब-जब तिरते
अब चुन-चुन पलकों से जलकण
दीप हृदय में हँस-हँस जलते।

उनकी मालविका, स्वप्नदीप, अंतरा, ऋतंभरा, ज्योत्स्ना के अतिरिक्त अन्य कृतियों में प्रकृति-सौंदर्य की मार्मिक झाँकी दिखाई देती है। कइयों में शैली की तरह विरह-वेदना के भाव भी गौरतलब है। मगर दृष्टांत न देकर कहना चाहूँगा कि समकालीन किन्हीं अन्य कवियों की रचनाओं में करुणा और प्रकृति-परिवेश की व्यंजकता है। इनमें मानववाद की समग्र अभिव्यक्ति भी प्रकृति के माध्यम से हुई है। संक्षेप में यह कि प्राय: सभी कवियों की प्रेम, प्रकृति, सौंदर्य संबंधी कविताओं में राग और कल्पना की प्रधानता है। रूप और कल्पना की परिणति रागात्मक संवेदना को प्रगाढ़ करने में होती है। यों कहें कि अनुभूतियों के आधार पर जो सौंदर्य-बोध खड़ा होता है, उसमें हमारे मन की अद्‌भुत शक्ति होती है।

बी-४०१, चितरंजन पार्क
नई दिल्ली-११००१९

पहेलियाँ

बाल-पहेलियाँ

• माणिक तुलसीराम गौड़

: एक :

टिक-टिककर जो याद दिलाती
समय बड़ा होता अनमोल,
व्यर्थ गँवाओ इसे कभी ना
कौन इसे सकता है तोल।
चलती रहती बिना रुके यह
कभी नहीं करती विश्राम,
इसके ही कारण होते हैं
ठीक समय पर सारे काम।

: दो :

देव गणेश की तुम सवारी
हमारे घर भी आना,
लड्डू पेड़ा मोदक का भोग
बड़े प्रेम से पाना।
बस थोड़ी सी कृपा हम पर
सदा बनाए रखना,
बिस्तर, पुस्तक, कपड़ों को
तुम कुतर मत देना।

: तीन :

मेरे घर में दूध-मलाई
दही-मक्खन का ढेर,
फिर भी वह घर न आती
बहुत लगाती देर।

मैंने कहा घर में चूहे हैं
अब तो आजा बाई,
इतना सुनते ही किसने
सरपट दौड़ लगाई?

: चार :

जब तुम जाओ पढ़ने बच्चो
रखो चेहरे पर मुसकान,
हँसते-हँसते जब जाओगे
सभी काम होंगे आसान।
शिक्षक मित्र हमारे होते
हमको देते हैं वे ज्ञान,
जहाँ मिले ये सुविधा सारी
कहो कौन सा है वह स्थान?

: पाँच :

काम निरंतर करती रहती
नहीं किसी से डरती,
यहाँ-वहाँ से कण-कण ले जा
बिल के अंदर भरती।
जीव बहुत ही छोटा है यह
पर है हिम्मत वाला,
नहीं आँख होती है इसके
लगा जीभ पर ताला।

: छह :

बड़ा रसीला मैं फल होता
भीतर गुठली वाला,
बच्चे-बूढ़े सभी चूसते
मेरा स्वाद निराला।
पेड़ों पर मैं लटका रहता
कोयल गीत सुनाती,
मैं फलों का राजा कहलाता
कई किस्म हैं आती।

: सात :

जब भी ऋतु वर्षा की आती
हमको बहुत सुहाती,
टर्र-टर्र कर हम पुकारें
जब भी यह ऋतु आती।
हम जल-थल दोनों में रहते
कीट-पतंगे खाते,
सर्दी में हम छुप जाते हैं
बोलो क्या कहलाते?

: आठ :

भाई-बहनों के रिश्तों का
होता यह त्योहार,
प्रेम-डोर में बँध जाता है
इन दोनों का प्यार।
बिन बहन के आँगन सूना
सूना मन का कोना,
यह त्योहार हमें सिखाता
बीज प्रेम के बोना।

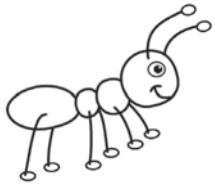

सुपरिचित लेखक। अब तक दस पुस्तकें प्रकाशित। कई पुरस्कारों तथा सम्मानों से सम्मानित। संप्रति सेवानिवृत्त बैंक कार्यपालक। अब स्वतंत्र लेखन।

: नौ :

कहते मुझे जंगल का राजा
तनहा जिंदगी जीता हूँ,
ऊपर से मैं रोब दिखाता
अंदर कितना रीता हूँ।
मेरा भी मन करता यारो
मैं संग तुम्हारे गाऊँ,
तुम सबको परिवार मानकर
तुम संग मैं पर्व मनाऊँ।

: दस :

पिताश्री के छोटे भाई
हमारे क्या वे लगते हैं,
गरिमामय उनका रिश्ता
पिता तुल्य वे होते हैं।
सारे बच्चे बड़े स्नेह से
उनके कंधे चढ़ जाते,
उनका स्नेह पाकर वे
बड़ी खुशी से इतराते।

२४७, दूसरी मंजिल, नौवीं मैन
शांतिनिकेतन लेआउट अरेकेरे,
बेंगलुरु-५६००७६
दूरभाष : ८७५२९१६९२७

१. घड़ी, २. चूहा, ३. बिल्ली, ४. पाठशाला, ५. चींटी, ६. आम, ७. मेढक, ८. रक्षाबंधन, ९. शेर, १०. चाचा।

राम झरोखे बैठ के

सामंती संस्कार बनाम आधुनिक तकनीक

● गोपाल चतुर्वेदी

हमें आज भी कनॉट प्लेस का किनारे का वह कोना याद है, जहाँ वह तथाकथित ज्योतिषी पिंजड़े के तोते को साथ-साथ लेकर बैठते थे। न कोई बोर्ड, न विज्ञापन। बस सामने एक कपड़े पर कुछ लिफाफों की ओर ध्यान जाता। जिसके मन में उत्सुकता हो, वह रुके, नियत फीस चुकाए, पिंजड़े से श्रीमान तोते बाहर पधारें और चोंच से एक लिफाफा उठाएँ, ज्योतिषी को सौंपे और अपने शरण्य-स्थल में लौट लें। एक से अधिक ग्राहक हों तो लिफाफा जिज्ञासु को ही सौंप दिया जाता था। कहीं उसकी निजी सूचना सार्वजनिक न हो जाए? यह भी संभव है कि तोता-स्वामी काला अक्षर भैंस बराबर रहे हों? तोते को पालने और प्रशिक्षित करने में कौन डिग्री की दरकार है? यों डिग्रीधारी भी रोजगार दफ्तर की शोभा बनने के अलावा कौन से अन्य तीर मार रहे हैं? उनके माता-पिता ने भी डिग्री 'खरीदने' में उनका पूरा सहयोग किया है। बी.ए., एम.ए. से दहेज की राशि में इजाफा जो होता है। कौन कहे, सरकारी नौकरी का जुगाड़ भी 'फिट' हो जाए, नहीं तो खानदानी परचून की दुकान या चाय का पुश्तैनी ठेला तो है ही रोजगार का सहारा।

भविष्य जानने की उत्सुकता एक मानवीय दुर्बलता है। बड़े-से-बड़े और छोटे-से-छोटे इनसान में इसका पाया जाना कोई अजूबा नहीं है। बस माध्यम और पैसे का अंतर है। कुछ फटेहाल तोते पर निर्भर हैं, कुछ समृद्ध प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्यों पर। ऐसे आवश्यक नहीं है कि दोनों में से एक भी सही भविष्यफल बताए? यह उन दिनों की दुघर्टना है, जब हम पढ़ते थे। कोई कॉलेज में पढ़ाई करे और इश्क से बचा रहे, ऐसा कम ही होता है। हम भी कोई अपवाद न थे। कोई भी सुंदर लड़की दिखी नहीं कि हम उससे इकतरफा प्रेम में आबद्ध हो जाते। जैसा स्वाभाविक है, बहुधा हमें निराशा ही हाथ लगती। यह तो बाद में खयाल आया कि पेशेवर मजनू बनने के पहले आदमी को अपनी शक्ल शीशे में देख लेनी चाहिए। दिक्कत यही है कि आईना तो झूठ नहीं बोलता है, पर उसमें झाँकनेवाले का आकलन वस्तुनिष्ठ नहीं होना संभव है। हमें न अपनी पिचकी नाक नजर आती, न इधर ताकती उधर निशाना लगाती आँखें। एक बार हमें खयाल आया कि न सही कैंटीन की चाय, तोते से ही इश्क का नतीजा क्यों न पूछ लें? हमने तोता-स्वामी के यहाँ हाजरी लगाई। तोते ने जो लिफाफा उठाया, उसका भविष्य रोचक था, 'आपके छह कन्या-रत्नों के पिता बनने की संभावना है।' हमने अपना सिर पीट लिया।

वक्त के साथ विज्ञान और तकनीक ने तरक्की की है। अब न तोता भविष्य बाँचता है, न ज्योतिषाचार्य। आजकल 'लैप-टॉप' का जमाना है। वर्तमान पंडित कंप्यूटर-सज्जित हैं। वह उसी में ग्रह, दशा की गणना कर 'कल' का हिसाब लगाते हैं। ऐसा नहीं कि भविष्य-वक्ता की गुणवत्ता में कोई अंतर पड़ा है। अतीव की भाँति अब भी ज्योतिष संभावनाओं का सौदा है। जो फर्क पड़ा है, वह सिर्फ इतना है कि तोता और उसके स्वामी तथा पारंपरिक ज्योतिषी की जीविका जाती रही है। तोता स्वामी चिड़ियों की खरीद-फरोख्त के धंधे में हैं और ज्योतिषी सस्ते ग्राहक फँसाने की तलाश में। उनके परिवारों के बुरे दिन आ गए हैं। दूसरों का क्या, वह अपना खुद का भविष्य आँकने में असफल रहे हैं। जैसे कोई डॉक्टर दूसरों का इलाज करे और अपने असाध्य रोग से अनजान रहे।

हमें लगने लगा है कि यह जो अतीत की कंप्यूटर क्रांति है, उसने रोजगार पर दुष्प्रभाव डाला है, जहाँ फैक्टरी में सौ की दरकार थी, इधर दस से काम चल जाता है। सरकार में भी परिवर्तन आ रहा है। उसके दफ्तर अरसे से कामचोरों की आरामगाह रहे हैं, अब कर्मचारियों के सामूहिक संतोष में खलल पड़ा है। वह अचानक मेज पर खर्राटे भरते-भरते चौंक जाते हैं, कहीं कंपू कंबख्त न आ जाए? उनके कल्याण को प्रतिबद्ध कर्मचारी-यूनियन अभी से राष्ट्रव्यापी आंदोलन छेड़ने पर उतारू है। हर दिन जो नई-नई तकनीक आ रही है, यह भविष्य की भर्तियाँ न चौपट कर दे? ऐसे भी देखने में आया है कि रिक्त पदों को भरना सरकार आवश्यक नहीं समझती है। इन खाली पदों के चलते भी कार्य-कुशलता में कोई फर्क नहीं पड़ा है। जैसी पहले थी, वैसी ही बेढंगी चाल अब भी है। कुछ का निष्कर्ष है कि बदतरी की भी एक

सीमा होती है, अब उससे अधिक बदतर होना मुमकिन नहीं है। कुछ को डर है कि सरकार में काहिली के ऐसे कीटाणु हैं कि उन्होंने तकनीक को समन्वित किया तो उससे भी कामचोरी का खतरा है? वह भी बिना बख्शीश के टस-से-मस न हो तो कार्य-निष्पादन का क्या होगा? जब भी कोई काम आए, वह रख-रखाव का खर्चा माँगे? आजकल भारत में न मौसम का भरोसा है, न इनसान का तो मशीन का कैसे हो? कौन कहे कि भारत का बाबू इतना प्रभावी है कि मशीन को भी प्रदूषित करने में समर्थ है।

यह जो एक खोज है, जिसे 'आर्टिफिशियल इंटैलिजेंस' (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) कहते हैं, उसके खतरे हर कार्यलाय पर मँडरा रहे हैं। क्या पता, कोई ऐसी तकनीक बने जो टैंडर से लेकर प्रमोशन तक के निर्णय, तय मानकों के अनुसार लेने में समर्थ हो? इस खतरे के बारे में अधिकारियों को सतर्क रहने की आवश्यकता है, कहीं उनके रहे-सहे अधिकारों की भी अचानक कटौती हो जाए और उन्हें खबर तक न लगे? यों हमें यकीन है कि अगर ऐसा हुआ तो पदोन्नति न मिलने पर अधिकारियों पर व्यक्तिगत पसंद-नापसंद की तोहमत लगानेवाले और दुखी होंगे। हमें उनसे हार्दिक हमदर्दी है। हर असफलता के लिए ऐसों ने दूसरों को दोष दिया है। उन्हें इस स्वर्णिम अवसर का न उपलब्ध होना हद दर्जे की नाइनसाफी है। दुखद है कि इस अन्याय का कोई प्रतिकार भी नहीं है। हमें विश्वास है कि वह कृत्रिम बुद्धिमत्ता को दोष देने से चूकेंगे नहीं, पर मशीन तो मशीन है। उसके कौन दिल है, जो उसकी पसंद-नापसंद का सवाल हो? कृत्रिम बुद्धिमत्ता को अपराधी ठहराना उनकी अपनी विश्वसनीयता को ही घटाएगा। हमारे एक मित्र हैं। आजतक वह विवाह हो या जन्मदिन का समारोह, कहीं भी समय से नहीं पहुँचे हैं। आते ही वह मेजबान से पीड़ित मुद्रा में फरमाते हैं कि क्या करें, सारी गलती स्कूटर की है। पता नहीं, इसमें क्या तकनीकी समस्या है, हर दस मिनट बाद खुद-ब-खुद ठप्प हो जाता है? हर मेकैनिक कोशिश करके हार चुका है। समस्या है कि वहीं की वहीं टिकी है, अंगद के पाँव की तरह।

अब तक अपनी अक्ल में आ गया है कि ऐसे लाइलाइज हैं। एक बार जो बहाना बनाया तो वह स्थायी हो जाता है। कौन बार-बार नए बहाने के लिए बुद्धि पर जोर दे। जैसे प्रश्न तकनीकी समस्या का है, वहाँ मेकैनिक कर ही क्या सकता है? ऐसे यह तो उन्हें कोई समझाने से रहा कि वह निर्माताओं को इस तकनीकी खामी की सूचना दे, शायद वह ही अपने निर्माण में कुछ सुधार कर सकें। गौबेल्स का सिद्धांत है कि झूठ बार-बार दोहराने से सच लगने लगता है, बहानेबाजी पर भी लागू है। स्कूटर के साथ तकनीक जोड़ देना उनकी लेट पहुँचने की बहानेबाजी को स्तरीय बनाता है। कोई उनकी बहानेबाजी पर विश्वास करे न करे। न करे तो कर ही क्या सकता है, जब भारत सरकार उनके लेट आगमन को वर्षों से बर्दाश्त करती आ रही है, बिना उफ किए? असलियत यह है कि सरकार में बहाने बनाने के विशेषज्ञ हैं। कभी उनका पेट पिराता है, कभी मुंडी। कभी-कभार तो उन्हें यह संशय है कि फाइल से संबद्ध एक और फाइल है, जो न जाने कहाँ गायब है? वह पूरे एक सप्ताह से कैंटीन के रिकॉर्ड रूम में उसकी खोज में लगे हैं, पर वह गुम की गुम है। यानी वह औपचिरक बहानेबाजी में रिकॉर्ड रूम गए हैं, और असलियत में कैंटीन में। उन्हें संदेह है कि कहीं उस फाइल के पैर तो नहीं लग गए हैं और वह इंडिया गेट घूमने जाकर उसके पश्चात् किसी कर्मचारी के साथ, उसकी चार्टर्ड बस पकड़कर, सरोजनी या नेताजी नगर तो नहीं सिधार गई है? यह विशिष्ट बहानेबाजी है। इसमें सब संभव है। ऐसे हमें प्रतीत होता है कि लेट-लतीफी और बहानेबाजी के अध्याय सरकारी मशीन को मानवीय बनाते हैं, वरना मशीन तो केवल मशीन है। न उसमें इनसान की गुजर है, न इनसानियत की।

दुनिया की मान्यता है कि भारत एक ऐसा विकासशील देश है, जो विकसित होने की दिशा में अग्रसर है। जाहिर है कि यदि ऐसा है तो जीवन के हर क्षेत्र में तकनीक की तादाद और बढ़ेगी। अभी तो हम केवल स्मार्ट सिटी की चर्चा सुनते हैं, इससे क्या होगा, यह एक ऐसा रहस्य है, जो शायद ही किसी को ज्ञात हो? सरकार हो या उसके कर्मचारी-अधिकारी, सब बहुत ही ज्ञानी अंदाज में 'स्मार्ट सिटी' का नाम सुनकर सिर हिलाते हैं। कोई उनसे कैसे पूछें कि इसके मानक क्या-क्या हैं? फिलहाल तो लगता है कि एल.ई.डी. की लाइट लगाना शहर में रोशनी के लिए या चौराहों की सजावट करना ही स्मार्ट सिटी के अनिवार्य अंग हैं।

दुनिया की मान्यता है कि भारत एक ऐसा विकासशील देश है, जो विकसित होने की दिशा में अग्रसर है। जाहिर है कि यदि ऐसा है तो जीवन के हर क्षेत्र में तकनीक की तादाद और बढ़ेगी। अभी तो हम केवल स्मार्ट सिटी की चर्चा सुनते हैं, इससे क्या होगा, यह एक ऐसा रहस्य है, जो शायद ही किसी को ज्ञात हो? सरकार हो या उसके कर्मचारी-अधिकारी, सब बहुत ही ज्ञानी अंदाज में 'स्मार्ट सिटी' का नाम सुनकर सिर हिलाते हैं। कोई उनसे कैसे पूछें कि इसके मानक क्या-क्या हैं? फिलहाल तो लगता है कि एल.ई.डी. की लाइट लगाना शहर में रोशनी के लिए या चौराहों की सजावट करना ही स्मार्ट सिटी के अनिवार्य अंग हैं। हमें यह भी शक होता है कि शहर की सफाई स्मार्ट सिटी का अंग है कि नहीं? हर महत्त्वपूर्ण चौराहे पर कूड़े का ढेर है। धीरे-धीरे उसने टेकरी की हैसियत हासिल कर ली है। कहीं नगर निगम का यह इरादा तो नहीं है कि धीरे-धीरे कूड़े का पहाड़ बनाया जाए? क्या पता, उनकी महत्त्वाकांक्षा कचरे का एवरेस्ट सृजित करने की हो? कौन कहे, राम मंदिर के समान अलौकिक पर्यटक आकर्षण के साथ

वह कूड़े के गँधाते हिमालय का बदबूदार नमूना भी पेश करना चाहते हों? कहीं उन्हें यह भय तो नहीं सता रहा कि शहर की सफाई सफाईकर्मियों के वश की नहीं है? इसके लिए लंदन, न्यूयॉर्क से सफाई की मशीनों की दरकार है? ऐसी मशीनों का आयात ही सफाई का इकलौता निदान है। हमारे शहर सुविधाओं में भले नहीं, पर आबादी में कौन लंदन, न्यूयॉर्क से कम हैं? जाहिर है कि इस आयात से सफाईकर्मियों की संख्या का भी सफाया होगा। तब भी कचरे के पहाड़ समतल नहीं हुए तो इस विषय में सोचा जाएगा। अभी तो मशीनों के आयात का इंतजार है। तकनीक की तरक्की से कर्मचारियों की तादाद घटना-ही-घटना। इनके भविष्य का सोचना नगर-निगम का दायित्व नहीं है। सरकार का कोई ज्ञानी तक यह भी नहीं जानता है कि यह किस का दायित्व है?

हर प्रधानमंत्री इतिहास में स्थान पाने को कोई पहल करता है। जवाहरलालजी ने सार्वजनिक निगम बनाए, बड़े उद्योगों का सूत्रपात किया। इंदिराजी ने 'गरीबी हटाओ' की प्रेरक घोषणा की। यदि गरीबी कांग्रेस की कोई लीडर होती तो उनके आह्वान पर शर्तिया अमल करती। दुर्भाग्य से इसका ताल्लुक अर्थशास्त्र से है। वह बेरोजगारी और नियत दर से कम मजदूरी जैसे शोषण पर निर्भर है। अर्थशास्त्र सियासत की कम ही सुनता है। लिहाजा गरीबी हटी नहीं, उल्टे मुल्क की बड़ी आबादी की नियति बन गई है। कुछ का कहना है कि व्यापक निर्धनता की नियति सरकार में फलते-फूलते भ्रष्टाचार का नतीजा है। ऐसा मानना न मानना व्यक्ति की दलीय निष्ठा पर आधारित है। जब देश में सामंतवादी दृष्टिकोण हो, तब प्रजातंत्र में परिवारवाद का प्रचलन स्वाभाविक है। जनता को एक परिवार के राजा, युवराज, रानी वगैरह की आदत है, तो वह सामान्य को भी शाही परिवार बनाने से नहीं चूकती है। कोरोना के समान यह पारिवारिक प्रदूषण माहौल में तैरता है। आज देश के प्रजातंत्र में ऐसे ही परिवार छाए हुए हैं। कुछ उभर चुके हैं, कुछ उभरने की प्रक्रिया में हैं।

बहरहाल इंदिराजी के सियासी वारिस संजय गांधी एक हवाई दुर्घटना के शिकार होने के बाद प्रजातांत्रिक सिंहासन पर कोई-न-कोई गांधी को ही विराजना था। यही इकलौता कारण था कि श्रीमती गांधी के बड़े पायलेट पुत्र राजीव गांधी को इस पद के लिए चुना गया। सामंती मानसिकता का यह एक उत्कृष्ट उदाहरण है कि संसदीय चुनाव में कांग्रेस को अभूतपूर्व सफलता मिली राजीव गांधी के नेतृत्व में। देश की सत्ता के कंपूकरण में उनके योगदान से कोई इनकार नहीं कर सकता है।

बहरहाल इंदिराजी के सियासी वारिस संजय गांधी एक हवाई दुर्घटना के शिकार होने के बाद प्रजातांत्रिक सिंहासन पर कोई-न-कोई गांधी को ही विराजना था। यही इकलौता कारण था कि श्रीमती गांधी के बड़े पायलेट पुत्र राजीव गांधी को इस पद के लिए चुना गया। सामंती मानसिकता का यह एक उत्कृष्ट उदाहरण है कि संसदीय चुनाव में कांग्रेस को अभूतपूर्व सफलता मिली राजीव गांधी के नेतृत्व में। देश की सत्ता के कंपूकरण में उनके योगदान से कोई इनकार नहीं कर सकता है।

तकनीक की तरक्की उनके समय से ही प्रारंभ हुई है और देखते-देखते बचपन से जवान हो चुकी है। उनके वंशज जो सरकारी नौकरी के घटने की व्यथा-कथा सुनाते हैं, वह स्वयं अपने खानदान के निकट इतिहास से अपरिचित हैं। यों उनके अपरिचय के इतने दायरे हैं कि उनकी बात करना उतना ही व्यर्थ है जितना किसी व्यक्ति का समुंदर को चुल्लू में खाली करने का प्रयास। अगस्त्य मुनि होना सबके बस में नहीं है। ऐसे कहने को वह एक महान् नेता हैं, जिनकी चुनाव हारने में महारत है। वर्तमान शासन की चुनौती है कि वह देश को विकसित करे। केवल विकासशील से संतुष्ट न होकर वह मुल्क को विकसित देशों की अग्रणी पाँत में लाए। इन हालात में तकनीक का बढ़ता प्रयोग लाजिमी होता जा रहा है, साथ ही सरकारी रोजगार की घटती संख्या भी। निजी रोजगार का यह आलम है कि वर्तमान में निर्माण क्षेत्र में भी कुशल व प्रशिक्षित कर्मियों की ही गुजर है।

खेती-किसानी की प्रधानता से भारत एक ऐसा जनतंत्र है, जिसे 'हलतंत्र' भी निरूपित किया जा सकता है। ट्रैक्टर, पानी के पंप आदि से वहाँ भी नए प्रयोग का जोर है। गाँवों से शहर का पलायन एक अनिवार्य विवशता है। खेती-किसानी से सबकी गुजर नहीं है। कुछ के पास जमीन है, कुछ की फसल सबका पेट पालने में समर्थ है। शहर उनका स्वागत अपने अंदाज में करते हैं, उनके शोषण में व्यस्त होकर। ऐसों में कुछ मेहनत-मजदूरी करते-करते चल बसते हैं, कुछ रिक्शा चलाते-चलाते। फिर भी पेट पालना एक स्वाभाविक विवशता है। वरना कहाँ गाँव की खुली हवा, कहाँ शहर का जहरीला वातावरण!

देश के चिंतक-वर्ग को आज के हालात हलतंत्र को प्रजातंत्र में बदलना है। कैसे तकनीकी प्रगति भी हो और आम आदमी को रोजगार भी मिले, वह भी ऐसा कि उससे उसका ही नहीं, परिवार का पेट भी पले। यदि कहीं बेरोजगारी में वृद्धि हुई तो सबसे बड़ा प्रश्नचिह्न कानून व्यवस्था पर ही लगता है। कल के शांति के पुजारी आज के शातिर चंकू-किंग के हिंसक अवतार में नजर आते हैं, जिनसे मोहल्ला ही नहीं, पूरा शहर भी थर-थर काँपे।

इसे भारत का ही कमाल कहेंगे कि यहाँ अतीत के सामंतवाद की सौगात, परिवारवाद और आधुनिकतम तकनीक साथ-साथ पल ही नहीं रहीं, प्रगति भी कर रही हैं।

९/५, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

स्वामी विवेकानंद का प्रेरक साहित्य

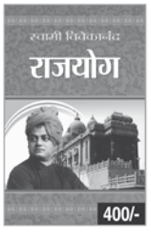

कर्मयोग	300.00
प्रेमयोग	250.00
भक्तियोग	200.00
ज्ञानयोग	400.00
योद्धा संन्यासी विवेकानंद	450.00
विवेकानंद के सपनों का भारत	250.00
ज्ञानमार्ग कर्मयोगी स्वामी विवेकानंद	450.00
विवेकानंद तुम लौट आओ	350.00
विवेकानंद और राष्ट्रवाद	300.00
विश्ववंद्य विवेकानंद	300.00
ज्योतिपुंज विवेकानंद	400.00
खेतड़ी नरेश और विवेकानंद	250.00
विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन	300.00
स्वामी विवेकानंद के जीवन की कहानियाँ	300.00
विश्व धर्म सम्मेलन	400.00
मैं विवेकानंद बोल रहा हूँ	350.00
स्वामी विवेकानंद : प्रसिद्ध दार्शनिक, अनजान कवि	400.00
1000 स्वामी विवेकानंद प्रश्नोत्तरी	350.00
युगदृष्टा विवेकानंद राजीव रंजन	400.00
Swami Vivekananda Quiz Book	400.00
A Patriot Monk Swami Vivekananda	350.00
Wisdom of Vivekananda	200.00
NAREN : The Man and Spirit of Vivekananda	400.00
Swami Vivekananda Torch Bearer of the Master-Disciple Tradition in India	300.00
The Life and Times of Swami Vivekanand	300.00
The Master As I Saw Him	400.00
Meditation and Its Methods	250.00

डॉ. कलाम का प्रेरक साहित्य

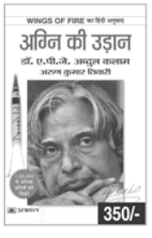

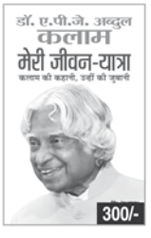

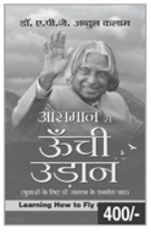

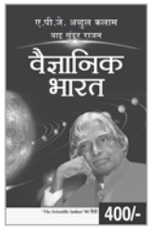

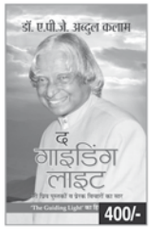

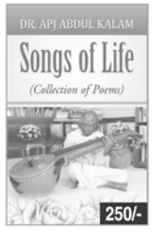

मेरा भारत	400.00
कलाम का बचपन	250.00
कलाम को सलाम	400.00
डॉ. कलाम के सपनों का बिहार	400.00
भारत 2020 और उसके बाद	350.00
आओ बच्चो! आविष्कारक बनें	400.00
मिशन इंडिया	300.00
भारत भाग्य विधाता	300.00
क्या हैं कलाम?	400.00
प्रेरणा पुंज कलाम	250.00
जाग्रत भारत, श्रेष्ठ भारत	400.00
जीवन वृक्ष	300.00
वैज्ञानिक संत डॉ. कलाम	400.00
डॉ. कलाम गुरु ज्ञान	400.00
स्वप्नद्रष्टा डॉ. कलाम की जीवनगाथा	400.00
कलाम, तुम लौट आओ	500.00
अदम्य उत्साह	350.00
मेरा देश बदल रहा है	350.00
सुखी परिवार समृद्ध राष्ट्र	400.00
खुशहाल व समृद्ध विश्व	600.00
मेरे सपनों का भारत	400.00
प्रेरणा की उड़ान	200.00
हमारे पथ प्रदर्शक	300.00
हम होंगे कामयाब	250.00
कलाम की आत्मकथा	500.00
महाशक्ति भारत	250.00
तेजस्वी मन	200.00
विजयी भव	350.00
करिश्माई कलाम	350.00
मैं कलाम बोल रहा हूँ	300.00
कलाम सर के सक्सेस-पाठ	400.00
You are Born to Blossom	300.00
Guiding Souls	300.00
Creating A Livable Planet	350.00
Enlightened Minds	300.00
Kalam Inspires	500.00
Dr. A.P.J. Abdul Kalam	400.00

प्रभात प्रकाशन
नवनूतन प्रकाशन की गौरवशाली परंपरा
इ-मेल : prabhatbooks@gmail.com

4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23257555
हेल्पलाइन नं. 7827007777

या विद्या सा विमुक्तये

● **वीरेंद्र जैन**

पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, आराम बाग, नई दिल्ली में महाविद्यालयीय श्लोक अंताक्षरी प्रतियोगिता। दिल्ली विश्वविद्यालय संस्कृत विभाग के स्नातकोत्तर और विद्यावारिधि के शोधार्थियों सहित दि.वि.वि. से संबद्ध महाविद्यालयों की स्नातक, स्नातकोत्तर कक्षाओं के दो-दो छात्र भागीदारी करने हेतु आमंत्रित किए गए। समंतभद्र संस्कृत महाविद्यालय ने मुझे और मुन्ना को प्रतिभागी बनाकर भेजा।

सांध्यकालीन समंतभद्र में हम पूर्व मध्यमा और प्रथमा के छात्र थे। दिन में स्कूल में नौवीं और सातवीं के। इस कॉलेज के शिक्षार्थी विजय कुमार आनंद सागर छात्रावास में रहते थे। उन्हें भी समंतभद्र में संस्कृत कक्षाओं का शिक्षार्थी होना अनिवार्य था। इस प्रतियोगिता का आमंत्रण-पत्र प्राचार्यजी को सौंपते समय उन्होंने बताया था कि अंत्याक्षरी का संचालन भी वही करेंगे।

श्लोक अंत्याक्षरी चलवैजयंती प्रतियोगिता के निर्णायक प्रकांड संस्कृतज्ञ प्रज्ञाचक्षु डॉ. इंद्रचंद्र शास्त्री और आचार्य मंगलदेव थे। हमने नतमस्तक हो उन्हें प्रणाम किया और अपने से बहुत बड़े-बड़े प्रतियोगियों से बिना विचलित हुए, निर्दिष्ट आसन पर पहुँचकर विश्राम लिया।

संचालक ने जानकारी दी, वर्णक्रम से दो महाविद्यालयों के प्रतिभागी युगल आएँगे। जो अपनी बारी पर श्लोक नहीं बोल सकेगा, उसे मंच छोड़ना होगा। अकारादिक्रम से अगला युगल मंच पर आता रहेगा। प्रतिभागी युगल अपनी बारी आने पर श्लोक-दर-श्लोक सुनाता रहा तब भी निश्चित कालावधि के बाद उसे भी मंच छोड़ना होगा, ताकि सबको अवसर मिल सके। कालांश समाप्ति के कारण मंच छोड़नेवाले प्रतिभागी अधिक हुए तो विजेता का चयन प्रत्युत्पन्नमति, गति, उनके उच्चारण, त्वरितता, उनकी कक्षा आदि ध्यान में रखकर लिया जाएगा।

क्रम अ से आरंभ हुआ। हम अंतिम से पहले प्रतिभागी (हंसराज कॉलेज से पूर्व समंतभद्र) होते सो विश्रामी मुद्रा में ही बने रहे। उधर प्रतिभागी युगल निर्धारित कालावधि से पहले ही मौन हो अपने आसन पर आ विराजते रहे।

हमारी बारी आने पर दूसरे छोर से तो प्रतिभागी युगल आते-जाते रहे पर हम दोनों डटे रहे। हमारी कालावधि पूरी होने पर निर्णायकों ने निश्चित कालावधि का नियम निरस्त कर दिया। हमें प्रतिभागी बने रहने की छूट दे दी गई।

जाने-माने लेखक-पत्रकार। अटलजी की पुस्तकों 'संसद में तीन दशक', 'मेरी संसदीय यात्रा', 'संकल्प काल' और 'गठबंधन की राजनीति' में संपादन सहयोग। प्रमुख कृतियाँ हैं–'शब्द-बध', 'सबसे बड़ा सिपहिया', 'डूब', 'पार', 'पंचनामा', 'तीन दिन दो रातें' (उपन्यास); 'भार्या', 'बीच के बारह बरस' (कहानी-संग्रह); 'बहस बीच में', 'रचना की मार्केटिंग' (व्यंग्य-संग्रह), हास्य-कथा बत्तीसी (बाल-कथाएँ)।

कई दौर पूरे हुए पर कला संकाय या कॉलेजों के प्रतिभागी युगल हमें आसन तक वापस भेजने में समर्थ न हो सके। होते भी कैसे! हमें तो अमरकोश, हितोपदेश, रघुवंश, भक्तामर स्तोत्र, महावीराष्टक, रत्नकरण्य श्रावकाचार सहित जाने कितने तो ग्रंथ और स्तुतियाँ कंठस्थ थीं।

यकायक उसी कॉलेज के संस्कृत प्राध्यापक गोस्वामीजी मंच तक आए। विजय भाई से माइक लेकर बोले, "मैं श्लोक अंत्याक्षरी चलवैजयंती प्रतियोगिता की समाप्ति की घोषणा करता हूँ। पंचों का मानना है कि ये दोनों माध्यमिक स्तर के शिक्षार्थी हैं, सो इन्हें प्रोत्साहन राशि तो दे सकते हैं चलवैजयंती शील्ड नहीं। सो अन्य जो युगल सर्वाधिक समय तक मंच पर बना रहा, उसे विजेता माना जाएगा। अगले आयोजन तक के लिए चलवैजयंती शील्ड उसी कॉलेज को सौंपी जाएगी।"

स्वयं-भू पंचों के इस निर्णय पर हमारी सहमति चाही गई। मैंने कहा, "हम प्राचार्यजी तक शील्ड सहित ही जाएँगे। बिना शील्ड के भेजना है तो हमें हराना होगा। आज, कल, परसों, तरसों तक भी हरा सकते हैं।"

तब गोस्वामीजी ने निर्णायक द्वय की शरण गही। निर्णायकों में विचार-विमर्शोपरांत शास्त्रीजी बोले, "दोनों बालकों को बधाई। अनंतानंत शुभकामनाएँ। इनका आत्मविश्वास, स्मरणशक्ति, उच्चारण स्तुत्य है। ये स्कूल में माध्यमिक कक्षाओं के शिक्षार्थी भले हों, यहाँ समंतभद्र महाविद्यालय के प्रतिभागी हैं। स्वत: नहीं आए, आमंत्रित करने पर आए हैं। सो अयोग्य ठहराना कुतर्क ठहरता है। इनकी वय को देखते हुए

प्रोत्साहन स्वरूप धनराशि भी दी जाए तो हम निर्णायकों को आपत्ति नहीं होगी। हाँ, इनके अतिरिक्त किसी को विजेता ठहराया जाना अस्वीकार्य होगा। इसलिए आयोजक इन्हें शील्ड सहित विदा करें। औरों को कुछ लेना हो तो इनसे संस्कृतज्ञ होने का सबक ले सकते हैं।"

उनके मौन होते ही विजय भाई ने सबको स्वल्पाहार के लिए न्योत लिया। सूर्यास्त हो जाने से हम दोनों खाने-पीने के झंझट से मुक्त थे। हाँ, उस दौरान एक काम हो सकता था। सो हमने वही किया। स्वल्पाहार की मेज तक गए। दो प्लेटों में खाद्य सामग्री रखी। दूसरे हाथ में दो पेय थामे। उन्हें लेकर निर्णायकों के पास आए। शास्त्रीजी और आचार्यजी को प्लेटें सौंपकर उन्हीं के पास बैठ गए। वे स्वल्पाहार करने के साथ-साथ हमसे जानकारियाँ लेते रहे। हमारी प्रशंसा करते रहे। हमें प्रोत्साहित भी करते रहे।

शास्त्रीजी ने बताया, "गोस्वामीजी ने हमसे परामर्श किए बिना प्रतियोगिता समाप्ति की घोषणा कर दी। हमारा मन तो तुम दोनों को सुनते रहना चाहता था। हम शक्तिनगर में रहते हैं। दस बटा सत्रह ए मकान नंबर है। बाइस बानवे बत्तीस फोन नंबर है। तुम्हारा जब मन हो, मुझे फोन करना, हमारे घर आना।"

इस आह्लादकारी अनुभव, इस अनिर्वचनीय अनुभूति के बाद वह दिन भी आया जब मुझे शास्त्रीजी से मदद और मार्गदर्शन अपेक्षित हुए। उस अयाचित भोर में चार बजे दरियागंज से पैदल पाँव शक्तिनगर पहुँचने निकला तो उजाला होने पर स्वयं को मॉडल टाउन में पाया। लौटावाद विश्वविद्यालय सही पते पर पहुँचा।

शास्त्रीजी के चरण स्पर्श कर बताया, गई रात मुझे छात्रावास छोड़ना पड़ा। रहने का ठिकाना नहीं है। घर लौटना नहीं चाहता। लौटा तो कहेंगे, पढ़ना भाग्य में ही नहीं है। मैं पढ़ना चाहता हूँ। यहीं बने रहकर पढ़ना चाहता हूँ। अब यह संभव कैसे हो?

शास्त्रीजी ने अभयदान दिया, "तुम मेरे घर आ रहे हो। सुबह तीन घंटे मेरा बोला हुआ लिखना और शाम तीन घंटे जो किताब या पत्र-पत्रिका दूँ, वह बाँचना। दिन में स्कूल जाया करना।"

इस तरह मैं बारोजगार ही नहीं, एक व्यास का 'गणेश' भी हो गया! धर्म हो, दर्शन हो, व्यक्ति हो, समाज हो, राष्ट्र हो या संस्थान, शास्त्रीजी उनका खोट, अनीति, दुराचरण, वैमनस्य ही लेखन का विषय बनाते। उनका बोला लिखते समय हैरानी, शिकायत का भाव जागता। जैसे-जैसे आलेख विस्तार पाता, उनके तर्क, उनकी अपेक्षाएँ, उनके सुझाव मुझे मोहित करने लगते थे। मैं स्वयं को उनसे पूरी तरह सहमत पाता जाता था।

महर्षि अरविंद का हीरक जयंती वर्ष होने से उनकी महानताओं के बारे में पढ़ने-सुनने को मिल रहा था। ऐसे में जब सुबह शास्त्रीजी ने बोलना आरंभ किया, अरविंद निहायत डरपोक, पलायनवादी, नाकारा व्यक्ति थे, तब मैं चौंका।

फिर हमेशा की तरह जैसे-जैसे आलेख आगे बढ़ा, उनके अकाट्य तर्क यह मानने पर विवश करते गए कि अरविंद वैसे ही थे जैसे शास्त्रीजी उन्हें सिद्ध करते जा रहे हैं!

एक हैरानी तब भी बनी रही, यह केशलुंची आलेख किसलिए! महर्षि महिमामंडन के इस दौर में इसका उपयोग कहाँ हो पाएगा! आलेख पूरा होने पर हमेशा की तरह मैंने पढ़कर सुनाया। एकाध बदलाव करवाने के बाद कहा, इसे लिफाफे में बंद कर दो! लिफाफे पर लिखो, श्री विश्वनाथ। संपादक : सरिता।

इस पत्रिका का नाम मैंने इससे पहले रेलवे स्टेशनों पर लगे विज्ञापनों में तो देखा था पर यह न तो दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी में आती थी, न हमारे स्कूल की लाइब्रेरी में ही, सो इसे देखा या पढ़ा नहीं था। शास्त्रीजी ने अपनी बंडी के खलीते में से अठन्नी निकाली। मैंने हाथ आगे बढ़ाकर उसे अपनी मुट्ठी में सुरक्षित कर लिया।

अगला निर्देश दिया, "नागिया पार्क से शादीपुर डिपो तक की बस लेना। झंडेवालान उतर जाना। जाने-आने के आठ आने लगेंगे। दिल्ली प्रेस में सरिता के संपादक विश्वनाथजी को लिफाफा सौंपना। दूसरी बस से वापस आ आना।"

सरिता का अंक आने पर देखकर हैरानी हुई कि जिस आलेख के संदर्भ में मुझे न छपने की आशंका बनी हुई थी, उसे आवरण कथा के रूप में छापा गया था।

अगली बार एक और आलेख लेकर सरिता कार्यालय पहुँचा तो वापसी में विश्वनाथजी ने शास्त्रीजी के लिए पाठकों की ओर से भेज गए कुछ पत्र थमाए। कुछ प्रेषकों ने असहमति जताई थी। कुछ ने जिज्ञासाएँ लिख भेजी थीं। कुछ ने शास्त्रीजी पर आरोप मढ़े थे। उनकी सोच को नकारात्मक ठहराया था।

शास्त्रीजी ने पत्रों का संयुक्त उत्तर लिखवाया। हम एक ढोंगी और डरपोक समाज हैं। दोषों की ओर से आँखें मूँदे रखना चाहते हैं। हमें सार्वजनिक तौर पर किसी की प्रशंसा करना या सुनना ही सुहाता है। हम मान लेते हैं कि हमने उसके सम्मान की रक्षा कर ली। जबकि सच्चाई इससे उलट होती है। इसीलिए घनिष्ठों के बीच पहुँचकर उसकी खामियों का चिट्ठा खोलने में जुट जाते हैं। नतीजा सम्मानरक्षा का वह सद्प्रयास एक घंटे भी प्रभावी नहीं रह पाता।

यदि उसी मंच से खामियाँ भी उजागर की जाएँ तो उनके पदचिह्नों पर चलने का इच्छुक अनुयायी उन खामियों के प्रति सतर्क बना रह सकता है। शास्त्रीजी ने अपनी मान्यता या तर्क के लिए एक उदाहरण भी दिया।

जब कभी हमारा आत्मीय यात्रा पर या परीक्षा देने जा रहा होता है, तब हमारा आचरण, हमारी वाणी क्या उच्चारती है! यही न, सामान सँभालकर रखना। किसी से ज्यादा बातचीत मत करना। किसी अनजान का दिया मत खाना-पीना। घोड़े बेचकर मत सोना। गंतव्य पर पहुँचकर सामान ढोकर खुद को मत थकाना।

उत्तर-पुस्तिका में अपना पक्ष सावधानी से रखना। जल्दबाजी मत मचाना। जो भी उत्तर लिखो, उसे फिर से पढ़ने के लिए समय जरूर बचाना। ठीक से याद कर लो, सब जरूरी चीजें ले ली हैं न! कुछ भूल तो नहीं रहे हो!

सफलता तुम्हारे चरण चूमेगी। तुम जन्मजात होशियार हो। मेधावी

हो। तुम पहले कई बार अपनी बुद्धिमत्ता से ऐसी मुहिम से पार पा चुके हो। जब वहाँ इतनी कमजोरियों पर ध्यान देते हैं, तब किसी के समग्र आकलन के दौरान उसकी कमियाँ, नाकामियाँ उजागर करने से क्यों बचते हैं!

किसी के बारे में औरों को किसलिए बताया जाता है! वे उनसे प्रेरणा लेकर अपने जीवन को वैसा रूप दे सकें, इसीलिए न! सो और जरूरी नहीं हो जाता कि उनकी कमियाँ, कमजोरियाँ या विफलताएँ भी अवश्य बताएँ ताकि उस ओर सावधानी बरती जा सके। असफलता के अवसर कम से कमतर रह जाएँ।

मेरे मन ने सरिता को लेकर जो धारणा बनाई वह कुछ यों थी— असंतोष, अनीति, अंधविश्वास, आडंबर उजागर कर पाने का मंच।

मेरी स्मृति में ऐसे कई विषम और विरोधाभासी प्रसंग थे, जो औरों तक पहुँचने चाहिए थे। मैं उन्हें कलमबद्ध करने लगा। सरिता संपादक तक शास्त्रीजी का आलेख पहुँचाने के साथ ही अपना लिखा भी थमाने लगा। मैं नाबालिग था। बैंक में खाता नहीं था। सो मानदेय नकद मिलता था।

शास्त्रीजी सुबह छह बजे से लिखवाना शुरू करते थे। छह बजे का मतलब होता था पाँच बजकर उनसठ मिनट साठ सेकेंड। इससे जरा इधर-उधर हुए कि लेखन असंभव। जब वे बोल रहे होते थे, तब उन्हें न कागज पलटने की आवाज सुनना गवारा होती थी, न कागज पर पेन की रगड़ या आलपीन उठाने का स्वर। उनका सोचा हुआ मस्तिष्क में ही होता था, नोट्स की शक्ल में कागज पर लिखा या मेज पर किताब के रूप में तो होता नहीं था, सो जैसे ही कोई अतिरिक्त स्वर सुनाई देता था, उनका ध्यान भटक जाता था। फिर वे जो बोल रहे होते थे उसे विस्मृत कर उस स्वर के संधान में जुट जाते थे।

क्या था? कौन था? क्यों था? नहीं ही होना चाहिए था। अब जाने दो। कलम बंद कर दो! कल फिर से लिखेंगे।

शास्त्रीजी सुबह छह बजे से बोलना आरंभ करते थे। नौ बजे तक यही क्रम चलता था। कभी वे बोलते थे, कभी अपना बोला हुआ जिस रूप में मैंने लिखा होता था उसे सुनाने को कहते थे। यदि मुझसे सुनने में कोई भूल हुई हो तो उसे या फिर बोलते समय जो उन्हें सूझा था, सुनते समय उससे बेहतर या इतर कुछ सूझ गया हो तो उसके स्थान पर नया लिखने को कहते थे। सुधार करवाते समय रुक-रुककर बोलते थे। जबकि पहली बार धाराप्रवाह बोलते रहते थे। कुछ दिनों तक उन्हें सुनकर लिखने और उन्हें सुनाने के दौरान सुधार करते रहने के बाद मैं यह जानने लगा था कि वे अब अपना ही लिखा हटवाने जा रहे हैं।

जब वे मुझे सुन रहे होते थे यानी अपना ही लिखवाया हुआ सुन रहे होते थे, तब उनका एक हाथ गतिशील रहता था। मैं लिखते समय तो गरदन झुकाकर दत्तचित होकर बैठता था, पर सुनाते समय वह मुद्रा नहीं अपनानी होती थी। यह तय होता ही था कि वे मुझे देख नहीं सकते, सो अनायास ही एक आँख उन पर टिकी रहती थी। मैंने पाया कि उस हाथ के थमते ही वे मुझसे कहते हैं, नहीं! नहीं! इसे बदलना होगा! या हाँ! हाँ! यहाँ कुछ जोड़ना होगा!

सो कुछ दिनों बाद जैसे ही उनका हरकती हाथ थमता, मैं आगे सुनाना बंद कर देता था। वे सुन रहे हों या लिखवा रहे हों, यकायक कहते थे, अब बंद करो! नौ बजना चाहते हैं!

एक दुर्घटनावश मैं दसवीं की परीक्षाएँ नहीं दे पाया। पढ़ाई के आसार भी समाप्तप्राय हो चले। सो श्रीमती शास्त्री मुझ ईमानदार, परिश्रमी, खानदानी किशोर को घरेलू नौकर के कर्तव्य-अकर्तव्य सिखाने लगीं। दूधवाले के तबेले पर ले गईं। लौटना हुआ दूध भरा डोल लिये। एक दिन हाट में ले गईं। लौटना हुआ तरकारियों से भरे झोले टाँगे। एक दिन बोली, "मेहरी नहीं आई है, झाड़-बुहारी कर दे।"

पहले फुरसत के समय काम लेती थीं, फिर तब भी करवाने लगीं, जब मैं शास्त्रीजी को सुन रहा होता था या सुना रहा होता था। वे आपत्ति करते तो उन्हें सुनने को मिलता, तुम फिर बोल-सुन लेना। दूध, सब्जी, बुहारी के बिना तो अनर्थ हो लेगा। मुझे शुरू-शुरू में लगा, यह आकस्मिकता है। फिर धीरे-धीरे स्पष्ट होता गया, नहीं, यह नियोजन है। सो जिस दिन धोबन का भी एवजी बनने की नौबत आ गई, उसी दिन उस घर से विदा ले ली। दो वर्ष बाद मैं पहाड़ी धीरज के अहाता किदारा में रहने आया। काम की तलाश में शास्त्रीजी के घर गया। उन्होंने दूसरे दिन से सुबह-सवेरे आने को कह दिया। श्रीमती शास्त्री मौन ही रहीं। मैंने उनके मौन को सहमति मान लिया।

उस अहाते में पच्चीस परिवार और थे। पाखाने तीन। नल दो, एक नीचे, एक पहली मंजिल पर। सो सुबह चार बजे दैहिक कर्मों से निवृत्त होना और पैदल पाँव बाड़ा हिंदूराव, रोशन आरा रोड होते हुए शास्त्रीजी के घर पहुँचना होने लगा।

कुछ दिन तो यही सिलसिला चला, फिर स्कूल खुलते ही, श्रीमती शास्त्री लिखना-पढ़ना छुड़वाकर बिटिया के साथ उसके स्कूल तक भेजने लगीं। वहाँ से लौटने तक शास्त्रीजी का लिखने-सुनने का विचार स्वाहा हो चुकता था। सो नौ बजे तक एक के बाद एक घरेलू काम में मेरी जुताई होती। वही दूध लाना, तरकारी लाना, ब्रेड-मक्खन लाना। अध्यापिका बेटी तब तक पढ़ाने जा चुकती थी, सो मझली बेटी और आलसी बेटे के लिए चाय बनाना। उनके बिस्तर पर पहुँचाना।

फिर शास्त्रीजी से कभी मिलना नहीं हुआ, उनसे मिली सीख से आज भी नाता है। इसी के चलते जीवन में बहुतों से नाता जुड़ा तो बहुतों से बने नाते टूटते भी रहे। जुड़ने-टूटने के सिलसिले की शुरुआत भी शास्त्रीजी से हुई। अलबत्ता उस रूप में नहीं, जिस रूप में मेरे लेखन पर लागू होती है, यानी कुछ ऐसा लिख दिया हो, जो किसी को इतना खुश कर गया हो कि वह अपना बनाना चाहता हो या कुछ ऐसा लिख दिया हो, जो किसी अपने को भी इतना दुखी कर गया हो कि वह दूर छिटक जाना चाहता हो।

सा.अ.

सी-३/५५, सादतपुर कॉलोनी,
करावल नगर रोड, दिल्ली-११००९०
दूरभाष : ९८६८११३९७६

आखिरी प्रणाम

• सुरेश बाबू मिश्रा

रमनदीप उस झाड़ी की तलाश कर रहा था, जहाँ उसने बैग में अपना लैपटॉप छुपाकर रखा था। रमनदीप को अच्छी तरह याद है कि उसने उस झाड़ी के पास बी का चिह्न बनाया था। बी का मतलब भारत। वह उस चिह्न को ढूँढ़ रहा था।

काफी देर तक तलाश करने के बाद आखिर उसे वह झाड़ी मिल ही गई। झाड़ी में छिपाए गए बैग में अपने लैपटॉप को सुरक्षित देखकर उसके चेहरे पर एक अनोखी चमक आ गई थी। उत्सुकतावश उसने लैपटॉप ऑन करके देखा। उसके द्वारा इकट्ठी की गई सारी गोपनीय सूचनाएँ एवं डाटा पूरी तरह से सुरक्षित थे। यह देखकर उसकी सारी थकान उड़न-छू हो गई थी और उसका पूरा शरीर एक अनोखे रोमांच से भर गया था। उसने अपना लैपटॉप जिस बैग में रखा था, उसे उठाकर पीठ टाँग लिया।

रमनदीप कुछ देर सुस्ताने के लिए वहीं जमीन पर बैठ गया। बीते दिनों की घटनाएँ चलचित्र की भाँति उसकी आँखों के सामने घूमने लगीं। रमनदीप सिंह भारतीय सेना की इंटेलीजेंस कोर का जाँबाज जासूस था। उसे एक गोपनीय मिशन पर पाकिस्तान भेजा गया था। वह कई दिनों से भेष बदलकर पाकिस्तान में रह रहा था और बड़े गोपनीय तरीके से अपने मिशन पर काम कर रहा था। उसे पाकिस्तान आए दो सप्ताह से अधिक हो गए थे। उसे पाकिस्तान में चल रहे आतंकवादी शिविर के बारे में सूचनाएँ एकत्र करने के लिए भेजा गया था।

वह अपने मिशन में काफी हद तक कामयाब रहा। आतंकवादी कैंपों की काफी सूचनाएँ एकत्र कर उसने अपने लैपटाप में अपलोड कर ली थीं। वह एक सूफी फकीर की वेशभूषा में घूमा करता था, इसलिए किसी को उस पर कोई संदेह नहीं हुआ था। परंतु कल एक आतंकवादी शिविर का फोटो लेते हुए पाकिस्तानी पुलिस के एक जवान ने उसे देख लिया। उसे रमनदीप पर शक हो गया। तब से पाकिस्तानी पुलिस उसका पीछा कर रही थी।

किसी तरह से वह पुलिस के जवानों को चकमा देकर पी.ओ.के. के इस पहाड़ी इलाके में आकर छुप गया था। यह तो अच्छा हुआ कि उसने कुछ दिन पहले अपना लैपटॉप वाला बैग यहीं पहाड़ी पर एक झाड़ी में छुपाकर रख दिया था, जो आज उसे सही-सलामत मिल गया। पाकिस्तानी पुलिस अब भी उसे ढूँढ़ रही थी, इसलिए खतरा अभी टला नहीं था।

सुपरिचित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से कहानी, वार्त्ता एवं नाटक प्रसारित। कथा श्री सम्मान, नीरज वाला स्मृति सम्मान, पांचाल साहित्य शिरोमणि सम्मान सहित कई सम्मान प्राप्त। संप्रति प्रधानाचार्य के पद से सेवा-निवृत्त।

रमनदीप पंजाब प्रांत के होशियारपुर जिले के एक गाँव का रहनेवाला था। उसके पिता सेना के रिटायर्ड कर्नल थे। उन्होंने १९६५ और १९७१ के युद्ध में भाग लिया था और असाधारण शौर्य का प्रदर्शन किया था। रमनदीप ने देशभक्ति का ककहरा उन्हीं से सीखा था। उसकी माँ रमनदीप से बेहद प्रेम करती थी, क्योंकि वह उनका इकलौता बेटा था। उसके पिता के पास काफी खेती भी थी और उनके परिवार की गिनती संपन्न परिवारों में होती थी।

रमनदीप के तीन बहिनें थीं, दो बड़ी और एक उससे छोटी। रमनदीप को ध्यान आया कि आज से लगभग एक महीने बाद उसकी छोटी बहिन रजवंत कौर की शादी है। शादी में घर जाने के लिए उसने छुट्टी की एप्लीकेशन अपने ऑफिसर को इस मिशन पर आने से काफी पहले ही दे दी थी।

तीन साल पहले रमनदीप की शादी हो चुकी थी। उसकी पत्नी सुरजीत कौर बेहद सुंदर और शालीन थी। अपनी शादी के बाद इन तीन साल में वह कुल मिलाकर बमुश्किल एक महीने ही घर पर अपनी पत्नी के साथ बिता पाया था, मगर सुरजीत कौर ने कभी कोई शिकायत नहीं की। उसने घर के कामकाज को बहुत अच्छी तरह से सँभाल रखा था और वह सबका बहुत खयाल रखती।

रमनदीप सोचने लगा कि सेना के जासूस का काम कितना कठिन और चुनौतीपूर्ण है। उसे हर समय प्राण हथेली पर रखकर काम करना

पड़ता है। दुश्मन की नजर कब उस पर पड़ जाए, कुछ पता नहीं। उसका हर मिशन खतरों से भरा होता है। विडंबना तो देखो, उसके घरवालों या देश के लोगों को उसके जोखिमपूर्ण कार्यों की कोई जानकारी नहीं हो पाती है। मिशन अत्यंत गोपनीय होने के कारण उसके कामों और उपलब्धियों के बारे में मीडिया में भी न तो कुछ छपता है और न चैनलों पर कुछ दिखाया जाता है। एक जासूस तो यही सोचकर हर समय खुश रहता है कि उसका पूरा जीवन भारतमाता की सेवा में समर्पित है। रमनदीप ने सोचा कि इस मिशन को पूरा करने के बाद वह अपनी छोटी बहिन की शादी में गाँव जाएगा और कम-से-कम एक माह गाँव में ही अपनी पत्नी और परिवार के साथ बिताएगा।

वह इन्हीं खयालों में खोया हुआ था कि उसे एक फर्लांग दूर की झाड़ियों में कुछ हलचल सी दिखाई दी। वह चैकन्ना हो गया। उसने अपने मोबाइल में उस स्थान की लोकेशन देखी। भारतीय सीमा यहाँ से केवल बीस किलोमीटर दूर रह गई थी। उसने सूफी फकीर की वेशभूषा उतार दी और बैग में से निकालकर इंडियन मिलिट्री इंटेलीजेंस कोर की ड्रेस पहन ली। उसने अपने बैग को ठीक तरह से पीठ पर टाँगा और वहाँ से निकलने के बारे में सोचने लगा। जिधर झाड़ियों में हलचल दिखाई दी थी, उसके विपरीत दिशा में वह कोहनियों के बल रेंगता हुआ आगे बढ़ने लगा। उसे ऐसा करने में बहुत कठिनाई हो रही थी, मगर वह खड़े होने का खतरा मोल लेना नहीं चाहता था। उसके लिए वह लैपटॉप और उसमें एकत्र डाटा सुरक्षित अपने हेड क्वार्टर पहुँचाना जरूरी था। वह करीब एक घंटे तक इसी प्रकार रेंगता रहा। अब वह उस स्थान से लगभग एक किलोमीटर दूर निकल आया था। उसकी श्वास फूल रही थी, इसलिए वह कुछ देर तक वहीं बैठा रहा, फिर उसने खड़े होकर चारों तरफ देखा। चारों तरफ दूर-दूर तक सन्नाटा था। वह धीरे-धीरे भारतीय सीमा की ओर बढ़ने लगा। वह पूरी तरह से सतर्क था और सावधानीपूर्वक आगे की ओर बढ़ रहा था।

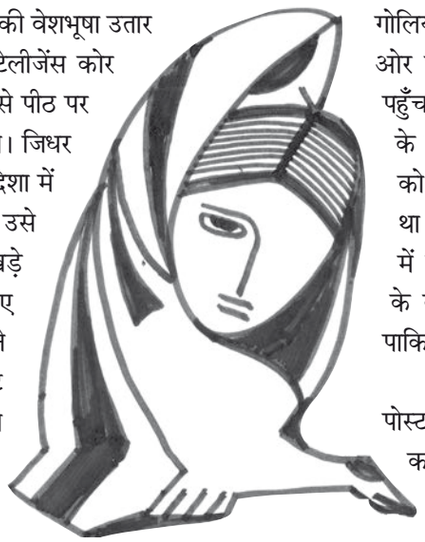

अभी वह तीन-चार किलोमीटर ही दूर पहुँचा होगा कि उसे तीन-चार पाकिस्तानी सैनिक टहलते हुए दिखाई दिए। शायद वहाँ कहीं आस-पास पाकिस्तानी चेक पोस्ट रही होगी। किसी तरह से उन सैनिकों की नजर से छुपता-छिपाता रमनदीप वहाँ से निकलने में सफल रहा। अब वह तेज कदमों से चलने लगा था। वह किसी तरह पाकिस्तानी सीमा को पार कर भारत की सीमा में प्रवेश कर जाना चाहता था। उसका मिशन पूरा हो चुका था और अब उसे अपने हेड क्वार्टर पहुँचकर यह लैपटॉप अधिकारियों को सौंपना था।

शाम का धुँधलका छाने लगा था। रमनदीप ने मोबाइल में एक बार फिर लोकेशन देखी। भारतीय सीमा अब केवल चार-पाँच किमी. दूर रह गई थी। रमनदीप तेजी से भारतीय सीमा की ओर बढ़ने लगा, तभी उसे चार-पाँच पाकिस्तानी सैनिक बिल्कुल सामने से आते दिखाई दिए। उनकी नजर शायद रमनदीप पर पड़ चुकी थी, वे सीधे उसी की ओर आ रहे थे। अब बचने का कोई रास्ता नहीं था। रमनदीप ने कुछ क्षण सोचा, फिर उसने बैग से एक छोटा हैंड ग्रेनेड निकालकर उन सैनिकों को टारगेट बनाकर उनकी ओर फेंका। बहुत तेज धमाका हुआ और क्षणभर में ही पाकिस्तानी सैनिक जमीन पर गिरकर छटपटाने लगे।

रमनदीप पूरी ताकत से भारतीय सेना की ओर भागा। वह काफी दूर तक दौड़ता चला गया। अब उसे भारतीय सीमा साफ दिखाई देने लगी, इसलिए उसका मन उत्साह से भर गया, तभी अचानक पाकिस्तानी सीमावर्ती पोस्ट से रमनदीप को टारगेट करके फायरिंग शुरू हो गई।

रमनदीप भारतीय सेना का एक प्रशिक्षित कमांडो था। वह मार्शल आर्ट में भी दक्ष था। गोलियों की बौछार में से बचकर कैसे निकलना है, इस कला को वह बखूबी जानता था। इसलिए शत्रु की गोलियों से बचता हुआ वह लगातार भारतीय सीमा की ओर बढ़ रहा था। आखिरकार वह भारतीय सीमा पर पहुँचने में सफल हो गया था। काफी सावधानी बरतने के बावजूद शत्रुपक्ष की कई गोलियों ने उसके शरीर को छलनी कर दिया, जिनमें से लगातार रक्त बह रहा था। असहनीय पीड़ा के बावजूद वह भारतीय सीमा में घुसने के लिए पहाड़ियों पर घुटने एवं कुहनियों के बल रेंगकर आगे बढ़ने का प्रयास कर रहा था। पाकिस्तानी पोस्ट से अब फायरिंग बंद हो गई थी।

उधर भारतीय सीमा में स्थित सेना की द्रास सेक्टर पोस्ट के जाँबाज सैनिक सीमा पर गश्त कर रहे थे। रात का अँधेरा चारों ओर फैल गया था। हड्डियों तक को कँपा देनेवाली सर्द हवाएँ चल रही थीं, मगर इससे सैनिकों के जोश में कोई कमी नहीं आई थी। वे पूरी मुस्तैदी के साथ अपनी ड्यूटी को अंजाम दे रहे थे।

अचानक उनकी नजर रमनदीप पर पड़ी, जो घुटनों और कोहनी के बल रेंगकर भारतीय सीमा में घुसने का प्रयास कर रहा था। किसी आनेवाले खतरे को भाँपकर सेना के जवान सतर्क हो गए थे। उन्होंने अपनी राइफलें लोड कर लीं और पूरी सावधानी से उस दिशा की ओर बढ़ने लगे, जिधर से वह आदमी हमारे देश की सीमा में घुसने का प्रयास कर रहा था। सैनिकों ने उसे चारों ओर से घेर लिया। मगर वे यह देखकर हैरान रह गए कि उसके पूरे शरीर में गोलियों के घाव थे और उनसे खून बह रहा था। उसकी पीठ पर एक बैग टँगा हुआ था। वह अब भी आगे बढ़ने का प्रयास कर रहा था।

अपने चारों ओर भारतीय सेना के जवानों को देखकर रमनदीप के चेहरे पर खुशी की एक अनोखी चमक आ गई थी। उसके शरीर से बहुत अधिक खून बह चुका था और उसकी श्वास रुक-रुककर चल रही थी। उसने भारत की मिट्टी को हाथ में लेकर अपने माथे से लगाया। फिर उसने

सिर झुकाकर धरती को चूमा और भारत माता की जय के उद्घोष के साथ अपने जीवन की अंतिम श्वास ली।

भारतीय सेना के जवान उसे ऐसा करते देख हैरान से खड़े थे। उन्होंने उसकी तलाशी ली। उसकी जेब से उसका आइडेंटिटी कार्ड मिला, जिससे पता चला कि वह इंडियन मिलिट्री इंटेलीजेंस कोर का जासूस रमनदीप सिंह था। जिसे एक गोपनीय मिशन पर पाकिस्तान भेजा गया था।

उसके बाएँ हाथ की मुट्ठी में एक मुड़ा-तुड़ा कागज का टुकड़ा था। एक जवान ने उसकी मुट्ठी खोलकर वह कागज का टुकड़ा निकाला। उसमें लिखा था—'मैंने अपना मिशन सफलतापूर्वक पूरा किया। मेरे बैग में जो लैपटाप है, उसमें पाकिस्तान में चल रहे आतंकवादी ट्रेनिंग कैंपों के फोटो हैं। प्लीज इसे हेडक्वार्टर पहुँचा देना। लौटते समय पाकिस्तानी सैनिकों ने अंधाधुंध फायरिंग कर मुझे बुरी तरह घायल कर दिया। मगर मुझे इस बात की बेहद खुशी है कि मैंने भारतमाता की गोद में अपने जीवन की अंतिम श्वास ली। भारतमाता को उसके पुत्र का आखिरी प्रणाम। तेरा वैभव अमर रहे माँ, हम दिन चार रहे न रहें। जय हिंद। भारत माता की जय।'

रमनदीप का पत्र पढ़कर सेना के जवानों की आँखों की कोरें गीली हो गईं। उन्होंने सैल्यूट देकर भारत माता के इस सच्चे सपूत को अपनी श्रद्धांजलि दी।

ए-९७९, राजेंद्र नगर
बरेली-२४३१२२ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४११४२२७३५

लघुकथा

दान में मिले वस्त्र

● केदारनाथ सविता

मकर संक्रांति का दिन था। खरमास समाप्त होने के बाद घाट पर गंगास्नान करनेवालों की भीड़ थी। ठंड होने के बावजूद श्रद्धालु स्त्री-पुरुष डुबकी लगा रहे थे। कुछ परिवार के साथ बच्चे भी थे। जो नहाने के लिए कपड़े उतारने को तैयार नहीं हो रहे थे। उनके पिता बच्चे को डाँटकर कपड़े उतरवाकर पानी में नहलाने ले जा रहे थे। बच्चे चिल्ला रहे थे। घाट पर खुला वातावरण होने के कारण तेज हवा चल रही थी। नहाने के बाद बच्चे काँपने लगे थे। उनको जल्दी-जल्दी धुले-सूखे कपड़े पहनाकर घाट पर उनके पिता भी नहाने चले गए।

बड़ा मनोरम वातावरण था। प्राकृतिक हवा शरीर को स्वस्थ करनेवाली तेजी से बह रही थी। इन्हीं में छह वर्षीय रजत अपने मम्मी-पापा के साथ गंगास्नान को आया था। आया नहीं, लाया गया था। उसे भी मम्मी-पापा की जिद्द पर नहाना पड़ा। वह नहाकर कपड़े पहन चुका था। वापसी में पंडितजी को दक्षिणा देकर मस्तक पर सबने चंदन लगाया।

घाट से ऊपर आने पर सड़क के दोनों किनारों पर भिखारियों की पंक्ति लगी थी। वे वहीं बैठकर आवाज लगा रहे थे। स्नानार्थियों से दान में रुपए माँग रहे थे। देनेवाले अनाज, सिक्के व पुरानेक प ड़े आदि दे रहे थे। कोई चावल देता था तो कोई गुड़ की बनी लाई, तिल्ली, बजड़ी, परमल का पट्टी-ढूँढा दे रहा था। मकर संक्रांति पर काले तिल का दान करना शुभ होता है।

रजत के पिता घर से पुरानी जर्सी, स्वेटर और कपड़े लाए थे दान करने को। उन्होंने अलग-अलग भिखारियों को कपड़े दिए, जिसे वे जाड़े में पहनकर ठंड से बच सकें। माँगनेवालों में महिलाएँ व बच्चे भी थे। रजत की माँ ने अपनी पुरानी साड़ी एक महिला को यह पूछकर दी कि वह उस साड़ी को पाकर पहनेगी। अपने पुराने वस्त्र दान देने से ग्रह कटते हैं और बुरी बलाएँ दूर होती हैं। इसीलिए सभी स्नानार्थी वस्त्र दान कर रहे थे। भिखारियों के पास भी प्राप्त वस्त्रों के गट्ठर बढ़ते जा रहे थे।

रजत के माता-पिता घर पहुँच गए। उन्होंने घर पर नाश्ता-खाना खा दोपहर में विश्राम किया।

शाम को रजत की माँ ने कहा, "हम लोग सुबह पूजा के लिए गंगा जल लाना भूल गए। गंगाजल का प्रयोग घर में रोज सुबह पूजा के समय होता था। रजत के पिता शाम को गंगाजल लाने के लिए स्कूटी से पानी की बोतल लेकर घाट पर पुन: गए।

आज पूरे दिन सूर्यदेव बादलों में छिपे रहे। तेज हवा के कारण शीत लहरी चल रही थी। रजत के पिता ने बोतल में जल लेकर लौटते समय देखा कि कुछ भिखारी झुंड में बैठकर सुबह दान में मिले कपड़ों को जलाकर ताप रहे थे। कपड़ों की लपट की गरमी रास्ते में रजत के पिता को भी महसूस हो रही थी। वे दान में मिले कपड़ों के इस उपयोग पर चकित थे।

लालडिग्गी, सिंह गढ़ की गली,
नई कॉलोनी, मीरजापुर-२३१००१

एकात्म मानववाद

● अवधेश कुमार जैन

एकात्म मानववाद के प्रणेता पं. दीनदयाल उपाध्याय सन् १९५१ में डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी द्वारा भारतीय जनसंघ के निर्माण के समय से ही दल में आ गए थे। १९५२ से १९६७ तक पं. दीनदयाल उपाध्याय भारतीय जनसंघ के महामंत्री रहे। १९६८ में वे कालीकट के अधिवेशन में पार्टी के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। १९६८ में रहस्मयी परिस्थितयों में उनकी हत्या हुई। भारतीय जनसंघ के संगठन विस्तार, चिंतन व विचार देकर पार्टी को एक नई दिशा देने व कार्य पद्धति के निर्माण में उनका प्रमुख योगदान था। वर्तमान में राजनीतिक दल भारतीय जनता पार्टी की संविधान की धारा ३ के अंतर्गत 'एकात्म मानववाद' भाजपा का मूल दर्शन है। मानव कल्याण के लिए दीनदयालजी ने चिरंतन भारतीय संस्कृति के शाश्वत नियमों के आधार पर युगानुकूलदर्शन दिया, जिसमें उन्होंने समाजवाद, पूँजीवाद, व्यक्तिवाद आदिवादों से भ्रमित विश्व के समक्ष एक नया मार्ग एकात्म मानववाद को प्रस्तुत किया, जिसमें 'व्यक्ति सुखी कैसे हो?' की व्याख्या करते हुए बताया कि जब व्यक्ति चतुर्यामी सुख-शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा की प्राप्ति हेतु धर्म के अनुकूल चतुर्यामी पुरुषार्थ—अर्थ, धर्म, काम व मोक्ष करता हुआ। परम सुखी मानव का निर्माण होता है, यह परम सुखी व्यष्टि (मानव), समेष्टि (समाज), सृष्टि (प्रकृति) व परमेष्ठी के साथ एकात्म होकर मोक्ष को प्राप्त करता है, इसे ही पंडितजी ने एकात्म मानववाद कहा है।

एकात्म मानववाद विचार का जन्म ऐतिहासिक विचार की श्रृंखला के रूप में प्रारंभ हुआ। १६वीं व १७वीं सदी में प्रचीन यूरोप में हुए यूरोपीय पुनर्जागरण तथा २०वीं सदी में भारत में हुए पुनर्जागरण के परिणामस्वरूप एकात्म मानववाद विचार की उत्पत्ति हुई। यूरोपीय पुनर्जागरण तथा यूरोपीय साम्राज्यवाद का विकास लगभग साथ-साथ हुआ। भारत का यूरोप से संपर्क होकर यूरोपीयन साम्राज्यवाद से चोटग्रस्त होने के परिणामस्वरूप २०वीं सदी में भारत तथा एशिया में पुनर्जागरण क्रांति प्रारंभ हुई। एशियाई पुनर्जागरण का भारत ने नेतृत्व किया। इन समस्त पुनर्जागरण क्रांति में भारत के हजारों महापुरुषों ने भाग लिया एवं देश व समाज में परिवर्तन का आधार रखा। इसी पुनर्जागरण क्रांति

शोधार्थी हैं। इतिहास विभाग, मेवाड विश्वविद्यालय चित्तौड़गढ़ राजस्थान। स्नातक व स्नातकोत्तर वाणिज्य समूह। स्नातकोत्तर राजनीति शास्त्र।

में लोकमान्य तिलकजी ने कर्मवादी स्वराज्यवाद, अरविंद के वैदांतिक स्वराज्य, गोखले, रानाडे व नैरोजी के उदारवादी सुराज्यवाद के चिंतन के रूप में विकास हुआ। इसी को महात्मा गांधी ने 'रामराज्य' के रूप में विचारों को प्रस्तुत किया। विनायक दामोदर सावरकर ने हिंदुत्व दर्शन को राजनीतिक विचारधारा का आधार बताया। वहीं एम.एन. रॉय ने गैर साम्यवादी विचारधारा 'नव-मानववाद' के विचार का प्रतिपादन किया। इन सभी चिंतनों का प्रतिपादन होता रहा तथा उसी मध्य भारत देश को स्वतंत्रता प्राप्त हुई। समाज के बुद्धिजीवियों में विचार-मंथन चलता रहा। इसी विचार श्रृंखला की कड़ी को नवीन रूप में पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने 'एकात्म मानववाद' के रूप में प्रस्तुत किया।

स्वतंत्र्योत्तर भारत में इस विचार मंथन की प्रक्रिया का पं. दीनदयाल उपाध्याय निम्न शब्दों में वर्णन करते हैं—

"स्वतंत्रयोत्तर काल में भारतीय राजनीतिक दर्शन का विचार बिल्कुल नहीं हुआ, यह कहना सत्य नहीं होगा। किंतु अभी संकलित प्रयत्न करना बाकी है। गांधीजी की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए तथा भारतीय दृष्टिकोण से विचार करते हुए, सर्वोदय के विभिन्न नेताओं ने महत्त्वपूर्ण कल्पनाएँ रखी है। किंतु विनोबा भावे ने 'ग्रामदान' के कार्य को जो अतिरेकी महत्त्व दिया है, उससे उनका वैचारिक क्षेत्र का योगदान पिछड़ गया है। जयप्रकाश बाबू भी जिन पचड़ों में पड़ गए हैं, उससे उनका चिंतन का कार्यक्रम रुक गया है। रामराज्य परिषद् के संस्थापक स्वामी करपात्रीजी ने भी 'रामराज्य और समाजवाद' लिखकर, पाश्चात्य जीवन दर्शनों की मीमांसा की है तथा अपने विचार रखे हैं, किंतु उनकी दृष्टि मूलत: सनातनी होने के कारण वे सुधारवादी आकांक्षाओं व आवश्यकताओं

को पूर्ण नहीं करते। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक श्री मा.स. गोलवलकर भी समय-समय पर भारतीय दृष्टिकोण से राजनैतिक प्रश्नों का विवेचन करते हैं। भारतीय जनसंघ ने भी 'एकात्म मानववाद' के आधार पर समाजवाद की कुछ अलग व्याख्या करने का प्रयत्न किया है, किंतु यह विवरणात्मक रूप में सामने नहीं आया है। डॉ. संपूर्णानंद ने भी जो 'समाजवाद' पर विचार व्यक्त किया है, उनमें भारतीय जीवन दर्शन का अच्छा विवेचन है। चिंतन की इस दिशा को आगे बढ़ाने की आवश्यकता है।

अर्थ, काम पुरुषार्थ का नियमन करने के लिए आधारभूत पुरुषार्थ है धर्म। धर्म वह है, जिससे धारणा होती है। जीवन जीने के शाश्वत नियमों को धर्म कहते हैं। विज्ञान के नियमों की तरह ही धर्म के आधारभूत सिद्धांत खोजे जाते हैं, उनको बनाया नहीं जाता। धर्म के आधार पर सब क्षेत्रों में धारण के लिए उपयुक्त ढाँचा बनाया जाता है।

भारत का एक वैशिष्ट्य है कि वह विभिन्न मानवीय तथा सांस्कृतिक धाराओं को अपने में समा लेता है। यूरोप का जड़वाद भी इसका अपवाद नहीं करेगा। इस संदर्भ में श्री अरविंद, जो भारतीय पुनर्जागरण एवं स्वातंत्र्य समर के अग्रदूत तथा प्रतिभासंपन्न दार्शनिक थे, अपनी भावप्रधान शैली में लिखते हैं—

''....हिमालय के दारों से औरों ने प्रवेश करना शुरू किया तो भारत से शांति खिसक गई। भारत को संघर्ष की सदियाँ बितानी पड़ीं। अत: क्षोभ का काल आया, जिसमें उसी के बिखरे विचारों से उत्पन्न समस्याएँ, बड़े आग्रहपूर्ण रूप से वापस आई और उस पर अपनी दृष्टि, अपने विचार लादने की कोशिश करने लगी। उसके लिए वह अपने ही अतीत के बौद्धिक परीक्षणों की स्मृतियाँ थीं, जिन्हें उठाकर एक ओर रख दिया गया था। इतना ही नहीं, भुला दिया गया था। उसने उन्हें उठा लिया। नए प्रकाश में उन पर फिर से विचार किया और फिर से अपना अंग बना लिया। उसने यूनानियों के साथ यही किया। सीरियनों के साथ, मुसलमानों के साथ ऐसा ही किया। वह अपने लौटते हुए सभी बच्चों के साथ ऐसा ही करेगा, चाहे वह ईसाई धर्म हो या यूरोपीय विज्ञान और जड़वाद। आज उसे जितनी सामग्री को आत्मसात् करना है, वह इतिहास में अद्वितीय और अनुपम है, परंतु उसके लिए यह बच्चों का खेल है।

एकात्म मानववाद दर्शन के दो प्रमुख आयाम हैं : प्रथम पाश्चात्य जीवन दर्शन तथा द्वितीय भारतीय संस्कृति। 'मानववाद' की विचारधारा मूलत: पश्चिमी अवधारणा है तथा एकात्म की अवधारणा मूलत: भारतीय अवधारणा है। पाश्चात्य प्रयोगों में मूलत: लौकिक जीवन की प्रधानता है, इसलिए पाश्चात्य-मानववाद के भारतीयकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप 'एकात्म मानववाद' का उदय हुआ।

व्यक्ति सुखी कैसे हो—यह शाश्वत यक्षप्रश्न है। विश्व में इसके लिए अनेक प्रयोग हुए हैं। पश्चिम में हुए प्रयोगों की तरफ भारतीय आभिजात्य वर्ग का ध्यान बार-बार जाता है। दीनदयालजी ने इनका भी गहरा अध्ययन किया था। पोप और खलीफा के नाम से एक वैश्विक मजहबी शासन की कल्पना थी। यह कहा जाता था कि इससे देश-सीमाएँ नहीं रहेगी व सार्वत्रिक पांथिक बंधुत्व के द्वारा मानव सुखी होगा।

राष्ट्र-राज्य की सुस्थिर भावना के कारण पांथिक शासन के खिलाफ विद्रोह हुए। राजाओं के राज्य करने के दैवी अधिकार को भी चुनौती दी गई। पश्चिमी मे लोकतंत्र का उदय हुआ, जिसमें सबको वोट का अधिकार, जनता सरकार बनाती है, बदलती है, इस प्रकार का नारा दिया गया। जनता से ऐसा कहा गया कि प्रभुसत्ता जनता में है। लोकतंत्र की वैचारिक अवधारणा व्यक्तिवाद से प्राप्त की गई थी।

प्रजातंत्र के आसपास ही औद्योगिक क्रांति आई। भाप-शक्ति के अविष्कार ने उत्पादन के पैमाने बदल दिए। बड़ी पूँजी से बड़े कारखाने लगे। गाँव का व्यक्ति रोजगार के लिए शहर भागने लगा। पूँजी व सत्ता के गठजोड़ में व्यक्ति का शोषण होने लगा। उसकी मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी होना भी कठिन हो गया। वोट रहा, पर रोटी के लाले पड़ गए।

व्यक्तिवाद की प्रतिक्रिया में कार्ल मार्क्स ने समाजवाद की अवधारणा प्रस्तुत की। आकर्षक नारा दिया 'दुनिया के मजदूरों एक हो, तुम्हें अपनी जंजीरों के अलावा कुछ नहीं खोना है'। सर्वहरा की तानाशाही के नाम पर साम्यवादी दलों का शासन आ गया। उत्पादन के साधन सरकार के हाथ में लिये गए। पर व्यक्ति गुलाम ही रहा। राजा का, पूँजीपति का और अब सर्वकश साम्यवादी शासक का व्यक्ति गुलाम ही रहा।

अमरीका जैसे विकसित देश में भी जहाँ व्यक्ति के पास पर्याप्त धन, चुपड़ी रोटी, कपड़ा, मकान व वोट सब उपलब्ध हैं, परंतु व्यक्ति सुखी नहीं है, उसे नींद की गोलियाँ खानी पड़ती हैं। आत्महत्याएँ बढ़ रही हैं। उनका कहना है, 'सबकुछ है पर मन की शांति नहीं, आनंद नहीं'।

२० से २५ अप्रैल, १९६४ को दीनदयालजी ने मुंबई में एकात्म मानववाद पर ४ भाषण दिए। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर उन्होंने बताया कि पश्चिम में मानव का एकांगी विचार किया गया है। प्रजातंत्र में उसे एक राजनीतिक प्राणी माना गया है व समाजवादी में शारीरिक आवश्यकताओं वाला व्यक्ति मात्र। विचार करें कि व्यक्ति की आवश्यकताएँ क्या हैं? उसके जीवन के कौन से पहलू हैं? सब जानते हैं कि व्यक्ति का एक शरीर होता है। उसकी आवश्यकताएँ होती हैं। प्राणिमात्र में यह आवश्यकताएँ समान हैं। उसे भोजन चाहिए, मौसम के अनुसार शरीर रक्षा के लिए वस्त्र चाहिए, सिर पर छत चाहिए इत्यादि। पर मनुष्य केवल इतना ही नहीं। कोई व्यक्ति आनंदपूर्वक, स्वादिष्ट भोजन कर रहा हो, बीच में खबर आ जाए कि माँ की मृत्यु हो गई'। भोजन बीच में छूट जाता है। अब भोजन अच्छा नहीं लगता। मानव को 'मन' भी तो है। शरीर स्वस्थ हो। मन के विपरीत कुछ न हो रहा हो। पर किसी को 'स्काइजोफ्रैनिया' नाम की बीमारी हो जाए। इस बीमारी में व्यक्ति के संदेह होता है कि सब निकट के लोग उसके खिलाफ षड्यंत्र कर रहे हैं। खाने में जहर की आशंका हो सकती है। ऐसा व्यक्ति न तो खाना खा सकता है, न प्रियजनों में आनंदपूर्वक रहने दे सकता है। मानव की 'बुद्धि' भी स्वस्थ चाहिए। मानव जीवनमात्र भौतिक ही नहीं है। एक परा भौतिक जीवन भी

है। संपूर्ण सृष्टि व भगवान् से जोड़नेवाली, शरीर में निवास करनेवाली, आत्मा का भी अस्तित्व है। इसलिए जिस व्यवस्था में मानव का एकात्म विचार, यानी शरीर, मन बुद्धि व आत्मा का संकलित विचार किया गया हो, वही व्यवस्था मानव के लिए कल्याणकारी हो सकती है।

इस संसार को कैसे देखें?

हीगल ने द्वंद्व को मौलिक नियम बताया। पश्चिम ने सृष्टि में सार्वत्रिक संघर्ष माना। उसमें से संतुलन कर व्यवस्थाएँ बनाने की चेष्टा की। उनकी अवधारणा में सब संस्थाओं में परस्पर संघर्षशील दो पक्ष रहते हैं—संसद् में शासक दल व प्रतिपक्ष, न्यायालय में वादी व प्रतिवादी, शासन में सरकार व जनता। वहाँ व्यक्ति व परिवार राज्य व केंद्र, मानव व प्रकृति, सभी जगह थीसिस-एंटीथीसिस कल्पित कर ली गई है। इस संघर्ष में डार्विन के सिद्धांत के अनुसार 'सरवाइवल ऑफ दि फिटेस्ट' होता है। जो पिछड़ जाता है, वह छूट जाता है, छूटने लायक ही होता है वह। भारतीय मनीषा सर्वत्र संघर्ष के इस नियम को नहीं मानती। सृष्टि में परस्पर सहयोग है। सह अस्तित्व की भावना तथा परस्पराकुलता है। सृष्टि में सब एक-दूसरे के अवलंब से चलता है। विविधताएँ ऊपरी हैं। भीतर एकात्मता है। एक उदाहरण लें। मनुष्य शरीर में सभी अंग जैसे हाथ, पैर, आँख, कान सब अलग रूप में है, अलग-अलग काम करते हैं। पर आत्मा व प्राण के कारण शरीर में परस्पर एकात्मता है। परस्परानुकूलता है। सिर पर प्रहार होता देख हाथ उसे अपने ऊपर लेने के लिए उठता है। मुँह में गया भोजन सारे शरीर को पोषण देता है। वृक्ष में तना, डाल, पत्ते, फल आदि अलग-अलग गुण, प्रभाव व आकार के होते हैं, पर उनमें कोई अंतर्विरोध नहीं होता। उन सबको मिलाकर वृक्ष बनता है। जड़ को पानी देने से सारा वृक्ष हरा-भरा रहता है।

मनुष्य जगत् व वनस्पति जगत् परस्परावलंबन का उदाहरण है। मनुष्य वनस्पतियों के लिए कार्बन डाइऑक्साईड और वृक्ष मुनष्यों के लिए ऑक्सीजन प्रदान करते हैं। सूर्य समुद्र से जल सोखता है। उससे बादल बनते हैं। बादल पहाड़ों पर बर्फ गिराते हैं—बर्फ पिघलने से नदियाँ प्रवाहित होती है एवं नदियाँ समुद्र में मिलकर जल लौटा देती है। यों सृष्टि का चक्र चलता रहता है। गीता में बताया है कि 'सृष्टि की विभिन्नता में अव्यय एकत्व को देखना सात्विक ज्ञान है।'

सर्वभूतेशु येनैकं भावमव्ययमीक्षते।
अविभक्तं विभक्तेशु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम्॥

शंकराचार्यजी ने कहा है कि यहाँ सर्वभूतेषु का अर्थ अव्यक्त से लेकर स्थावर सृष्टि तक है। इस सृष्टि में अविभक्त एकता का दर्शन सात्त्विक है। यह एकात्म दृष्टि है। प्रकृति में सहयोग भी दीखता है, संघर्ष भी। यहाँ संस्कृति की भूमिका है। व्यक्ति भोजन करता है, यह प्रकृति है। कोई व्यक्ति अन्यायपूर्वक दूसरे का भोजन छीनकर खा लेता है, यह विकृति है। कुछ लोग, सबको भोजन कराकर अवशिष्ट खुद ग्रहण करते हैं—यह संस्कृति है। सृष्टि में एकात्मता का दर्शन करना प्रकृति है। एकात्मता के सूत्रों को सबल करना संस्कृति है। संघर्ष बढ़ाना विकृति होगा। 'सरवाइवल आफ दि फिटेस्ट' मनुष्यों का नहीं, केवल जंगल का नियम है।

उपरोक्त आधार पर व्यक्ति को शरीर, मन, बुद्धि व आत्मा का सुख कैसे प्राप्त हो इसके लिए हमारी संस्कृति में चार पुरुषार्थ बताए गए हैं। पुरुषार्थ उन कर्मों को कहते हैं, जिनसे पुरुषत्व सार्थक होता है, चार पुरुषार्थ हैं—१. धर्म २. अर्थ ३. काम एवं ४. मोक्ष। काम पुरुषार्थ से व्यक्ति की मौलिक आवश्यकताएँ सिद्ध होती है। भोजन प्रत्येक जीवधारी का जन्मसिद्ध अधिकार है। शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति से ही समाज बढ़ता है व चलता है। व्यक्ति के जीवनयापन के लिए आवश्यक सब साधनों का इस काम पुरुषार्थ में समावेश है। काम के अभाव में व्यक्ति सुखी नहीं रहता। विश्वामित्र द्वारा चांडाल के यहाँ चोरी कर कुत्ते का मांस खाने का उदाहरण है। काम पुरुषार्थ साधने के लिए 'अर्थ' चाहिए। यह राज्य व समाज की जिम्मेदारी है कि वह व्यक्ति को जीविकोपार्जन हेतु आवश्यक शिक्षण व रोजगार उपलब्ध कराए। इन साधनों के अभाव में समाज में सुस्थिति व शांति नहीं रह सकती।

अर्थ, काम पुरुषार्थ का नियमन करने के लिए आधारभूत पुरुषार्थ है धर्म। धर्म वह है, जिससे धारणा होती है। जीवन जीने के शाश्वत नियमों को धर्म कहते हैं। विज्ञान के नियमों की तरह ही धर्म के आधारभूत सिद्धांत खोजे जाते हैं, उनको बनाया नहीं जाता। धर्म के आधार पर सब क्षेत्रों में धारण के लिए उपयुक्त ढाँचा बनाया जाता है। मनु ने धर्म के १० लक्षण बताए हैं—

धृतिः क्षमा दमाऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधी दशकं धर्मलक्षणम्॥

गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है, "धर्मविरुद्धो कामोऽस्मि" (अ ७ श्लोक ११) अर्थात् सब प्राणियों में धर्म के अनुकूल काम मैं हूँ। धर्म के अनुकूल अर्थोपार्जन हुआ तो वह कल्याणकारी होगा। भरण-पोषण के लिए साधन न जुटे तो समाज बीमार माना जाएगा। अर्थ का अधिक प्रभाव हो जाए व सब मान-प्रतिष्ठा 'अर्थ' के आधार पर होने लगे तो भी समाज बीमार माना जाएगा। अर्थ का अभाव होना घातक है, उसका प्रभाव होना भी घातक है। अर्थ-काम को मर्यादा में बाँधनेवाला धर्म है। धर्म के आधार पर अर्थ-काम की प्राप्ति के मार्ग से आगे बढ़ता हुआ पुरुष व समाज मोक्ष की ओर बढ़ता है। यह है व्यक्ति के सुख का एकात्म मार्ग। इससे परिपूर्ण मानव की निर्मिति होती है। वह जीवनोद्देश्य को प्राप्त कर पाता है। इस प्रकार जब व्यक्ति चतुर्यामी सुख-शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा की प्राप्ति हेतु धर्म के अनुकुल चतुर्यामी पुरुषार्थ—अर्थ, धर्म, काम व मोक्ष करता हुआ परम सुखी मानव का निर्माण होता है, यह परम सुखी व्यष्टि (मानव), समेष्टि (समाज), सृष्टि (प्रकृति) व परमेष्ठी के साथ एकात्म होकर मोक्ष को प्राप्त करता है, इसे ही पंडितजी ने एकात्म मानववाद कहा है।

अरिहंत निवास, सत्ती बाजार, रायपुर
दूरभाष : ९८२७१०७०४७

कविताएँ

● राधेश्याम तिवारी

सुपरिचित लेखक। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। अज्ञेय शिखर सम्मान एवं नईधारा रचना सम्मान से सम्मानित। अनेक पुस्तकों पर देशी-विदेशी विश्वविद्यालयों में एम.फिल. एवं शोध कार्य हुए। संप्रति दैनिक जागरण, दिल्ली से सेवा निवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन।

दर्द

यात्राएँ केवल हम ही नहीं करते
हमारे साथ जूते भी करते हैं
रास्तों में कील-काँटों से
यही हमें बचाते हैं
हम जहाँ-जहाँ भी जाते हैं
पाँवों को पकड़े रहते हैं ये
मगर किसी पवित्र स्थल पर
जाने से पहले
दरवाजे पर ही
छोड़ दिया जाता है इन्हें
उस समय जूते
हो जाते हैं बहुत उदास
और लौट जाना चाहते हैं
अपने जनक के पास
आखिर इनके जनक से ज्यादा
यह दर्द भला कौन समझ सकता है!

माँ

माँ
कोई शब्द नहीं
जिसे उतार सकूँ कविता में
माँ
कोई स्मृति नहीं
जिसे मैं याद करूँ
माँ
कोई नदी नहीं
जिसके किनारे जाऊँ
माँ
कोई पेड़ भी नहीं
जिसका फल छोड़कर लाऊँ
माँ
केवल एक एहसास है
उसी ने रचा है हमें
वह हरदम मेरे पास है।

स्मृतियों का जीवन

बहुत लंबा होता है
स्मृतियों का जीवन
इसलिए
जब कोई चला जाता है
तब भी बची रह जाती हैं
उसकी स्मृतियाँ

स्मृतियाँ
जीवन के साथ आती हैं
मगर जीवन के बाद
शुरू होता है उनका जीवन

जिनकी स्मृतियाँ नहीं होतीं
उनका कोई जीवन भी नहीं होता।

हम छोड़ देंगे

हम छोड़ देंगे
जैसे साँप छोड़ते हैं केंचुल
जैसे डालियाँ छोड़ती हैं फूल

हम छोड़ देंगे
जैसे स्रोत छोड़ती हैं नदियाँ
जैसे समय छोड़ता है सदियाँ

हम छोड़ देंगे
जैसे बैरागी छोड़ता है घर
जैसे परदेसी छोड़ता अपना शहर

हम छोड़ देंगे
कि छोड़ना एक जरूरी क्रिया है
मगर छोड़ने के लिए
यह जरूरी है
कि छोड़ने का बोध भी न रहे
किंतु क्या यह संभव है?

विद्यापति नगर

मैंने कभी नहीं देखा
विद्यापति नगर
मगर तुम्हारे घर जाकर
ऐसा क्यों लगता है
कि हो आया हूँ विद्यापति नगर
कहते हैं,
जब बहुत बूढ़े हो गए थे मैथिल कोकिल
तो गंगा से मिलने को हो गए थे आतुर
मगर इतनी निकट भी न थी
भागीरथी
वह बैठ गए थे जहाँ थककर
वही है विद्यापति नगर
कवि ने सोचा—
'जब गंगा से मिलने
मैं आ सकता हूँ इतनी दूर
तो माँ गंगा भी थोड़ा चलकर
आ सकती अपने बेटे पास
आखिर मिलने की ललक तो
दोनों ओर से होनी चाहिए।'
अंततः फलित हुआ कवि का विश्वास
और गंगा को पाकर अपने पास
विह्वल विद्यापति पुकार उठे—
'बड़ सुख सार पाओल तुअ तीरे…'

किसी आगंतुक के आने पर
कोई गंगा-सा निर्मल चित्त व्यक्ति ही
स्वागत करेगा आगे बढ़कर।

डी-७०/४, अंकुर एन्क्लेव
करावल नगर, दिल्ली-११००९०
दूरभाष : ८८६०८९८३९९

बाल-कहानी

झल्लर बिल्ला और होशियार जुगनू

● आशा शर्मा

बात उन दिनों की है, जब झल्लर बिल्ला नया-नया इस जंगल में आया था। झल्लर ठहरा अव्वल दर्जे का शैतान। कभी चिड़ियों का घोंसला बिखेर देता तो कभी उनके अंडे चट कर जाता। कभी भालू के शहद से अपना मुँह मीठा कर लेता तो कभी खरगोश के बिल के आगे कँटीली झाड़ियों के तिनके डालकर उन्हें बंद कर देता।

जंगल के सब जीव उसकी शरारतों से परेशान हो रहे थे, लेकिन कोई उसे सबक सिखाए तो कैसे? झल्लर महाराज का कोई एक ठिकाना तो होता नहीं। इधर से उधर पूरे जंगल में सैर-सपाटा करते घूमते।

एक बार सब पशु-पक्षियों ने मिलकर शेर महाराज से झल्लर की शिकायत भी कर डाली, लेकिन झल्लर ने भी कच्ची गोलियाँ नहीं खेली थीं। जैसे ही शेर ने उसे पकड़ने के लिए अपने सिपाही भेजे, झल्लर तो यह जा और वह जा। कई दिनों तक जंगल में दिखाई नहीं दिया, तो सिपाही खाली हाथ लौट आए। पशु-पक्षी भी इस संतोष के साथ चुप होकर बैठ गए कि चाहे शेर के डर से ही सही, आखिर झल्लर ने जंगल छोड़ दिया और अब वे सब पहले की तरह आराम से रहेंगे।

लेकिन झल्लर को कम आँकना उनकी गलतफहमी थी। जैसे ही मामला ठंडा पड़ा, झल्लर बाबू फिर हाजिर। इस बार और भी अधिक शरारतों के साथ।

"नहीं, ऐसे नहीं चलेगा। झल्लर को सबक सिखाना महाराज के वश का नहीं है। हमें अपने स्तर पर ही कुछ करना होगा।" गिलहरी ने तय कर लिया था, क्योंकि झल्लर आज बड़ी मेहनत से जमा किए हुए उसके रोटी के टुकड़े चट कर गया था।

"हमारा महीने भर से इकट्ठा किया हुआ घोंसला बनाने का सामान झल्लर ने बिखेर दिया। अब हम अंडे कहाँ देंगी?" गौरैया ने भी शिकायत की।

"क्यों न इसे सबक सिखाया जाए।" खरगोशों ने मिलकर कहा।

"मगर कैसे? एक तो वह रात को शरारत करता है, दूसरे उसका रंग भी काला है, इस कारण रात के अँधेरे में किसी को दिखाई भी नहीं देता और भागकर कहीं छिप जाता है। ऐसे में उसे पकड़ना मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुमकिन है।" कहते हुए तोता रुआँसा हो गया। दो दिन पहले ही झल्लर ने उसकी प्रिय हरी मिर्चें अपने पंजों से जमीन खोदकर उसमें दबा दी थीं।

सुपरिचित लेखिका। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर से 'शंभू सक्सेना बाल साहित्य पुरस्कार' सहित कई सम्मानों से सम्मानित। नेपाली, अंग्रेजी, पंजाबी, उड़िया, सिंधी, कन्नड़, तमिल एवं राजस्थानी भाषा में अनुवाद। संप्रति सहायक अभियंता, विद्युत् विभाग, राजस्थान सरकार।

"झल्लर शैतान ही नहीं बल्कि शातिर भी है। उसे तो रँगे हाथों पकड़ना होगा, ताकि महाराज उसे उचित सजा दे सकें।" कबूतर ने गंभीरता से कहा।

"लेकिन उसे रात के अँधेरे में पकड़ा कैसे जाए? वह दिखाई ही तो नहीं देता।" गिलहरी ने पूँछ उठाते हुए कहा।

"मेरे पास है एक उपाय।" कहते हुए तोता बोला और फौरन उड़ गया। सब हैरानी से देखते रह गए और तोता नजरों से ओझल हो गया।

दो दिन बाद ही झल्लर अपराधी की तरह शेर के सामने लाया गया। उसकी गरदन झुकी हुई थी। उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया था।

"शाबाश तोता राम! लेकिन यह काम आपने किया कैसे?" शेर ने तोते को शाबाशी देते हुए कहा।

"यह काम मैंने अपने दोस्तों, यानी जुगनुओं की मदद से किया है। पिछले दो दिन से मेरे मित्र झल्लर पर नजर रखे हुए थे। कल रात जैसे ही इसने कबूतर के घोंसले में से उसके अंडों को नीचे गिराने की कोशिश की, वैसे ही मैंने शोर मचा दिया। झल्लर भागने लगा तो मेरे दोस्त जुगनू इसकी गरदन पर जा बैठे और इसके साथ ही मैंने अपने सब साथियों को भी चौकन्ना करके इसके पीछे लगा दिया। इसने अँधेरे का फायदा उठाकर भागने की कोशिश की, लेकिन इसकी गरदन पर चिपके जुगनुओं के कारण यह छिप नहीं सका और फिर हम सबने इसे घेरकर रँगे हाथों पकड़ लिया।" तोते ने पूरी घटना बताई तो सब पशु-पक्षी तोते और जुगनुओं की होशियारी की तारीफ करने लगे। झल्लर को शेर राजा ने बंदी बना लिया। साअ

ए १२३, करणी नगर (लालगढ़)
बीकानेर-३३४००१
दूरभाष : ९४१३३६९५७१

आचार्य चतुरसेन की पुस्तकें

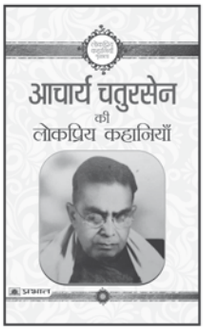

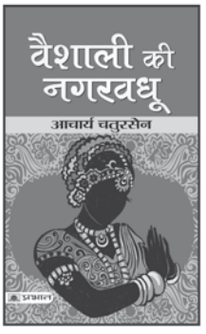

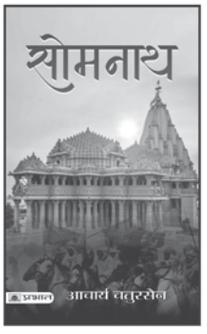

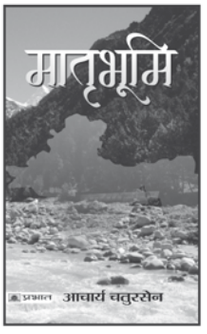

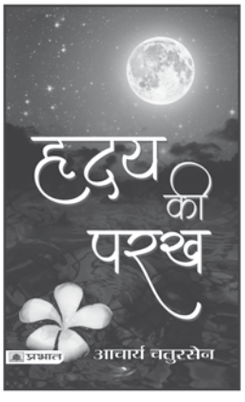

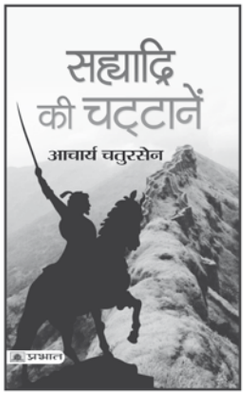

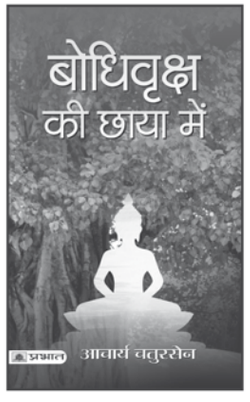

शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की पुस्तकें

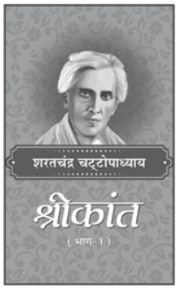

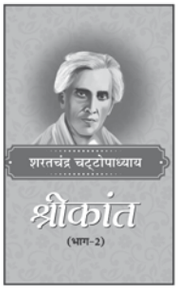

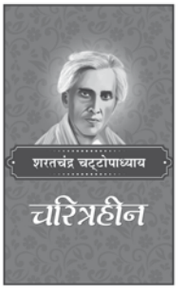

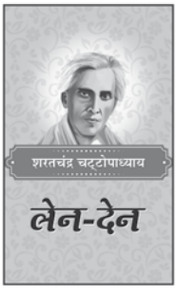

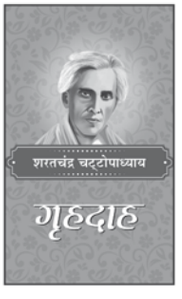

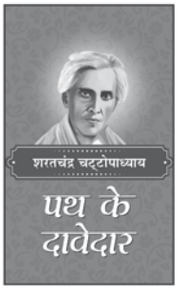

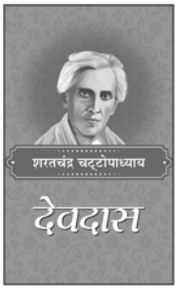

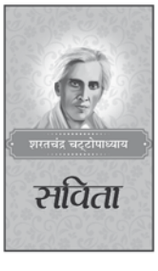

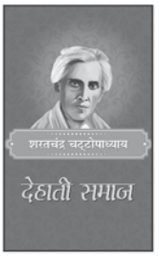

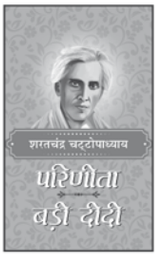

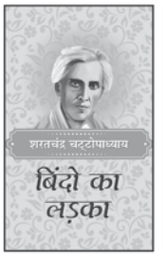

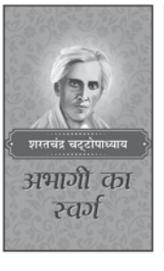

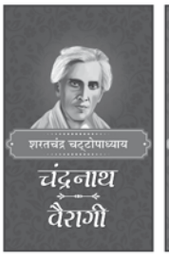

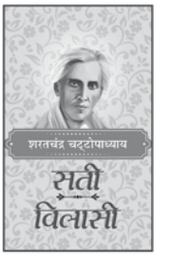

प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002

नवनूतन प्रकाशन की गौरवशाली परंपरा

फोन : 011-23257555

इ-मेल : prabhatbooks@gmail.com

हेल्पलाइन नं. 7827007777

मेडम का डॉगी

मूल : **रमण मेकवान**

अनुवाद : **राजेंद्र निगम**

सुपरिचित लेखक श्री रमणभाई मेकवान का जन्म फरवरी १९४३ में गुजरात के आणंद जिले में हुआ। वे अमूल डेरी, आणंद में तकनीशियन रहे। पिछले पच्चीस वर्षों से वे साहित्य-साधना में रत हैं। उनके गुजराती भाषा में तीस उपन्यास व चार कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं। इसके अलावा विभिन्न गुजराती पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित होती रहती हैं। यहाँ उनकी एक चर्चित गुजराती कहानी का हिंदी रूपांतर प्रस्तुत कर रहे हैं।

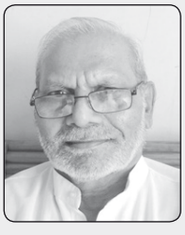

मेडम रेणुका ने कार पार्क की, दरवाजा खोला और उसके साथ ही उनका डॉगी छलाँग लगाकर नीचे कूद गया और सीधा दौड़कर ऑफिस की दहलीज पर खड़ा हो गया। चपरासी मोहन, जो मेडम के केबिन के सामने ही बैठा था, उसने डॉगी को देखा और बिदक गया। वह खड़ा हुआ और केबिन की ओर चल दिया।

मोहन को मेडम का डॉगी बिल्कुल भी पसंद नहीं था। डॉगी आकर सीधे उसकी गोद में बैठ जाता। उसके गंदे पैरों से मोहन के सफेद कपड़ों पर काले-काले दाग पड़ जाते। डॉगी उसका हाथ व मुँह चाटता। उसके बदबूदार मुँह से मोहन को उबकाई आने लगती। एक बार तो उसकी चप्पल की नई पट्टी को डॉगी ने चबा डाला और तब मोहन को खुले पैर अपने घर जाना पड़ा। उसे डॉगी से बहुत घिन थी, लेकिन डॉगी मेडम का था। मेडम को खुश रखने के लिए मोहन यह सब सहन कर लेता।

डॉगी का बर्ताव नवीन के साथ भी वैसा ही था। लेकिन नवीन को डॉगी के साथ सामंजस्य था, बल्कि वह तो डॉगी के साथ मस्ती करता, उसे गोदी में बिठाता। नवीन उसके बच्चों के लिए जहाँ दो रुपए खर्च करने पर भी हिचकता था, वहीं मेडम के डॉगी के लिए वह विशेष बिस्कुट लाकर खिलाता। डॉगी के लंबे घने व रुई जैसे सफेद बालों पर अपने हाथ घुमाता तो वह कभी डॉगी के मुँह पर पप्पी भी करता। नवीन को ऐसा करते देख मोहन को सूग चढ़ती और उसे नवीन पर बहुत गुस्सा आता।

चपरासी मोहन सहित ऑफिस में कुल पंद्रह लोगों का स्टाफ था। इनमें मेडम सहित चार स्त्रियाँ थीं। नवीन सबसे पुराना था, इसलिए उसका स्टाफ पर रुआब रहता। वैसे यदि देखा जाए तो सबसे पुराना कर्मचारी मोहन था। लेकिन चपरासी मोहन पूरे ऑफिस और ऑफिस में आनेवाले मुलाकातियों को चाय आदि पेश करता था, फाइलों को एक मेज से दूसरी मेज पर रखता था और उसे मेडम सहित पूरे ऑफिस में दबकर रहना पड़ता था, अत: उसकी सीनियरिटी का कोई महत्त्व नहीं था। अन्यथा मेडम के पिताजी ने जब ऑफिस शुरू किया था, तब सबसे पहले उन्होंने मोहन को ही लिया था। मेडम के पिताजी ने ऑफिस की शुरुआत मोहन की मदद से ही की थी। लेकिन मोहन कम पढ़ा-लिखा था, इसलिए उसे चपरासी की तरह रखा। उसके बाद नवीन आया। नवीन के बाद तो कई आए और गए। परंतु इस समय सबसे पुरानों में मोहन व नवीन हैं। मेडम भी दो ही वर्ष से हैं, उनके पिताजी को घातक हृदयाघात हुआ और उसके बाद ऑफिस उन्होंने अपने हाथों में ले ली।

पासपोर्ट निकलवाना, विदेश जानेवालों के लिए वीजा दिलवाना और विदेशी मुद्रा के विनिमय से संबंधित सरकारी एजेंसी का काम इस ऑफिस के द्वारा होता था। नगर में इस तरह का काम करनेवाला अन्य कोई ऑफिस नहीं था। इसलिए दिन में लोगों की बहुत भीड़ रहती थी। पूरे दिन ऑफिस में बहुत काम रहता था।

मेडम रेणुका ने एम.काम. किया और फिर उसके लिए अच्छे जीवनसाथी की खोज उसके पिताजी ने आरंभ की। रेणुका की इच्छा विवाह करने की नहीं थी। पिता ने जब बहुत समझाया, तब किसी तरह वह सहमत हुई। नजदीक के एक नगर में रहनेवाले वसंत के साथ उसका रिश्ता तय किया। वसंत सुंदर था। ऊँचे वेतन के साथ उसकी सरकारी नौकरी थी। वसंत की वृद्ध माँ के अतिरिक्त उसकी कोई जवाबदारी नहीं थी। रेणुका ने वसंत के साथ घर बसाया। लेकिन रिश्ते मुश्किल से छह माह ही टिके। वसंत बहुत अधिक कामी था और उसकी इस प्रकृति से रेणुका परेशान हो गई। वैसे रेणुका स्वभाव से स्वमानी व स्वच्छंदी थी।

पति के रूप में वसंत की पराधीनता सहन करने के लिए वह तैयार नहीं थी। पति के रूप में वसंत उसके हक को भोगने की जिद पर रहता और इसके फलस्वरूप दोनों के बीच कलह होती। वसंत बहुत गुस्सा होता और रेणुका पर हाथ भी उठा देता। एक रात उसने रेणुका को बहुत मारा और तब रात में ही उसने रोते-रोते अपने पिता को फोन किया। दूसरे ही दिन सुबह उसके पिताजी गाड़ी लेकर आए और रेणुका पहने हुए कपड़ों में ही गाड़ी में बैठ गई। करीब एक माह के बाद वसंत लेने के लिए आया, बहुत भावनाएँ व्यक्त कीं। उसने रेणुका व उसके पिता से माफी माँगी और तब पिता ने उसे पति-घर जाने के लिए समझाया। परंतु रेणुका टस-से-मस नहीं हुई और उसने कह दिया, 'मैं अब इसके साथ नहीं जानेवाली हूँ। मैं यहीं रहूँगी और आपकी सेवा करूँगी।' उसके कुछ समय बाद ही उसने तलाक ले लिया।

फिर रेणुका ऑफिस के काम में दिलचस्पी लेने लग गई। नवीन सीनियर, चतुर व ईमानदार था। रेणुका उससे प्रशिक्षित हुई। अपने पिता के साथ ऑफिस में बैठने लगी और ऑफिस के काम की अधिक जानकारी लेने लगी। उसके एक वर्ष बाद ही उसके पिता पर हृदयाघात हुआ, जिससे उनका निधन हो गया। पिता की असामयिक मृत्यु से रेणुका अंदर से टूट गई। वह बहुत रोई। उसके बाद जब दु:ख कुछ कम हुआ, तब वह ऑफिस के काम में व्यस्त हो गई। अब रेणुका पूरे ऑफिस की सर्वेसर्वा 'मेडम' बन गई। अब उसे नवीन की जरूरत अधिक रहने लगी। पहले पिता थे, तो जब कुछ कठिनाई होती थी, वह उनसे पूछ लेती थी, लेकिन अब नवीन से पूछना पड़ता था। वैसे दूसरे भी थे, लेकिन वे उतना ही काम जानते थे, जो ऑफिस ने उन्हें सौंपा था, अन्य कामों के बारे में उन्हें सतही ज्ञान होता था। साथ ही नवीन भी चाहता था कि उसे मेडम का अधिक-से-अधिक सामीप्य मिले। लेकिन मेडम के तेवर देखते ही नवीन अदब की मुद्रा में आ जाता था। परंतु मेडम के लिए उसकी इच्छा कुछ अलग ही थी।

कुछ वर्ष पहले डेंगू बुखार फैलने के कारण नवीन की पत्नी की मौत हो गई थी। उसके दो बच्चे थे। वृद्ध माँ थी, जो अकसर बच्चों व घर के काम से त्रस्त रहती थी। इतनी थक जाती थी कि फिर उसे ठीक से साँस लेने में कठिनाई होती थी। रोज वह नवीन को दूसरी बहू लाने लिए कहती रहती थी और नवीन माँ को किसी तरह समझा लेता था। मेडम सिर्फ मोहन को ही मान देती थी। मोहन ऑफिस में सबसे पुराना व मेडम से उम्र में बड़ा था। हालाँकि नवीन भी मेडम से दो-चार वर्ष ही बड़ा था। लेकिन मेडम मन से उसे धिक्कारती थी। उसके साथ सिर्फ काम के अनुसार मतलब रखती थी; हालाँकि नवीन मेडम के नजदीक जाने की कोशिशें करता रहता था। मेडम को खुश रखने के लिए नवीन उनके डॉगी के प्रति प्रेम जताता। डॉगी के लिए महँगे बिस्कुट लाता, इस मंशा के साथ कि वह मेडम की नजरों में चढ़ जाए। वह डॉगी को गोद में लेकर खिलाता, मेडम देखतीं और फिर नजरें घुमा लेतीं और यह सब देखकर नवीन हताश हो जाता।

सुपरिचित लेखक। लेखन के अतिरिक्त गुजराती से हिंदी व अंग्रेजी से हिंदी के अनुवाद कार्य में प्रवृत्त। गुजराती से हिंदी में कई कहानियाँ देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। विभिन्न लेखकों व विषयों की गुजराती से हिंदी में अनुवादित बारह पुस्तकें प्रकाशित। संप्रति बैंक ऑफ महाराष्ट्र में प्रबंधक पद से स्वैच्छिक सेवा-निवृत्ति।

मोहन ने शादी नहीं की थी। वह 'कुँवारा' ही रह गया था। जब उसे ऑफिस में नौकरी मिली और उसी वर्ष उसके पिता का अवसान हो गया। मोहन का एक छोटा भाई है। मरते समय मोहन को पिता ने छोटे भाई की जवाबदारी सौंपी थी। उसने छोटे भाई को पढ़ाया और फिर उसे अच्छी नौकरी मिल गई, इसलिए उसकी शादी कर दी। उसके दो लड़के हुए। छोटे भाई का संसार बसाने में मोहन का खुद का संसार तिरोहित हो गया। मोहन जब ऑफिस से घर लौटता, तब छोटे भाई के बच्चे उसे 'बड़े पापा, बड़े पापा!' कहकर लिपट जाते। मोहन रोज बच्चों के लिए कुछ-न-कुछ ले जाता। बच्चे खुश हो जाते और मोहन को उसी में उसका संसार दिखाई देता। जब मेडम अच्छे मूड में होतीं, तब मोहन की ओर मुसकराकर कहती थीं, 'क्यों मोहनजी, शादी नहीं करते? शादी कर लो, अभी बहुत देर नहीं हुई है' और मोहन जवाब देने के स्थान पर अपनी नजरें झुका लेता। उसे यह कहने की इच्छा होती थी कि 'मेडम! आपने शादी कर क्या निहाल कर दिया?' लेकिन मेडम के लिए अपमानजनक होने के कारण मोहन यह नहीं कह पाता था। लेकिन नवीन को मन की बात मेडम को कहने की बहुत इच्छा होती थी, परंतु उसकी जीभ भी मोहन की तरह तलुए से चिपक जाती थी। मेडम दिन में दो से तीन बार नवीन को ऑफिस में बुलातीं। कभी ऐसा काम आ जाता कि नवीन को लंबे समय तक मेडम के पास ऑफिस में रहना पड़ता और तब फाइल लेते या देते समय मेडम के हाथों का स्पर्श हो जाता, तब उसे बहुत अच्छा लगता और उसकी इच्छा होती कि वह मेडम के सम्मुख अपने मन को खोलकर रख दे, लेकिन वह उस इच्छा को मन में ही दबा लेता, क्योंकि अभी तक उसका मेडम से पूरा परिचय नहीं हुआ था। मेडम के चेहरे से उनका मिजाज देखकर ही उसके मनोभाव ठंडे पड़ जाते थे। नवीन घर पर बुढ़िया की कलह से ही परेशान हो चुका था। उसे एकलता कचोटती रहती थी। रागिणी उसके साथ घर बसाने के लिए तैयार थी। उसने कई बार खुल्लमखुल्ला कहा भी था और उसके घर भी वह आती-जाती थी। रागिणी ने उसकी माँ व बालकों का मन भी जीत लिया था। नवीन की माँ ने तो कहा भी था, 'वह जो तुम्हारे ऑफिस से अपने यहाँ आती है, वह क्या बुरी है? मुझे तो वह पसंद है और बच्चे भी उससे हिलमिल गए हैं।' लेकिन रागिणी का चयन करने के लिए उसका दिल नहीं मानता था।

रागिणी की शादी हुई थी, लेकिन उसका पति बहुत शराब पीता था और उसे बेहद मारता था, इसलिए उसने किसी तरह दो वर्ष बिताए और उसके बाद अपने मैके आ गई। नवीन उसे पसंद था, इसलिए नवीन को वह आकर्षित करने की कोशिश करती थी, लेकिन फिर उसे लगा कि नवीन के समक्ष उसकी दाल गलनेवाली नहीं है। इसलिए उसने सविता के द्वारा संदेश भिजवाया। सविता विधवा थी और कुछ पढ़ी-लिखी थी; उसे दो बालकों व खुद का पेट भरने की समस्या थी। वह नवीन के पास ही रहती थी, वह नवीन के सामने गिड़गिड़ाई। तब मेडम के पिताजी जिंदा थे। नवीन ने उनसे बात की। सांत्वना के तौर पर उन्होंने सविता को ऑफिस में रख लिया। नवीन ने सविता की बात पर भी कोई ध्यान नहीं दिया।

ऐसा लगने पर कि मेडम को वह अपनी बात नहीं कह सकेगा, उसने मोहन को साधने की कोशिश की। नवीन को पूरा विश्वास था कि मोहन मेडम से बात करेगा ही। उसने मोहन को लालच दिया और यदि बात पक्की हो गई तो वह उसे 'कुछ' देगा। बात सुनकर मोहन उसे तीखी नजरों से देखने लगा और कहने लगा, 'साहब! मैं मेडम से ऐसी बात कैसे कह सकूँगा, भला मैं कौन और मेडम कौन? मुझे मरना नहीं है, मेडम मेरा तुरंत यहाँ से हिसाब-किताब पूरा कर देंगी।' नवीन निराश हो गया।

मेडम के जन्मदिवस पर उनकी एक हमउम्र मित्र ने उसे भेंट में डॉगी दिया था। मोहक, सुंदर, लंबे-लंबे बालवाला डॉगी और छोटी-छोटी आँखें, जो उसके घने बालों में ढक जाती थीं। तीखी चीख जैसा वह भौंकता था। मेडम पहले दिन अपने बच्चे की तरह उसे ऑफिस में लेकर आईं, तब पूरा ऑफिस उसे हैरत से देखता रहा। मेडम ने डॉगी को अपनी बगल से उतारकर मोहन को दिया और कहा, 'लो, इसे सँभालो और ध्यान रखना, कहीं यह बाहर न निकल जाए, नहीं तो कुत्ते इसे खा जाएँगे।' मेडम डॉगी को सौंपकर अपने केबिन में चली गईं और तुरंत घंटी बजाई। मोहन हाँफने जैसा हो गया। 'डॉगी को लेकर जाऊँ या···'। मोहन को भ्रम की स्थिति में देखकर नवीन उसके बचाव में आया, 'लाओ, डॉगी को मेरे पास, तुम जाओ' और नवीन ने डॉगी को अपने बगल में ले लिया। पास बैठी रागिणी बड़बड़ाने लगी, 'मेडम का डॉगी'।

डॉगी फिर उस दिन से नवीन से घुल-मिल गया। मोहन ने राहत महसूस की और नवीन को मेडम के नजदीक जाने का एक सेतु मिल गया।

लेकिन ऑफिस में डॉगी की वजह से परेशानियाँ बढ़ गईं। मोहन की नई चप्पल की पट्टियाँ डॉगी ने चबा लीं। रागिणी का दुपट्टा खींच लिया और डॉगी उसके साथ खेलने लगा। सविता की काली जूतियों पर उसने पेशाब कर दिया। जुबेदा के जीजा ने उसके लिए दुबई से एक महँगा पर्स भेजा था। जुबेदा जब कंधे पर पर्स लटकाकर ऑफिस आती थी, तो पूरा ऑफिस उसे देखता रहता था। कुरसी पर पर्स लटकाकर जुबेदा वॉशरूम गई, डॉगी ने पर्स खींचा और दाँत गड़ाकर उसके टुकड़े कर दिए। पर्स की चीजों के इधर-उधर बिखर जाने से जुबेदा की आँखों में आँसू आ गए। उसने डॉगी को पर्स की पट्टी चबाते देखा। वह तो इस जुनून में आ गई थी कि वह भी उसके सिर पर पैर रखकर उसका हाल पर्स जैसा कर दे, लेकिन क्या करे, मजबूरी थी।

नवीन ने मेडम के साथ परिचय बढ़ाने के लिए मोहन का सहारा लेने की कोशिश की थी, लेकिन मोहन ने कोई प्रतिभाव नहीं दिया। इसलिए उसने मेडम के डॉगी पर प्रेम बरसाना शुरू किया। यह सब करने का उसका उद्देश्य मेडम से नजदीकियाँ बढ़ाना था। ऑफिस में मेडम के डॉगी से अधिकांश लोग नाराज थे। डॉगी पूरे ऑफिस में घूमता रहता था और शरीर के अन्य भागों को लबूरता रहता था, इसलिए ऑफिस में जगह-जगह उसके बाल पड़े रहते थे। अत: मोहन को दिन में कई बार बुहारना पड़ता था। इसलिए उसका भी मेडम के डॉगी के प्रति छद्म रोष था। रागिणी का महँगा दुपट्टा, सविता की जूतियाँ, जुबेदा का पर्स, डॉगी के कारण बेकार हो गए थे। इस तरह मोहन की तरह डॉगी के प्रति सबको रोष था। लेकिन नवीन डॉगी की बहुत देखरेख रखता था, इसलिए स्टाफ में नवीन के प्रति भी सबकी नाराजगी थी। रागिणी की इच्छा नवीन से विवाह करने की थी व नवीन की माँ को भी रागिणी पसंद थी, लेकिन नवीन की दिलचस्पी मेडम में थी। मेडम सुंदर तो थी ही, साथ में उनका लाखों का बँगला, ऑफिस व अन्य मिल्कियत पर भी नवीन की नजर थी। रागिणी सुंदर थी, लेकिन उससे क्या? उसका वेतन तो उससे भी कम था और फिर स्वयं के सजने-धजने में वह बहुत खर्च कर देती थी। यह सब सोचते हुए नवीन माँ की बातों को ध्यान में नहीं लेता था।

मेडम ने गाड़ी पार्क की, दरवाजा खोला और तुरंत डॉगी बाहर कूदा। सीधे ऑफिस की ओर गया, लेकिन रास्ते में दो कुत्ते बैठे थे। पहले ऐसा कभी नहीं हुआ, लेकिन आज कुत्तों ने डॉगी को घेर लिया। पीछे आ रही मेडम घबरा गईं। कुत्तों ने डॉगी की गरदन दबोच ली। डॉगी बचने के लिए छटपटाने लगा। डॉगी की हालत देख मेडम की जान सूखने लगी। पत्थर फेंकने के लिए इधर-उधर नजर घुमाई, लेकिन कहीं पत्थर नजर नहीं आया। इसलिए वे सीधी दौड़कर ऑफिस गईं और 'नवीन! मेरा डॉ···गीईई!' कहते हुए उनकी आवाज रुँध गई। मोहन ने मेडम की आवाज सुनी, वह तुरंत बाहर आया। दो कुत्ते मेडम के डॉगी के अस्थि-पंजर ढीले कर रहे थे। मोहन ने तुरंत ऑफिस से लकड़ी ली और कुत्तों को मार भगाया। डॉगी लहूलुहान होकर निश्चेष्ट पड़ा था। बगैर एक पल का विलंब किए उसने कमीज उतारी, डॉगी को उसमें लपेटा और बगल में दबाकर साइकिल पर दवाखाने ले गया। नवीन भारी मन से मोहन को जाते हुए देखता रहा।

समय पर हुए इलाज के कारण मेडम का डॉगी बच गया। मेडम अब मोहन पर जी-जान से निछावर हो गईं और सबको आश्चर्यचकित करते हुए उन्होंने मोहन से विवाह कर लिया।

१०-११, श्री नारायण पैलेस,
शेल पेट्रोल पंप के सामने,
झायडस हॉस्पिटल रोड,
थलतेज, अहमदाबाद-३८००५९
दूरभाष : ९३७४९७८५५६

गजलें

● सुरेंद्र शजर

: एक :

घर से बाहर निकल नहीं सकते
पाँव हैं और चल नहीं सकते

मोम तो हम जरूर हैं लेकिन
तेरे साँचे में ढल नहीं सकते

तुम पले हो गुलों के साए में
मेरे हमराह चल नहीं सकते

लौटकर हम भी जा न पाएँगे
तुम भी रस्ता बदल नहीं सकते

खुद चुना था ये रास्ता तुमने
कफ-ए-अफसोस मल नहीं सकते

उन चिरागों की जिंदगी क्या है
जो सरे-राह जल नहीं सकते।

: दो :

दिल की दहलीज पर कदम रक्खा
आ गए तुम मेरा भरम रक्खा

दोस्ती प्यार में बदल जाती
मिलना-जुलना तुम्हीं ने कम रक्खा

तेरे होठों के फूल ताजा रहें
अपनी आँखों को मैंने नम रक्खा

शायरी में निखार आएगा
तुमने जारी अगर सितम रक्खा

इस करम का तेरे जवाब नहीं
मेरे हिस्से में गम ही गम रक्खा

खुद-ब-खुद सहल हो गई है 'शजर'
मैंने जिस राह में कदम रक्खा

: तीन :

सोचिए तो सबब नहीं मिलता
दिल मगर उससे अब नहीं मिलता

दिल का झुकना बहुत जरूरी है
सर झुकाने से रब नहीं मिलता

उम्र भर रोज-ओ-शब में जीकर भी
हासिल-ए-रोज-ओ-शब नहीं मिलता

मेरा मिलना मुहाल है मुझको
वरना वो मुझसे कब नहीं मिलता

नेकियों का सिला 'शजर' साहब
पहले मिलता था अब नहीं मिलता।

: चार :

नहीं रहेगा हमेशा गुबार मेरे लिए
खिलेंगे फूल सर-ए-रहगुजार मेरे लिए

कभी तो होगी किसी को मेरी कमी महसूस
कभी तो होगा कोई सोगवार मेरे लिए

तरस गए थे मेरे लब हँसी को जिसके सबब
हुआ है आज वही अश्कबार मेरे लिए

वो मेरे कुर्ब से महरूम ही रहे शायद
वो मुंतजिर है समंदर के पार मेरे लिए

मेरी तलाश में होगा मेरा नसीब कभी
वो वक्त लाएगा परवरदिगार मेरे लिए।

: पाँच :

ये : फसादात ये : मजहब के भयानक झगड़े
कैसा माहौल है हम लोग कहाँ रहते हैं

पहले रहते थे मकानों में बड़े चैन से लोग
और हम जेहन में लोगों के मकाँ रहते हैं

सुपरिचित गजलकार। ऑल इंडिया रेडियो द्वारा अप्रूव्ड कवि। देश के तकरीबन सभी शहरों में मुशायरों में शिरकत। कराची, दुबई, सऊदी अरब, जेद्दा, रियाद, दोहा, कतर में मुशायरों में शिरकत।

सबने देखी हे तबाही बड़ी खामोशी से
तुम तो कहते थे वहाँ अहले-जहाँ रहते हैं

जो न : सोचें कभी अपने लिए दुनिया में 'शजर'
ऐसे लोगों के ही बस नाम-ओ-निशां रहते हैं।

: छह :

उसके और हमारे ख्वाब
धूल में मिल गए सारे ख्वाब

ताबीरें सब धुँधली थीं
फिर भी खूब सँवारे ख्वाब

जब से नींद उड़ी अपनी
फिरते मारे-मारे ख्वाब

सबने सँजोकर रक्खे हैं
किसको नहीं हैं प्यारे ख्वाब

सुबह की मंजिल आने तक
दिल को कुछ समझा रे ख्वाब।

१/१५८ सदर बाजार
दिल्ली कैंट, दिल्ली-११००१०
दूरभाष : ९८७१५५७७०३

देवलोक में मंत्रिमंडल की बैठक

• अश्विनीकुमार दुबे

देवलोक के राजा इंद्र को हमेशा अपनी कुरसी खतरे में दिखाई देती है। जहाँ भी असुर दल मिल-जुलकर कोई यज्ञ करता हुआ दिखाई दिया कि इंद्र की चिंता बढ़ जाती। कई बार असुरों ने उनकी कुरसी हिला दी थी। वह तो पार्टी हाईकमान विष्णु अपने साम-दाम-दंड-भेद इस्तेमाल करते हुए किसी प्रकार देवलोक की लाज बचाए हुए हैं। एक बार असुर राजा बलि ने इंद्र को लगभग अपदस्थ कर दिया था, वह तो ऐनवक्त पर विष्णु को उसकी कमजोरी समझ में आ गई कि यह राजा बड़ा दानवीर है। घर आए किसी भी याचक को खाली हाथ नहीं जाने देता। इस लिहाज से यह बड़ा मूर्ख है। विष्णु ने उसकी सहज मूर्खता का फायदा उठाया। बन गए वामन अवतार और पहुँच गए उसके यहाँ याचक का रूप धरकर। जैसी कि उस असुर राजा की आदत थी। उसने कहा, 'क्या चाहिए भिक्षुक ?'

वामन ने भोलेपन को ओढ़ते हुए कहा, 'बस, तीन कदम जमीन।'

राजा हँसा कि यह बित्ताभर का आदमी तीन कदम जमीन माँगता है। उन्होंने बिना सोच-विचार के कहा, 'नाप ले, जहाँ तुम्हें चाहिए तीन पग जमीन।'

विष्णु ने अपना विराट् रूप धरकर धरती, आसमान, पाताल सब नाप लिया। बाद में राजा की विनती सुनकर उसे पाताल में रहने की जगह दे दी। इस प्रकार इंद्रासन बचाया पार्टी हाईकमान ने अपनी कूटनीति से। माना कि विष्णु कूटनीति में कुशल हैं। वक्त-जरूरत पर अपने छल-बल से देवताओं की रक्षा करते रहते हैं, परंतु देवताओं को पूरी तरह उन पर निर्भर नहीं होना चाहिए। देवताओं को भी अपना काम मुस्तैदी से करते रहना चाहिए। बार-बार विष्णु की शरण में जाना ठीक नहीं है। उनकी नींद में खलल पड़ता है। वे ठीक से सो भी नहीं पाते कि देवता अपनी समस्याएँ लेकर उन्हें जगाने पहुँच जाते हैं। यह बात ठीक नहीं है। अब हमें अपने मंत्रिमंडल में चुस्ती लानी होगी। सभी मंत्रियों के कार्य-व्यवहार पर हमें नजर रखनी होगी। ऐसा सोचकर इंद्र ने पार्टी नेताओं और देवलोक के मंत्रियों की एक समीक्षा बैठक बुलाने का निर्णय लिया।

बैठक की तारीख तय हुई। जैसा कि होता है, सभी मंत्रियों और नेताओं को सूचना भिजवाई गई कि अपने-अपने विभाग के विकास कार्यों का विवरण लेकर निश्चित तारीख को बैठक में अवश्य उपस्थित हों।

सुपरिचित व्यंग्य-लेखक एवं उपन्यासकार। 'घूँघट के पट खोल', 'शहर बंद है', 'अटैची संस्कृति', 'अपने-अपने लोकतंत्र', 'फ्रेम से बड़ी तसवीर', 'कदंब का पेड़' (व्यंग्य-संग्रह), 'जाने-अनजाने दुःख' (उपन्यास)। उत्कृष्ट लेखन के लिए भारतेंदु पुरस्कार, अखिल भारतीय अंबिका प्रसाद दिव्य पुरस्कार प्राप्त।

कागज एक कार्यालय से दूसरे कार्यालय दौड़ने लगे। सचिव, उप-सचिव और संयुक्त सचिव सहित विभिन्न मंत्रालयों के सभी मातहत प्रगति-पत्रक बनाने में जुट गए। देवलोक के देवताओं और उनके स्टाफ में सुरापान का बहुत चलन है। होता है, सत्ता में रहने के कारण सुरापान की आदत सहज ही पड़ जाती है। फिर इंद्र का दरबार आए दिन सजता ही रहता है, जिसमें नए-नए ब्रांड की मदिरा पीने को मिलती रहती है। मेनका, रंभा और उर्वशी का तो कहना ही क्या! उनके यहाँ रहने से ही देवलोक की शान है। मौका पड़ने पर वे शक्तिशाली असुर नेताओं को अपनी अदाओं से परास्त कर देती हैं। इंद्र को उनका बड़ा आसरा है। वे हैं तो इंद्रासन है। न जाने कितनी बार उन्होंने ही अपने रूप जाल में बड़े-बड़े असुर नेताओं को फँसाकर उनकी मिट्टी पलीत कर दी। इस प्रकार इंद्रासन की सुरक्षा में उनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। परंतु इन दिनों इंद्र सहित पूरा देवलोक मदिरापान और इन नर्तकियों के नाच-गान में ही खोया हुआ है। किसी परेशानी का अंदेशा हुआ होगा, इसलिए इंद्र ने आपातकालीन समीक्षा बैठक आहूत की है।

निश्चित तिथि में समीक्षा बैठक आयोजित की गई। इंद्र कुछ चिंतित दिखाई दिए। जल संसाधन विभाग तो उन्हीं के पास है। उन्होंने अपने राज्यमंत्री वरुण को आदेश दे दिया था कि सभी जरूरी फाइलों सहित वे सभास्थल में समय से पहुँच जाएँ। असुरों की विपक्षी पार्टी जमीनी स्तर पर बहुत काम कर रही थी। उनकी लोकप्रियता भी दिनोदिन बढ़ती जा रही थीं, जिसके कारण इंद्रासन डोलने का खतरा बढ़ता देखकर ही यह आपात बैठक बुलाई गई थी। बहुत दिनों से इंद्र को यह पता ही नहीं चल पा रह था कि उनके मंत्रिगण अपने-अपने विभाग में क्या गुल खिला रहे हैं। कुछ

प्रगति वगैरह हो रही है कि ऐसेई मीडिया में हल्ला-गुल्ला होता रहता है। हर विभाग के पास विकास कार्यों से ज्यादा बजट तो उनके प्रचार-प्रसार का होता है। यह इस मंत्रिमंडल की नीति है, जिससे जनता में अच्छी छवि बनी रहती है और मीडियावाले भी खुश रहते हैं। बड़ा खराब जमाना आ गया है। आजकल जनता से ज्यादा मीडियावालों को खुश रखना पड़ता है। इनका कोई भरोसा नहीं, न जाने किस बात पर रिसा जाएँ और जिस सरकार का माल खाते हैं, उसी की आलोचना करने में जुट जाएँ। कम-से-कम नमक की तो बजाओ, भई। नहीं बजाते बहुत लोग। माल भी खाएँगे और आलोचना भी करेंगे। भलाई का तो जमाना नहीं रहा अब।

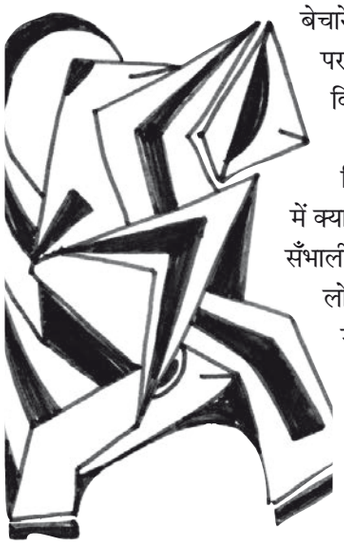

अधिकांश माननीय मंत्रिगण अपनी-अपनी फाइलें लेकर बैठक में उपस्थित हो गए। इंद्र ने भूमिका बाँधी, 'आप सब लोगों को पता ही होगा कि हमारे विपक्षी लोग इन दिनों ज्यादा सक्रिय हो गए हैं। वे आए दिन तपस्या, यज्ञ और पूजापाठ करते हुए शक्ति अर्जित करते जा रहे हैं। उनकी लोकप्रियता भी इसी कारण दिनोदिन बढ़ती जा रही है। इसमें कोई दो मत नहीं कि हमारी सरकार काम कर रही है। बहुत काम कर रही है, परंतु प्रचार-प्रसार का पर्याप्त फंड होने के बावजूद जनता में हमारी लोकप्रियता कम होती रही है, यह चिंता का विषय है। मेरा यह कहना है कि काम हो या बिल्कुल न हो, इससे हमारा कोई सरोकार नहीं, परंतु जनता में हमारी लोकप्रियता कम नहीं होनी चाहिए। जनता की मुश्किलें दूर हों, न हों, इससे हमें कोई मतलब नहीं। हमें मतलब है अपनी उदार छवि से। यह छवि हमें येन-केन-प्रकारेण जनता के दिलों में बनाए रखनी है। विरोधी बहुत सक्रिय हो रहे हैं। जनता आए दिन विकास कार्यों में धाँधली के प्रश्न उठाती है। मीडिया भी यदा-कदा हमारे सुस्त प्रशासन की चर्चा करता रहता है। इसलिए हमें अपने विकास कार्यों की समीक्षा करना आवश्यक प्रतीत हुआ, इस कारण आज की यह बैठक बुलाई गई है, जिसमें विभिन्न विभागों के प्रगति कार्यों का विवरण आप लोग प्रस्तुत करेंगे, जिस पर सदन में चर्चा होगी। सुझाव और नीतियों पर अमल किया जाएगा। सबसे पहले हम स्वास्थ्य मंत्री धन्वंतरिजी से अनुरोध करेंगे कि वे अपने विभाग का प्रगति प्रतिवेदन प्रस्तुत करें।' इतना कहकर इंद्र बैठ गए।

धन्वंतरिजी ने बोलना प्रारंभ किया, 'हम अपनी प्राचीन आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति के लिए कटिबद्ध हैं। इसके प्रचार-प्रसार के लिए हर जगह आयुर्वेदिक औषधालय खोले जा रहे हैं, जिसमें पंचकर्म सहित सभी आयुर्वेदिक चिकित्सा की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। आयुर्वेदिक दवाओं का भी पिछले दिनों उत्पादन काफी बढ़ा है। इस प्रकार मेरे विभाग का काम ठीक-ठाक चल रहा है।'

इंद्र ने कुछ अखबारों की कटिंग दिखाते हुए कहा, 'आयुर्वेदिक दवाओं में भी इन दिनों मिलावट हो रही है। आयुर्वेदिक दवाओं के प्रति लोगों की अच्छी धारणाएँ नहीं हैं। लोग कहते हैं कि आयुर्वेदिक और प्राकृतिक चिकित्सा वाले बातें तो खूब ऊँची-ऊँची करते हैं, परंतु मामूली सा रोग भी ठीक होने में वहाँ सालों लग जाते हैं। इंतजार करते हुए आदमी इस पछतावे में मर जाते हैं कि काश, ऐलोपैथी दवाएँ खाते तो बच जाते। आपके विभाग में सिर्फ हल्ला-ही-हल्ला है। जनता आयुर्वेद को पूजती है, परंतु इलाज विदेशी चिकित्सा पद्धति से करती है। इस प्रकार आपके विभाग की जड़ें खोखली होती जा रही हैं। कृपा कर कुछ करिए धन्वंतरिजी।'

वे चुपचाप अपना कलश हाथ में लिये बैठे रहे। कुछ बोले नहीं। बेचारे बोलते भी क्या? सालोसाल से शोध और विकास पर उनके विभाग ने कोई ध्यान नहीं दिया। इसलिए लोग विदेशी चिकित्सा पद्धति की ओर जा रहे हैं।

विश्वकर्माजी बुजुर्ग व्यक्ति हैं। सालों से निर्माण विभाग सँभाल रहे हैं। उनसे पूछा गया, 'आपके विभाग में क्या प्रगति है?' उन्होंने काँपते हुए हाथों से अपनी फाइलें सँभालीं और बोले, 'आजकल किले और मंदिर निर्माण में लोगों की रुचि नहीं रह गई। अयोध्या में एक विशाल मंदिर बनाए जाने की घोषणा हुई थी, परंतु वहाँ का विवाद श्रीमान जानते ही हैं। 'अक्षरधाम' जैसे एक-दो विशाल मंदिर पिछले दिनों बनाए गए हैं। शेष जनता की रुचि और माँग पर निर्भर है।'

इंद्र ने कहा, 'इन दिनों बड़े-बड़े होटल, बहुमंजिला इमारतें और शॉपिंग कॉम्प्लेक्स बनाए जाने का चलन है, इसमें सरेआम विदेशी तकनीक अपनाई जा रही है। यह हमारे पुरातन ज्ञान की अवहेलना है। किले और मंदिर बनाए जाने के जमाने अब गए। अब तो सर्वसुविधायुक्त विशाल भवनों के निर्माण की माँग जोर पकड़ रही है। इस दिशा में आपकी कोई उल्लेखनीय उपलब्धि दिखाई नहीं देती। विदेशी तकनीक के चलते एक दिन आपका ज्ञान नेपथ्य में चला जाएगा? कृपा कर आप भी कुछ नया करने का प्रयास करिए।'

वित्त मंत्रालय लक्ष्मीजी सँभालती हैं। क्योंकि वे पार्टी हाईकमान विष्णुजी की पत्नी हैं, इसलिए उनसे कोई कुछ नहीं बोलता। फिर वित्त विभाग उनके पास है। नाराज हो जाएँ तो किसी भी विभाग के बजट में कटौती कर दें। उन्हें विष्णु भगवान् के पैर दबाने से ही फुरसत नहीं मिलती। वे आज मीटिंग में भी नहीं आईं। उन्होंने अपने विभाग के राज्यमंत्री कुबेर को कुछ फाइलें देकर बैठक में भेज दिया। कुबेर ने खड़े होकर बोला, 'इस समय हमारी वित्तीय स्थिति संतोषजनक है। देशी मुद्रा बढ़ाने के लिए हमने पिछले बजट में जो नए कर प्रस्तावित किए थे, उनके अच्छे परिणाम आए हैं। इस समय देश और विदेश में हमारे अध्यात्म का बाजार अच्छा चल रहा है। विदेशों में तो यह बहुत लोकप्रिय है। इससे विदेशी मुद्रा के बढ़ने की संभावनाएँ हैं। हम इस दिशा में प्रयास कर रहे हैं।'

'विदेशों में जमा देशी धन निकालने की दिशा में आपके प्रयास नगण्य हैं। रुपए का अवमूल्यन हो रहा है। सोने के भाव आसमान छू रहे हैं। मुझे मालूम है कि यह सब विपक्षियों की शरारत है। परंतु चिंता का

विषय यह है कि इसी प्रकार यदि विपक्षी पार्टीवाले हमारी अर्थव्यवस्था में सेंध लगाते रहे तो हम अपना इंद्रासन कैसे बचा पाएँगे? कृपा कर इंद्रासन की रक्षा कीजिए।' इंद्र ने कुबेर से कहा।

हनुमानजी की गदा देखकर इंद्र को भी डर लगता है, परंतु खेल मंत्रालय उन्हीं के पास है और इस ओलंपिक में, जहाँ देवता जन्म लेते हैं, उस देश की बड़ी भद्द हुई है। इसलिए कैबिनेट में बहुत असंतोष था। खेलों के गिरते स्तर पर हनुमानजी से इंद्र ने संकोचपूर्वक पूछ ही लिया, 'ओलंपिक में आपके विभाग की गिरती शाख के विषय में आपको कुछ कहना है?'

बजरंगबली ने गदा घुमाते हुए कहा, 'आजकल देवताओं के देश में ब्रह्मचर्य व्रत का पालन नहीं हो रहा है, इसलिए लोगों में स्टेमिना समाप्त होता जा रहा है। अब तो रामजी ही कृपा करें, तब कुछ संभव है। अफसोस है कि ये लोग रामजी की शरण छोड़कर आसुरी जीवनशैली अपना रहे हैं, इसलिए यह सब हो रहा है। मैं रामजी से इस संदर्भ में चर्चा करूँगा।'

बात रामजी पर आ गई, इसलिए इंद्र चुप रहे और मानव संसाधन मंत्री गणेशजी की ओर उन्मुख हुए, 'गणेशजी, आजकल लोग देशी विश्वविद्यालयों को छोड़कर विदेशों में जाकर शिक्षा प्राप्त करने के लिए ज्यादा उन्मुख हैं। ऐसा क्यों गणेशजी अपनी सूँड़ पर हाथ फेरते हुए बोले, 'ये सब आसुरी विद्या का प्रभाव है। हमारी शिक्षा त्याग, तपस्या, चरित्र और सेवा पर आधारित है। इसकी ओर लोगों का झुकाव कम होता देखकर मैं भी चिंतित हूँ। हालाँकि हमने भी उनकी तरह के कई लुभावने फॉर्मूले, जैसे ऊँचे पद और मोटे पैकेज आदि का लालच अपनी शिक्षा पद्धति में अपनाना शुरू कर दिया है। आगे चलकर उसके परिणाम आएँगे। हम यों ही असुरों को आगे नहीं बढ़ने देंगे। हमें इंद्रासन की पूरी चिंता है।'

सरस्वतीजी शुभ्र वस्त्रों में दूर शांत, गंभीर और मौन बैठी थीं। उनके पास संस्कृति मंत्रालय है। इंद्र ने उनसे पूछा, 'आपके रहते हुए देवताओं के देश में अप-संस्कृति का बोलबाला बढ़ता जा रहा है। आपका सत्साहित्य, शास्त्रीय गायन-वादन और पुरातन नत्य शास्त्र आदि में ज्यादा लोगों की रुचि नहीं रह गई है। इससे तो असर संस्कृति को बढ़ावा मिलेगा और एक दिन वे यहाँ हमला करके हमें कहीं का नहीं छोड़ेंगे। आपने ही कभी कहा था कि किसी राज्य को कमजोर करना हो तो पहले उसकी संस्कृति को मिटा दो। इस प्रकार मुझे लगता है कि असुरों ने हमारी संस्कृति पर पीछे से हमला शुरू कर दिया है। आप क्या कहती हैं?'

सरस्वती ने गंभीर एवं अत्यंत मधुर वाणी में कहा, 'एक तो संस्कृति विभाग को सबसे कम बजट आवंटित किया जाता है। दूसरे आधे से ज्यादा बजट तो आपके राजदरबार की नर्तकियों, मशखरों और चाटुकार लेखकों-कवियों पर खर्च हो जाता है। हमें अपने कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए हमेशा धनाभाव से जूझते रहना पड़ता है, इसलिए लोगों ने यह अफवाह फैला रखी है कि सरस्वती और लक्ष्मीजी में बैर है। जबकि यह सरासर झूठ है। संस्कृति, साहित्य और कला के विकास में समय लगता है। यहाँ धैर्य और धन दोनों की जरूरत होती है। दुर्भाग्य से हमारे विभाग में दोनों की कमी है।

'कृपया ध्यान दीजिए।'

सरस्वती ने इंद्र को एकदम चुप कर दिया। वैसे भी उनके सामने टिकता ही कौन है! इंद्र ने अब विदेश मंत्री नारजी की ओर देखा और पूछा, 'आपके विभाग में क्या प्रगति है?'

नारदजी ने पहले नारायण-नारायण कहा, फिर बोले, 'कई बड़े देशों से हमने मैत्री संबंधी स्थापित करने की कोशिश की है। इन दिनों सब असुर संस्कृति के प्रभाव में हैं। उनके देश में जाओ तो खूब स्वागत सत्कार करते हैं और हमारी हाँ में हाँ मिलाने से भी नहीं चूकते, परंतु पीठ फिरते ही वे अपना राग अलापने लगते हैं। इस स्थिति में समझ में नहीं आता कि किस पर भरोसा करें, किस पर न करें?'

इंद्र ने नारदजी को लगभग समझाते हुए कहा, 'आसुरी ताकतें बहुत बढ़ रही हैं। वे गुप्त रूप से यज्ञ करते रहते हैं। जप, तप और पूजन भी बहुत करते हैं। इस प्रकार उन लोगों ने नए और शक्तिशाली आयुध तैयार कर लिये हैं। उनकी यह प्रगति देखकर मेरा सिंहासन स्वत: डाँवाँडोल होने लगता है। इंद्रासन की स्थिरता और सुरक्षा के लिए जरूरी है कि हमारी विदेशी नीति, कूटनीति से भरपूर हो। असुरों को स्वप्न में भी अंदेशा नहीं होना चाहिए कि हमारे हाथ कितने लंबे हैं और हमारे पक्ष में कौन सी मजबूत ताकतें खड़ी हैं। नारदजी, आप कूटनीति में माहिर हैं। अतीत में आपने बहुत लोगों को अपनी बातों से लड़वाया है। यही शैली अपना कर आप दुश्मनों को आपस में लड़वाते रहिए और इस बात का हमेशा ध्यान रखिए कि इंद्रासन पर किसी की कुदृष्टि न पड़ने पाए।'

'ऐसा ही होगा इंद्रदेव!' इतना कहकर नारदजी नारायण-नारायण करते हुए बैठ गए।

शाम घिर आई थी। अँधेरा उतरने लगा था। इंद्र ने घड़ी देखी तो उन्हें लगा कि दरबार सजाने का वक्त हो रहा है। अब यह मीटिंग जल्द समाप्त करनी चाहिए। ऐसा न हो कि मेनका, रंभा और उर्वशी अपना नृत्य प्रस्तुत करने के लिए दरबार में आ जाएँ और हम लोग यहीं मीटिंग करते बैठे रहें। उन्हें लगा कि अपने 'जल संसाधन विभाग की समीक्षा पश्चात् मीटिंग समाप्त कर देनी चाहिए। उन्होंने अपने विभाग के राज्यमंत्री वरुण से प्रगति प्रतिवेदन पढ़ने को कहा।' वरुण ने उत्साहपूर्वक बताया, 'आसुरी प्रकृति के लोगों ने पिछले दिनों हमारी पवित्र नदियों को जिस प्रकार प्रदूषित कर दिया है, उसे देखकर श्रीमान ने जो नदी सफाई योजना का शुभारंभ किया था, उसका कार्य प्रगति पर है। लेकिन इधर हम सफाई करते हैं, उधर वे फिर प्रदूषित करते जाते हैं। इस प्रकार दोनों कार्य साथ-साथ चल रहे हैं। देखना है किसका काम ज्यादा प्रगति कर पाता है। हमारा या उनका? हमारे द्वारा इतना पानी बरसाया जाता है कि बाढ़ में कहीं-न-कहीं सैकड़ों गाँव बह जाते हैं, फिर भी जनता पानी की कमी का रोना रोती रहती है। यह विपक्ष की साजिश है। वे हमारे खिलाफ जनता को भड़काते रहते हैं। यही एक मात्र चिंता का विषय है।'

'हम एक दिन असुरों को पानी का महत्त्व समझा देंगे। हमारे स्नान,

ध्यान, पूजा, पाठ और व्रत-उपवास में शुद्ध जल का कितना महत्त्व है, यह सर्वविदित है। जल हमारे जीवन की शक्ति है। असुर हमारी शक्ति को नष्ट करना चाहते हैं, इसीलिए वे हमारी पवित्र नदियों को प्रदूषित कर रहे हैं। हम उनके मंसूबों पर पानी फेरकर ही दम लेंगे।' इंद्र ने जोरदार शब्दों में अपने विभाग का पक्ष रखते हए बैठक समाप्ति की घोषणा की।

किसी नए देवता ने अपने सीनियर से पूछा, 'महादेव नहीं दिखे! क्या उन्हें ऐसी सभाओं में नहीं बुलाया जाता?'

सीनियर ने गुरु गंभीर शैली में कहा, 'वे औघड़दानी है। निष्पक्ष हैं। सबको खरी-खरी सुना देते हैं, इसलिए सब लोग उन्हें राष्ट्रपिता जैसा सम्मान देते हैं, परंतु उनसे ज्यादा पूछताछ नहीं की जाती। जैसे नीचे देवताओं वाले देश में राष्ट्रपिता के साथ अंतिम दिनों में होने लगा था। देश के बँटवारे की फाइल लोगों ने अकेले-अकेले निपटा ली। उन्हें पता तक नहीं। दे दी उन्हें एक कुटिया कि वहीं रहो आप चुपचाप लँगोटी लगाकर। महादेव के साथ यहाँ बहुत पहले से ऐसा ही होता आया।

रत्न निकले, सब देवताओं ने आपस में बाँट लिये। महादेव के हिस्से में आया विष! वह भी उन्होंने सबके कल्याण के लिए खुशी-खुशी पी लिया। वे अकसर असुरों के पक्ष में भी सही बात बोलते रहते हैं। जो भी साधना करता है। पूजा-पाठ में मन लगाकर कठिन तप करता है। उसे वे वरदान देने में नहीं हिचकिचाते। मुक्त हस्त से ऐसे लोगों को वरदान देते हैं, भले ही वह कोई भी हो। देवताओं को उनकी यह उदारता पसंद नहीं है। इसलिए दे दिया उन्हें एक वीरान पर्वत, वहाँ वे बाघांबर लपेटे हुए चुपचाप साधना में लीन रहते हैं। देवता इसी में खुश हैं। इधर इंद्र को अपने इंद्रासन के अलावा और कोई चिंता नहीं रहती। पार्टी हाईकमान क्षीरसागर में आराम से लक्ष्मीजी से पैर दबाते हुए प्राय: सोए रहते हैं। जब देवताओं पर कोई मुसीबत आती है, तब उनसे हाथ जोड़कर विनती करते हुए उन्हें जगाया जाता है। वे अपनी पार्टी के लिए प्रतिबद्ध हैं, इसलिए हर संकट में मदद करते हैं।'

नए देवता ने आगे पूछा, 'और राष्ट्रपति ब्रह्माजी की क्या भूमिका है?'

'जो नीचे अपने देश में भूमिका होती है राष्ट्रपति की, वही भूमिका यहाँ ब्रह्माजी की है। वे हर अध्यादेश पर चुपचाप दस्तखत कर देते हैं। कमल पर बैठे हुए सबका कल्याण हो। ऐसी कामना करते रहते हैं। इसके अलावा उनके पास और कोई काम नहीं है। बुजुर्ग हैं, इसलिए सब लोग सम्मान करते हैं।' सीनियर देवता ने कहा।

इंद्र का दरबार सज गया था। नर्तकियों ने अपना नृत्य प्रारंभ कर दिया था। सुरापान करनेवाले देवता अपने सत्कर्म में संलग्न हो गए थे। इंद्र प्रसन्न हैं। आज की मीटिंग के पश्चात् उन्हें महसूस हुआ कि फिलहाल इंद्रासन सुरक्षित है। अभी कोई खतरा नहीं है। (सा अ)

संपर्क-५२५ आर, महालक्ष्मीनगर, इंदौर-१०
दूरभाष : ९४२५१६७००३

पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 0 0 IFSC–BKID 0 0 में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. 0 1 5 9 अथवा sah ty amritid a@gm ailc m पर इ-मेल करें।

कविताएँ

● संध्या यादव

सुपरिचित लेखिका। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। साहित्य सर्जना पुरस्कार, स्त्री शक्ति सम्मान, साहित्य भूषण सम्मान तथा राष्ट्र गौरव सम्मान से सम्मानित।

ठोकर

आज फिर चाँद ने
पैरों से मार दी है ठोकर,
चाँदी की कटोरी में रखे दूध को।
फैल गया है दूधिया रंग,
आसमान के आसमानी कुरते पर।
दूर खड़ी चाँदनी
पैरों की पाजेब को
हल्के से छनकाती
इंतजार करती है···
रात···पलकें झपकाए तो
घूँट···घूँट चख ले दूधिया रंग को।
जिद्दी रात उबासी लेती,
उँगलियाँ चटखाती,
धरना लगाए बैठी है···
जिद्द करके···
'देखूँ कैसे आती है तू मेरे चाँद के पैताने!'
चाँदनी···आज फिर गुजारेगी एक और रात
पपड़ी पड़े होंठों पर जबान फेरते हुए,
सूखे गले में फँसे आँसुओं को निगलते हुए
सरापती इस कलमुँही रात को
'जा···तुझे ही ग्रहण लग जाए।'

मजदूरनी

किस्मत को खूँटी पर टाँग
कमर में कर्म का पल्लू खोंस
वो औरत रोज निकल पड़ती है
मजदूरी की तलाश में···
शाम चूल्हे पर सेंकती है
जब सोंधी नमकीन भाकरी
टूटी प्लेट में धरती है
प्याज के टुकड़े के साथ
भूखे, प्रतीक्षारत बच्चों की मुसकान पर
माँ वारी-वारी जाती है
आँख चूल्हे की राख से नहीं
खुशी के आँसुओं से पनियाती है।
खूँटी पर टँगी किस्मत
पेट पर हाथ फेरती
बड़ी दयनीयता से
जब हाथ पसारती है
यह मजदूर औरत
अँगूठा दिखा उसे ललकारती है—
'तेरे बाप की कमाई नहीं है ये
मेरे बच्चों का हक है ये
रोटी चाहिए तो कल मेरे साथ भटकना
शाम में मिल-बाँट खाएँगे
जिसने मुँह दिया है न
हाथ भी उसने ही दिए हैं।

पाठ्यक्रम

कभी नहीं पढ़ाऊँगी मैं
अपने बच्चों को वह पाठ कि
'जितनी चादर हो
उतना ही पैर फैलाना चाहिए'।
समझाऊँगी उन्हें
कि अपने बाजुओं में इतनी ताकत रखना
कि चादर की लंबाई और चौड़ाई
अपने लिए तुम खुद तय कर सको···
दूसरों की ओढ़ाई चादर में
खुद को समेटने का समीकरण
अब पाले-पोसे जानेवाले
पाठ्यक्रम से बाहर हो जाना चाहिए।
इस फलसफे ने सिर्फ
कुंठित या भाग्यवादी नस्लों को
गढ़ा है···ठोक-पीटकर···
मानसिक विकलांगता के सदियों पुराने चाक पर
जहाँ उम्र भर जोड़-घटा किया जाता है।
कभी सिर ढाँपने के लिए
तो कभी पैरों को छिपाने के लिए···
और बताऊँगी यह भी कि
अपने सिर पर चादर रखने के लिए
किसी के पैरों को कभी नंगा मत करना!

बाल-दिवस

उन बच्चों को भी
'बाल-दिवस' की शुभकामना
जो गर्भ से ही बूढ़े जनमे
और फिर हमने उन पर
होटल, ढाबा, बूट पॉलिश
अखबार, ठेला, कचरे की थैली
काँच, पटाखों के कारखाने और
घर की रसोई का बोझ लाद दिया;
और इन सबके बाद
बची नस्लों से कलम छीनकर
हाथ में बंदूक, बम के गोले
दिमाग में धर्म, जाति, संप्रदाय, नफरत

का चरस-गाँजा भरकर
उनकी नाजुक हड्डियों को
पाला मारी टहनी की तरह
समाज से बेदखल कर दिया।

उनका बचपना लील लिया···
हम सबने मिलकर···थोड़ा···थोड़ा
कितने एकलव्य···
कितने सारे द्रोणाचार्य···

अर्जुन

मैं अर्जुन नहीं कि
मछली की आँख पर
निशाना लगाकर
वाहवाही पा लेती और
ग्रंथों में अजर-अमर हो जाती।
मेरी आँखों की बिनाई के
कुछ सूत छूट गए थे,
मुझे अकसर वही दिखा,
जिसे लोगों ने अनदेखा कर दिया
और इसीलिए मुझे आँख नहीं,
तड़पती हुई मछली दिखी।
और यही वजह है कि
मेरे लिए कहीं जगह नहीं
न किसी के दिल में,
न किसी की यादों में,
और न ही इतिहास में···

जादू

मुझे जादू आता है
तुम आओगे न
तब तुम्हें दिखाऊँगी।
कभी किसी को नहीं बताया यह राज,
पर तुमसे नहीं छिपाऊँगी।
पलकों को चार बार···सच्ची,
राम कसम···सिर्फ चार बार झपकाकर
मैं आँखों से बहते समंदर को
रोक लेती हूँ।
गले में अटका हो जो गुबार कोई
उसे बिना पानी पिए
कुछ देर एकदम खामोश रह
हलक के नीचे उतार लेती हूँ।
जब तुम आओगे न,
तब तुम्हें सच्ची बात बताऊँगी
कि ऐसा करते-करते
एक नदी,
बह जाने की चाह में,
मरुस्थल में बदल रही है।
एक बात गले में अटकी-अटकी
असमय···बेमौत मर रही है।
यह जादू देखने
तुम आओगे न?···

जरूरत

अलार्म की आवाज,
और खुली बोझिल पलकें,
गरम बिस्तर, टूटता बदन बुखार से···
छुट्टी लेने के इरादे मात्र से
चमत्कार हो जाता है,
जरूरतों को ब्योरा सुरसा के मुँह की तरह
बड़ा, और बड़ा हो जाता है।
स्कूल की फीस, डॉक्टर का बिल,
किराने का सामान, लोन के पैसे,
छोटी का जन्मदिन, बड़ी के जूते,
रिश्ते के विवाह के नेग का लिफाफा,
समीकरण बिठाने पर तुल जाता है,
बैंक की नीली-पीली पासबुक के साथ।
हमेशा जीत जाती हैं आवश्यकताएँ।
रसोईघर में काँपते हाथों से जलाते हुए चूल्हा
सोचती रह जाती हूँ
'जिंदगी की भागदौड़ में
जरूरतें इतनी महँगी हो गईं!
पता ही नहीं चला'···

मोह

बात सिरिफ
रोटी की नहीं थी साहेब···
हमें तो आदत है
इस खड्डे को
कभी रोटी,
कभी पानी से
भरने की···
सच कहें साहेब,
वैसे तो आप समझोगे नहीं
फिर भी सुन लीयौ साहेब···
जब दु:ख···दरिदर व्यापता है न
तब अपनों की बहुतै याद आती है।
अपनों के साथ
जीने की आस में
हम मरने के लिए
सड़कों पर
उतर आए थे साहेब···

गुनाह

कबूल है मुझे गुनाह अपना···
वो जो चाँद के माथे पर दाग है न,
मेरी वजह से है।
इक रोज वो आसमाँ में तन्हा था
और मैं छत पर अकेली।
दोनों बतियाते रहे घंटों
और अचानक,
मेरे कंधे पर रख सिर
सिसक पड़ा था वो।
बहुत प्यार आया था उस रोज उस पर,
चूम लिया था मैंने उसकी पेशानी को
और बस···

तब से लेकर घूम रहा है
मेरी मुहब्बत की निशानी को!

वह जो चाँद के माथे पर दाग है न,
वह मेरी मुहब्बत की निशानी है···

सु.अ.
ई-६०३, लता एनेक्स, कुलुपवाड़ी रोड
नीयर नेशनल पार्क
बोरीवली (ईस्ट), मुंबई-४०००६६
दूरभाष : ९७६९६४०६२९

मैं आपका सांता हूँ

● सुमन बाजपेयी

सौरभ जब भी अपनी बालकनी में खड़ा होता, टोनी अंकल को अकसर अपने लॉन में उदास बैठे देखा करता था। ऑफिस से आने के बाद अपने घर के बड़े से लॉन में आरामकुरसी डाले चुपचाप बैठे रहते थे। लोग समझते थे कि वे अपने बगीचे में झूमते-लहराते फूलों को निहारते रहते हैं। लेकिन सौरभ को पता था कि वे फूलों के बीच बैठे हुए भी किसी सोच में डूबे रहते हैं। कोई पीड़ा थी, जो उनके चेहरे पर अकसर दिखाई देती थी और सौरभ को वह न जाने कैसे नजर आ जाती थी। हालाँकि उन्हें गार्डनिंग का बेहद शौक था और जब भी वक्त मिलता, वह अपने फूल-पौधों की देखभाल इतने प्यार से करते मानो उनके बच्चे हों। उनके घर में कोई बच्चा नहीं था।

बस वे दो ही लोग थे—एक टोनी अंकल और मार्था आंटी, जो हमेशा अपने गले में लटके क्रॉस को चूमती नजर आतीं। उनका अधिकांश समय ईश्वर की प्रार्थना में ही गुजरता था। उनके घर का काम करनेवाली रोजी बाजार से सारा सामान लाती। सारी खबरें भी वही उन्हें देती, वरना वे दोनों तो किसी से मिलते-जुलते ही नहीं थे।

सौरभ जब भी उनके घर जाता, वे दोनों खुश हो जाते। बगीचे के फूलों और अपनी आरामकुरसी को छोड़ टोनी अंकल उससे बातें करने घर के अंदर आ जाते। वे लोग कभी कैरम खेलते तो कभी लूडो। मार्था आंटी उसे केक बनाकर खिलातीं। उस पल वह बार-बार अपने क्रॉस तक को चूमना भूल जातीं। अंकल-आंटी दोनों बहुत ही ध्यान से उसकी छोटी-छोटी बातों को सुनते थे। उसके मम्मी-पापा तो इतने व्यस्त रहते थे कि उनके पास उसके लिए समय नहीं था। हालाँकि सौरभ जो भी माँगता, उसे फौरन वे दिला देते थे, इसलिए कभी इस बात को उन्होंने समझा ही नहीं कि उसे उनका समय भी चाहिए। वह अपने मम्मी-पापा के साथ अपनी बातें शेयर करना चाहता है। उसके कमरे को भी उन्होंने खास ढंग से डिजाइन करवाया था और सारी सुविधाएँ उसके लिए जुटा रखी थीं।

उसकी देखभाल करने के लिए नौकर थे और वह जब चाहे ऑर्डर करके अपने लिए कुछ भी मँगा सकता था। लेकिन अपने आलीशान घर और लेटेस्ट गैजेट्स के बीच जब वह खुद को अकेला पाता तो पड़ोस में रहनेवाले टोनी अंकल के घर दौड़ा चला आता, जहाँ से ढेर सारा प्यार मिलता। वे उसके साथ खेलते तो वह खुश हो जाता। उसे एक बात बहुत

अब तक छह कहानी-संग्रह समेत अन्य विषयों पर पुस्तकें तथा १००० से अधिक कहानियाँ व लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट (हिंदी विभाग) में संपादन व जागरण सखी, मेरी संगिनी, फोर्थ डी वूमेन पत्रिकाओं में संपादकीय पदों पर कार्य। १६० से अधिक पुस्तकों का अनुवाद।

हैरान करती थी कि ईसाई धर्म के होने के बावजूद वे कभी क्रिसमस नहीं मनाते थे। स्कूल में इन दिनों क्रिसमस को लेकर कितनी बातें हो रही थीं। उसके ईसाई दोस्त बताते थे कि वे कितनी तैयारियाँ करते हैं। न कभी क्रिसमस ट्री लाते थे, न ही घर को सजाते थे। जबकि उसके घर में उसके मम्मी-पापा ईसाई न होने के बावजूद क्रिसमस पार्टी देते थे और अपने सारे दोस्तों को बुला मौज-मस्ती करते थे। वह कहते थे, इस बहाने फ्रेंड्स के सामने अपनी शान दिखा सकते हैं। इस तरह उनका सोशल स्टेटस और बढ़ जाता है।

दस साल का सौरभ अब बहुत सारी बातें समझने लगा था। एक दिन मार्था आंटी ने जब अपने बेडरूम से उससे एक किताब उठाकर लाने को कहा था तो उसने वहाँ एक बच्चे की तसवीर टँगी देखी थी। उसने पूछा कि वह कौन है तो आंटी बात टाल गई थीं और उसे अपने हाथों से पुडिंग खिलाने में उलझा लिया था। मम्मी ने एक बार कहा था कि उनके कोई बच्चा नहीं है, तो वह किसके साथ खेलने उनके घर जाता है।

क्रिसमस आने ही वाला था और वह चाहता था कि वह उसे अंकल-आंटी के साथ मनाए। मम्मी-पापा उसे हर साल सांता क्लॉज की ड्रेस पहना देते थे, ढेर सारे गिफ्ट खरीदकर देते थे, जिन्हें वह घूम-घूमकर अपने फ्रेंड्स को बाँटा करता था। उसे खुशी होती थी कि मम्मी-पापा उसे उपहार बाँटने देते हैं और इस वजह से हर साल उसके दोस्तों की संख्या भी बढ़ती जा रही थी। उसे कहाँ पता था, ऐसा वे अपना रुतबा जमाने के लिए करते हैं, न कि उसकी खुशी के लिए। अब तो उसे यह भी पता था, कि मम्मी-पापा जो उपहार उसके तकिए के नीचे रखा करते थे, वह सांता क्लॉज नहीं लाता था।

"आंटी, इस साल मैं आपके साथ क्रिसमस मनाना चाहता हूँ। मम्मी-पापा गोवा जा रहे हैं।" कैरम खेलते-खेलते अचानक सौरभ ने

कहा।

मार्था आंटी किचन से बाहर आते हुए बोलीं, "बेटा, हम क्रिसमस सेलीब्रेट नहीं करते।"

"पर क्यों? आप तो क्रिश्चियन हैं और यह आपका सबसे बड़ा त्योहार होता है।"

"माई चाइल्ड, जब से हमारा बेटा गॉड के पास गया है, तब से मार्था ने इसे मनाना छोड़ दिया है। वह घर में उस दिन लाइट्स भी जलाना पसंद नहीं करती। हमारा बेटा, हमारा नन्हा सांता क्लॉज एक फरिश्ते की तरह था और इस त्योहार पर खूब सुंदर सांता बनता था। हम चर्च जाते और यीशू से प्रेयर करते हैं कि वे किसी से उसका बच्चा न छीनें।" टोनी अंकल ने प्यार से उसे थपथपाते हुए कहा।

"अंकल, मैं भी आपका बेटा हूँ, मैं भी तो आपका सांता हूँ, मेरे साथ क्रिसमस नहीं मनाएँगे?"

मार्था ने कुछ कहना चाहा तो टोनी अंकल ने उसे रोक दिया। वे सौरभ का दिल नहीं तोड़ना चाहते थे।

क्रिसमस ट्री को रंग-बिरंगे बल्बों, चमकीले कागजों और उपहारों से सजा सौरभ जब सफेद दाढ़ी लगाए और सांता क्लॉज की लाल ड्रेस पहने उनके घर पहुँचा तो उन्हें लगा कि उनका बेटा जैसे वापस आ गया है। मार्था ने उसे सीने से चिपटा लिया।

"आज तो हम तुम्हें गिफ्ट देंगे।" अंकल ने केक का बड़ा सा टुकड़ा उसके मुँह में डालते हुए एक पैकेट उसे थमा दिया। अंकल-आंटी ही नहीं, आज सांता क्लॉज बना सौरभ भी बहुत खुश था। उसने उनके साथ मिलकर पूरे घर में कैंडल लगा दीं और हर तरफ रोशनी कर दी। फिर अंकल-आंटी को साथ लेकर वह अपने बड़े से बैग में उपहार डाल उन्हें दोस्तों में बाँटने निकल गया। टोनी अंकल और मार्था आंटी को लग रहा था, मानो सचमुच सांता बन उनका बेटा लौट आया है। आज सांता ने उन्हें सबसे बड़ा गिफ्ट दिया था।

१२, एकलव्य विहार, सेक्टर-१३, रोहिणी
दिल्ली-११००८५
दूरभाष : ९८१०७९५७०५

डुबकियाँ

लघुकथा

● दिनेश प्रताप सिंह 'चित्रेश'

सहसा उसके झुर्रियाए चेहरे पर हल्की चमक आ गई। उसने सामने की बर्थ पर बैठे यात्री की तरफ तर्जनी दिखाई और आँखों में झाँकते हुए कहा, "महाराज, अगर मैं भूल नहीं रहा तो आप राधा किशनजी हैं न!"

राधा किशन नामक वह बूढ़ा शुरू से ही अपनी याददाश्त पर जोर देने में लगा था कि सामनेवाला कब उसके संपर्क में आया था! अब अचानक स्मृतियों के कपाट खुल गए। तपाक से बोला, "और आप मूलचंद··· ?"

दोनों ने गर्मजोशी से हाथ मिलाए। अभी कुछेक मिनट पहले दोनों पिछले स्टेशन पर इस कंपार्टमेंट में सवार हुए थे। अब ट्रेन गति पकड़ चुकी थी और वे आत्मीयता से वार्त्तालाप में संलग्न थे। राधा किशन कह रहा था, "अजीब संयोग है, कॉलेज छोड़ने के बाद आज करीब पचास साल बाद मुलाकात···।"

"हाँ भाई, मैंने बिजनेस में हाथ डाला और पूरी उम्र भाग-दौड़ में कट गई। हालाँकि बीच में कई मर्तबा अपने कस्बे में जाना हुआ, पर तब भी आप से मुलाकात न हो पाई।" मूलचंद ने जवाब दिया।

"मैं भी कहाँ कस्बे में रह पाया? पढ़ाई के बाद पूरी तरह एक धार्मिक संस्था का होकर रह गया। समाजसेवा और धर्म-प्रचार से समय निकाल मुश्किल से चार-छह बार ही अपने घर जा पाया, वह भी अल्प समय के लिए।" राधा किशन ने स्पष्ट किया।

ट्रेन चलती रही, बातचीत का सिलसिला भी। तभी राधा किशन ने एक अजीब सवाल किया, "भाई, एक बात पूछूँ, सच-सच बताएँगे?"

"हाँ-हाँ, क्यों नहीं?"

"अब इस जीवन-संध्या में क्या आप अपने विगत से पूरी तरह संतुष्ट हैं?"

मूलचंद के चेहरे पर गंभीरता उतर आई। मन की गहराइयों में गोता लगाते हुए बोला, "इधर कुछ समय से मुझे बड़ी शिद्दत से महसूस होने लगा है कि भौतिकता की अंधी दौड़ में मैं धर्म से एकदम नाता तोड़े रहा। इसके अलावा और कोई असंतोष नहीं है। वैसे आपके सामने तो ऐसी कोई समस्या नहीं होगी?"

"इसी बात का तो दुःख है, भाई।" राधा किशन ने ठंडी साँस खींची, "मुझे लगता है कि भौतिक सुखों की उपेक्षा कर मैंने जीवन बेकार गँवा दिया।"

ट्रेन चलती रही जा रही थी, लेकिन बातचीत बंद थी। क्योंकि दोनों बूढ़े अपने-अपने असंतोष में डुबकियाँ लगा रहे थे।

ग्राम व पोस्ट-जासापारा
वाया-गोसाईंगंज-२२८११९
जनपद-सुलतानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष : ७३७९१००२६६१

तुंगभद्रा के आर-पार

● पद्मावती

घुमक्कड़ की गति घुमक्कड़ जाने। असाध्य होता है यह यायावरी का रोग। तो हुआ यों कि कुछ समय से समयाभाव और व्यस्तता ने अनुमति नहीं दी थी और हमारी चलिष्णुता बाधित सी हो गई थी। २०१४-१५ का वर्ष। चौदह अपने अवरोहण पर और पंद्रह का आरोहण। आंग्ल नव वर्ष, केवल पाँच दिनों का अवकाश सप्ताह अंत को मिलाकर। तो अवसर का लाभ उठाते हुए तत्काल बोरा-बिस्तर बाँधा और गाड़ी में सवार हो गए। गाड़ी में आकर सोचा, किस दिशा में प्रस्थान करें? वैसे हमारी सारी यात्राएँ गाड़ी में ही निर्णीत हुआ करती हैं, तो इस बार निर्णय लिया कि क्यों न कर्नाटक की ओर चला जाए। कर्नाटक से हमारा संबंध केवल बंगलुरु तक ही सीमित था, तो इस बार पश्चिम तट पर बसे उडुपी श्रीक्षेत्र तक जाने का विचार किया गया। बंगाल की खाड़ी से होकर अरब महासागर···एक छोर से दूसरे छोर तक परिभ्रमण···बीच में जो भी स्थान संयोगवश जुड़ते जाएँगे, उन्हें भी देख लिया जाएगा। दिन कम थे, यानी विस्तृत यात्रा तो नहीं, पर जितना हो सके, उतने स्थलों का दर्शन। तो हमारा गंतव्य बना—श्रीक्षेत्र उडुपी, अरब सागर के छोर पर बसा तीर्थ स्थल···अब इस यात्रा के दौरान बीच में जुड़ते गए···शृंगेरी, होरनाडु, कुद्रेमुख, कोल्लूर और धर्मस्थल। आइए चलें इन प्रदेशों की शब्दयात्रा पर···तुंगभद्रा के पार।

गाड़ी निकल पड़ी राष्ट्रीय राजमार्ग पर चेन्नई से रानी पेट, वेल्लोर, कृष्णगिरी, होसुर से होती हुई सिलिकॉन सिटी ऑफ इंडिया···बंगलुरु। ३५० किलोमीटर पर पहला पड़ाव और रात बसरकर अगली सुबह फिर गंतव्य की ओर प्रस्थान। बंगलुरु से मेंगलुरु राष्ट्रीय मार्ग अपने नैसर्गिक सौंदर्य के लिए जाना जाता है। चिकनी चार वीथिकाओं में विभक्त कहीं पर ताड़ की तरह सीधी और कहीं-कहीं पर सर्पिल घुमावदार सड़कें, रास्ते के दोनों ओर छायादार घने वृक्ष, मार्ग-भाजक पर खिली रंग-बिरंगी फूलों की कतारें, बादलों से घिरा सूर्य और आती-जाती बूँदाबाँदी, खुशनुमा मौसम यात्रा की थकान को भुलाने के लिए कारगर साबित हो रहा था। वैसे कर्नाटक राज्य की विशेषता है कि इस प्रदेश में यथेष्ट बरसात के कारण वातावरण अधिकतर आर्द्र होता है मौसम सुहावना। दिसंबर का अंत और सर्दियों में दिन छोटे होते हैं तो उडुपी पहुँचते शाम गहरा गई। दूर

सुपरचित लेखिका। शिक्षक सम्मान, हिंदी साहित्य रत्न सम्मान, विशेष हिंदी प्रचारक सम्मान २०२१, नारी गौरव सम्मान सहित कई सम्मानों से सम्मानित। संप्रति गत १६ वर्षों से स्नातक महाविद्यालय में हिंदी भाषा साहित्य का अध्यापन।

माल्पी तट दिख रहा था। यहाँ से केवल सात-आठ किलोमीटर की दूरी पर ही स्थित था खूबसूरत अरब सागर का समुद्री तट।

पारदर्शी स्पष्ट नील वर्ण की लहरें, शांत गुलाबी आसमान में अस्त होता हुआ रक्ताभ सूर्य, चारों ओर फैली हुई लालिमा, सचमुच रंगीन कलाकृति सादृश्य यह नजारा अपने आप में एक अनोखा अनुभव रहा।

कुछ देर आराम कर हम चले मंदिर के दर्शनार्थ। आइए, इस मंदिर से जुड़े कुछ दार्शनिक तथ्यों की चर्चा करें।

'श्रीकृष्ण मठ' उडुपी मंदिर का इतिहास सहस्र वर्षों से भी अधिक पुराना है। यह स्थल 'द्वैत वेदांत दर्शन के प्रणेता और दार्शनिक भाष्यकार' श्रीमध्वाचार्य की जन्मस्थली माना गया है। यह मंदिर अपने आप में विलक्षण है और इसका कारण यह है कि भगवान् बालकृष्ण का 'श्री विग्रह' अन्य वैष्णवालयों की भाँति पूर्वाभिमुख न होकर पश्चिमाभिमुख है। गर्भगृह में भगवान् का दर्शन मुख्य द्वार से न होकर गर्भ-गृह की पिछली दीवार से लगी नौ छिद्रोंवाली नक्काशीदार आभ्यंतरिक 'खिड़की' से भक्तों को सुलभ कराए जाना एक असाधारण परंपरा ही नहीं बल्कि इस मंदिर की ऐकांतिक विशेषता भी है, जिसके नेपथ्य में एक रोचक कथा वर्णित है।

मान्यता है कि मध्वाचार्य ने भगवान् कृष्ण की मूर्ति को पूर्वाभिमुख ही प्रतिष्ठित किया था, लेकिन यह तो एक भक्त की प्रगाढ़ भक्ति की पराकाष्ठा थी, जिसने भगवान् की मूर्ति को मुड़ने पर विवश कर दिया। सोलहवीं शती के एक 'क्षुद्र' भक्त कनकदास का निम्न जाति में जनमने के कारण मंदिर प्रवेश वर्जित कर दिया गया था। लेकिन उसकी श्रद्धा और अनन्य भक्ति ने यह साबित कर दिया कि उस नियामक नियंता

के दरबार में भेद-भाव का कोई स्थान नहीं है। निश्चल भक्ति के सामने भगवान् भी भक्त के दास बन जाते हैं। वह बेचारा मंदिर के अंदर न जा सकने के कारण हर दिन मंदिर के पिछवाड़े जाकर वहाँ की दीवार में हुई दरारों में से बाल कृष्ण की मूर्ति का पार्श्व भाग देखकर संतुष्ट हो जाता था। अश्रुपूरित नैनों से रोज दर्शनों की प्रार्थना याचना करता। असाध्य को साधने की असंभव साधना। आखिर भगवान् ने भक्त के हृदय की सुन ली। उन्हें झुकना पड़ा। साधना की चरम परिणति-भगवद् दर्शन को पाकर वह 'अछूत परित्यक्त' धन्य हुआ, जब एक दिन प्रात:काल मंदिर के किवाड़ खुले और अर्चकों ने पाया कि भगवान् का श्री विग्रह तो पश्चिम की दीवार की ओर घूम गया है। अविश्वसनीय आश्चर्य! भगवान् का भक्त के प्रति निज समर्पण का जीवंत प्रमाण है कि आज भी इस मंदिर का पूर्वी मुख्य द्वार बंद ही रहता है, क्योंकि भगवान् की मूर्ति तो पश्चिमी दिशा में मुड़ चुकी है और भक्तों को दर्शन उन्हीं दरारों में खुदी 'कनकराज किटिकी', जिसे 'नवग्रह खिड़की' भी कहा जाता है, उसी खिड़की के नौ छिद्रों से कराया जाता है। कथा के श्रवण मात्र से मन गद्गद हो उठा। दक्षिण भारत का यह प्रसिद्ध तीर्थाटन 'दास साहित्य' का मुख्य केंद्र है। नित्य प्रतिदिन देश-विदेश से हजारों की संख्या में पर्यटक यहाँ आते हैं। मंदिर के दक्षिणी भाग में 'मध्व-पुष्करिणी' मीठे पानी का जलाशय बना हुआ है। गर्भगृह में बालकृष्ण की रत्न जड़ित सुवर्ण आभूषणों से सुसज्जित छोटी सी चित्ताकर्षक मूर्ति दिव्य आलोक बिखेर रही थी। बाहरी कोष्ट में गुंजायमान होती घंटियाँ वातावरण को पवित्र बना रही थीं। वहीं पर अन्य देव प्रतिमाओं के साथ श्री मध्वाचार्य की विशाल मूर्ति भी प्रतिष्ठित की गई है। बाहरी परिक्रमा मार्ग में बने हुए दीपस्तंभ पर जलती हुई असंख्य दीप मालाओं की अलौकिक दीप्ति से वह स्थान अग्निकुंड की तरह तप रहा था। वहाँ की तप्त अग्नि प्रभा मन को शमित कर विचार-शून्य बना रही थी। मन स्वत: ही समाधिस्थ हो रहा था। यह भक्त 'कनकदास' की भक्ति का तेज था या कोई भ्रम! चेतना-शून्य कुछ पलों के उपरांत हमने मंदिर की परिक्रमा की, प्रसाद पाया और चल पड़े।

हमारा अगला पड़ाव था पश्चिमी तट के जंगलों में बसा क्षेत्र होरनाडु···जंगल भ्रमण और अन्नपूर्णेश्वरी माता का आलय, जो लगभग १०० किलोमीटर की दूरी पर था। लेकिन शंका हुई कि जंगलों में बसे इस क्षेत्र में आवास की सुविधा होगी या नहीं? क्षेत्र के बारे में जानकारी भी नहीं थी और रात भी हो चुकी थी। तो सोचा क्यों न पहले शृंगेरी चला जाए, जो केवल चालीस किलोमीटर की दूरी पर है, ताकि रात बसर हो जाए, क्योंकि शृंगेरी तो काफी सुविकसित स्थल है और आवास भी आसानी से मिल सकता है। सुबह दर्शनोपरांत होरनाडु जाया जा सकता है। हाँ, शृंगेरी हमारी कार्यावली में तो था नहीं, लेकिन जब 'माता का बुलावा' आ जाता है तो कदम अपने आप उस राह चल देते हैं। हमारा जाना हमारे अपने सायास प्रयास पर निर्भर रहता है और 'देव कृपा' तो अनायास ही संभव हो जाती है। तो एक बार फिर हमेशा की ही तरह गाड़ी में बैठकर दिशा बदली और बढ़ चले···चालीस किलोमीटर की दूरी पर स्थित 'दक्षिणाम्नाया श्री शारदा पीठ शृंगेरी'। पहुँचने में रात हो गई। आवास बहुत आसानी से मिल गया। मठ के पास ही कई होटल है, जो आपकी सुविधानुसार मूल्य पर मिल जाते हैं।

सुबह स्नानादि से निवृत्त होकर चले दर्शनार्थ। वैसे तो हम भोजनासक्त है, लेकिन फिर सोचा, कर्नाटक के विशुद्ध अल्पाहार रागी दोसा का स्वाद तो दर्शनों के बाद ही चखा जाएगा।

अद्भुत और विलक्षण शैली पर बने हुए विशाल गुंबदाकार मठ की इमारत को देखकर आँखें चौंधिया गईं। अद्भुत सौंदर्य! अद्वैत वेदांत के पुरोधा आदिशंकराचार्य ने सनातन धर्म की पुनर्स्थापना के लिए भारतवर्ष की चारों दिशाओं में जिन 'चतुराम्नाया मठों' की स्थापना की थी, वे हैं पश्चिम में द्वारका पीठ, उत्तर में बदरी ज्योतिष पीठ, पूरब पुरी में गोवर्धन पीठ और दक्षिण में कर्नाटक राज्य के तुंगा नदी के तट पर बसा शृंगेरी 'आत्म विद्या श्री शारदा पीठ'। इन चारों पीठों में यह पीठ प्रधान मूलाधार मठ माना जाता है। पीछे बहती हुई तुंगा नदी का तट। नदी के उत्तरी और दक्षिणी दोनों तटों पर मठ के मंदिरों का निर्माण किया गया है। एक ओर मठाधीशों और मठाधिकारियों के आवास भी बने हुए हैं, जो साधारणतया आदि शंकराचार की परंपरा के अनुयायी ही हुआ करते हैं। अंदर विशाल मंडप में दो आलय है। प्रधान मंदिर में ज्ञान की देवी 'श्री शारदांबा' की दिव्य प्रतिमा प्रतिष्ठित की गई है। उसी मंडप में शिवलिंग भी स्थापित है। मंदिर की बनावट शैली विजयनगर और होयसाला परंपराओं का सम्मिश्रण है, जो इसे एक असाधारण आकार की प्रतीति देता है। चारों दिशाओं से मंदिर में प्रवेश किया जा सकता है। मंदिर का ऊर्ध्वभाग अर्ध-गोलाकार मेहराबनुमा है, जहाँ शिखर और बाहरी दीवारें लगभग वर्तुलाकार बनी हुई हैं और वहीं गर्भ-गृह और आभ्यंतरिक सदन पूर्ण वर्गाकार बना हुआ है। मंदिर का पूरा ढाँचा एक ऊँचे चबूतरे पर विन्यस्त है, जो होयसाला स्थापत्य कला का उत्कृष्ट उदाहरण माना जा सकता है। मंदिर की बाहरी दीवारों पर शैव, वैष्णव, शाक्त, वैदिक और पूर्व वैदिक विभिन्न देवी-देवताओं की मूर्तियाँ तराशी गई हैं, जो तत्कालीन मूर्ति कला, शिल्पकला की भव्यता को प्रदर्शित करती हैं।

मंदिर की बाहरी बनावट का अवलोकन कर हम अंदर चले दर्शन के लिए। अंदर भीड़ अधिक न थी। भीतरी कोष्ठ का मंडप काफी विस्तीर्ण और विशाल था। अंदर गर्भगृह में मठ की प्रधान मूर्ति ज्ञानदेवी 'श्री शारदांबा' की दिव्य मूर्ति का अनुपम लालित्य! सुवासित पुष्प मालाओं और सुवर्ण आभूषणों से सुसज्जित, कुमकुम चंदन का तिलक धारण किए, रत्न जड़ित स्वर्ण मुकुट पहने माँ शारदा की नासिका में लगी हुई नथनी के शुभ्र हीरे में से अलौकिक कांति फूट रही थी। दिव्य चैतन्यमयी माँ के इस अकल्पित या कहिए असंभावित दर्शन पाकर हम कृतकृत्य हुए। माँ के तेज को देखकर रोम-रोम सिहर उठा। आदि श्रीशंकराचार्य के इस स्थल को चुनने के पीछे एक दंत कथा हमें सुनाई गई कि एक बार जब आदिगुरु परिभ्रमण पर थे तो तुंगा नदी के इस तट पर उन्होंने एक आश्चर्य देखा। एक सर्प प्रसव देती हुई एक मेढकी को कड़ी धूप से बचाने के लिए अपने फन की छाया दे उसकी रक्षा कर रहा था। सर्प का प्रिय आहार मेढक। इस अप्राकृतिक दृश्य को देखकर आदिगुरु स्माधिस्थ हुए और उन्हें इस

स्थल में संभूत निज शक्ति का भान हुआ और उन्होंने तत्क्षण अपने प्रथम मठ की स्थापना के लिए यह क्षेत्र चुना। मंदिर में माँ का दर्शन कर आप भी उस स्पंदन को अनुभूत कर सकते हैं। इन्हीं अवर्णनीय आनंद के पलों में डूबकर, हमें उपकृत करने के लिए माँ का आभार व्यक्त कर हम वहाँ से निकल पड़े अपने अगले पड़ाव पर, लेकिन अल्पाहार के पश्चात् ही।

कर्नाटक का रागी दोसा और नारियल की चटनी का अपना ही स्वाद है। वैसे यहाँ का मैसूर बोंडा भी बहुत चाव से खाया जाता है। भोजन में बिसिबेल्ली बाथ (सांबर चावल) हो और साथ ही शुद्ध घी से बनाया हुआ केसरी बाथ (हलुवा) तो क्या कहने! सोने पर सुहागा! हम भारी आहार नहीं चाहते थे यात्रा के दौरान, सो अल्पाहार से संतुष्ट होकर निकल पड़े होरनाडु···लगभग चालीस किलोमीटर की दूरी का प्रदेश।

पश्चिमी तट की सघन घाटियों से घिरा राज्य मार्ग। गाँवों से निकलकर जानेवाली कहीं-कहीं पतली सँकरी सड़क। आवागमन कम था। घने वृक्षों की छाया और हल्की बूँदाबाँदी से दृष्टि बाधित हो रही थी। गाड़ी की गति अति धीमी और वैसे घाटियों की सुंदरता का आस्वादन करने के लिए आप गति तेज भी नहीं कर सकते हैं। बारिश के कारण एक घंटे का रास्ता पार करने में दो घंटे लगे और मध्याह्न तक हम पहुँचे माता अन्नपूर्णेश्वरी के धाम।

आश्चर्य! यहाँ तो काफी विकास था। आवास की सभी सुविधाएँ भी थीं। तो अब समझ आया कि यह तो माँ शारदा की आज्ञा थी कि हम पहले उनके दर्शन करें। मन एक बार फिर श्रद्धा से झुक गया।

पश्चिमी तट के सघन जंगलों से आवर्त भद्रा नदी के तीर पर बसा क्षेत्र माता अन्नपूर्णेश्वरी मंदिर। यह क्षेत्र ऋषि अगस्त्य मुनि की तपोस्थली माना जाता है। मंदिर मध्याह्न कुछ समय के लिए बंद किया गया था। तो हमें वहाँ के भोजनालय ले जाया गया। दरअसल हमारी यात्रा में यह स्थान यहाँ के भंडारे की प्रसिद्धि को सुनकर कौतूहलवश जिज्ञासा के कारण ही जुड़ा था। हमारी आध्यात्मिकता पर हावी हुई भोजन प्रियता ही हमें यहाँ खींचकर लाई थी। यहाँ आकर पाया, जितना सुना था, वह कम था। अंदर की व्यवस्था देखकर अचंभित रह गए। प्रांजल वातावरण में यहाँ हर दिन हजारों भक्तों को पाँच बार गरम-गरम खाना खिलाया जाता है। भोजन बनाने के लिए आधुनिक यंत्रों और उपकरणों का उपयोग। भोजन पकाना, परोसना, थालियाँ साफ करना, सबकुछ यंत्रचालित किया जा रहा था। यहाँ पर किसी भी समय आइए, भोजन अवश्य मिलेगा। 'आदिशक्त्यात्मिका माता अन्नपूर्णेश्वरी' के दरबार में भला अन्न की क्या कमी!

"भिक्षां देही करावलंबन करी, माता अन्नपूर्णेश्वरी" का उच्चार करते ही साक्षात् 'महादेव' की झोली अन्न धान से भरनेवाली माता अपने भक्तों की क्षुधा कैसे तृप्त न करती? 'न भूतो न भविष्यति'! ऐसा स्वादिष्ट भोजन कभी न किया था। यह तो निश्चित ही माता की कृपा का प्रसाद था, जो भोजन में स्वाद ला रहा था। भरपेट भोजन कर माता के दरबार में हाजिरी दी और दर्शन किए। वैसे तो नियम होता है···दर्शन के बाद प्रसाद। लेकिन माँ के दरबार में···प्रसाद और फिर दर्शन, क्योंकि 'माँ' के आँचल में सभी नियम रद्द हो जाते हैं, आचार संहिताएँ लुप्त हो जाती हैं।

दिन कम थे सो बढ़ चले कोल्लूर की तरफ। जंगली यात्रा करते हुए 'श्री क्षेत्र मूकांबिका' कोल्लूर की ओर प्रस्थान। जी नहीं, जंगली यात्रा नहीं जंगल की यात्रा!

होरनाडु और कोल्लूर के मार्ग में कुद्रेमुख पर्वत-श्रृंखला को पार करना पड़ता है। कुद्रेमुख कर्नाटक के पश्चिमी तट पर सागर तल से लगभग छह हजार फुट की ऊँचाई पर स्थित प्राकृतिक संपदा और जैव-विविधता को समेटे 'वन्य जीव संरक्षक राष्ट्रीय उद्यान' है, जो लोह अयस्क खनिज का गढ़ भी माना जाता है। तुंगा, भद्रा और नेत्रावती—तीन नदियों का उद्गम स्थल यह विस्तीर्ण जंगल पर्यटकों के विशेष आकर्षण का बिंदु है। हमारी गाड़ी अब जंगल पार कर रही थी। दोपहर का समय। जंगल अपने गर्भ में कई रहस्यों को छिपाए रहता है। हर पल अप्रत्याशित, भयानक, जोखिम भरा। कभी भी कुछ भी हो सकता है। सतर्कता और सावधानी की निरंतर अपेक्षा। जितना मनोरम उतना संकटमय। असावधानी कतई स्वीकृत नहीं। सघन वृक्षों से घिरा सँकरा रास्ता। भयंकर निस्तब्धता, दोपहर में भी शाम का अहसास। निर्बाध बहती हुई मंद समीर। हवा की भीनी आर्द्र खुशबू। जंगली रास्तों में हमेशा हम गाड़ी की खिड़कियाँ आधी खोलकर ही चलाते हैं, ताकि तरोताजा हवा की महक अपने फेफड़ों में भर सकें। हवा से झूमती हुई घने वृक्षों के झुरमुट को चीरकर आती हुई ढलते सूर्य की पतली महीन किरणें धरती पर पच्चीकारी दिखा रही थीं। निर्जन प्रदेश में इतनी शांति थी कि सूखे पत्तों का गिरना तक आप सुन सकते है, अनुभूत कर सकते हैं। अचानक कहीं दूर किसी पक्षी की कूक से पूरा जंगल थरथरा जाता। आवाज दूर तक गूँज जाती और फिर यकायक कई पंछी उस गूँज के उत्तर में कूकने लगते। सूखे पत्तों के खड़खड़ाने की आवाज···शायद कहीं कोई जानवर छुपा खड़ा हो···बंदर चिल्लाते हुए पेडों की टहनियों पर तेज -तेज झूलने लगते···टहनियाँ झंझावात की तरह ऊपर-नीचे झूल जातीं और असंख्य पंछी अचानक से पंख फड़फड़ाकर शोर मचाते हुए वृक्षों की डालियों पर गोल-गोल उड़ने लगते। कुछ क्षणों के लिए जंगल की नीरवता भंग हो जाती, वायुमंडल ध्वनित हो जाता, पर फिर कुछ ही पलों बाद सब सामान्य। सबकुछ शांत···रहस्यमय···असंभावित। हम भी साँस रोके आहिस्ता-आहिस्ता धीमी गति से बढ़े जा रहे थे।

रास्ते में आपको कई जलप्रपात मिल जाएँगे। दूर ढलान से आता

हुआ फेन उगलता दूधिया जल नीचे धरती पर गिरकर चाँदी की सीपियों के समान बिखर रहा था। वातावरण में काफी ठंडक आ गई थी। वैसे तो कुद्रेमुख विभिन्न वन्य जीवों के लिए प्रसिद्ध है, लेकिन हमें जंगली भैंसा, लाल मुँह लंबी-लंबी पूँछवाले लंगूरों को देखकर ही संतुष्ट होना पड़ा। गाड़ी की गति अत्यंत धीमी हो चली थी। वैसे जंगली रास्तों में आप चाहकर भी गाड़ी तेज नहीं चला सकते। न जाने कब कोई वन्य प्राणी आप पर तरस खाकर आपको दर्शन देने आपका रास्ता रोककर खड़ा हो जाए? और तेज गाड़ी की आवाज जानवरों को बाधा पहुँचाती है तो अंतत: सभी नियमों का ध्यान रखते हुए और जंगल के नैसर्गिक सौंदर्य का रस लेते हुए हमने चार घंटों में यह साहसिक सफर पूरा किया और पहुँचे श्री मूकांबिका···कोल्लूर ।

श्री मूकांबिका मूल स्थान 'सर्वज्ञान पीठ'/आदि शंकराचार्य का तप स्थान कोदाचारी पर्वतों की उपत्यका पर सौपर्णिका नदी के दक्षिणी तट पर बसा 'मूकांबिका' मंदिर परशुराम द्वारा उद्भासित सात मुक्ति धामों में से एक माना गया है। पार्श्व भाग में 'मूकांबिका वन्य जीव अभयारण्य'। उष्ण कटिबंधीय सदाबहार सघन निविड़ वन। इस पर्वतमाला के शिखर पर एक छोटा सा मंदिर बना हुआ है, जो आज भी दर्शनार्थियों के लिए खुला रहता है। यही मूकांबिका देवी का मूल स्थान है। इसी शिखर को 'सर्वज्ञानपीठ' कहा जाता है, जहाँ बैठकर आदिशंकराचार्य ने तपस्या की थी और उन्हें देवी मूकांबिका के दर्शन प्राप्त हुए थे। एक मान्यता यह भी है कि इसी स्थान पर देवी माँ ने कौमासुर का वध किया, जिस कारण उनका नाम 'मूकांबिका' पड़ गया। 'शाक्ताराधना' का श्री क्षेत्र···कोल्लूर स्थित 'मूकांबिका मंदिर'।

हम समयाभाव के कारण शिखर पर तो नहीं जा पाए, लेकिन नीचे स्थापित मंदिर का दर्शन प्राप्त किया।

मंदिर का क्षेत्रफल विशाल तो नहीं लेकिन विलक्षण अवश्य था। गर्भ-गृह में तेजोमय स्वयंभू ज्योतिर्लिंग का दर्शन किया। इस शिवलिंग की विशेषता यह है कि इसने 'आदिपराशक्ति' देवी को अपने में समाहित कर लिया है और 'अर्धनारीश्वर' के रूप में आराधित है। शिवलिंग को एक सुवर्ण रेखा दो भागों में विभक्त करती है। वाम भाग में सृजनात्मक शक्ति स्वरूप महालक्ष्मी, महाकाली महा सरस्वती 'त्रिदेवियाँ' और दक्षिण भाग में चैतन्य स्वरूप ब्रह्मा, विष्णु महेश्वर 'त्रिदेव' के रूपों की प्रतीति भक्तों को होती है। वहीं पर उसी लिंग के पार्श्व भाग में श्री शंकराचार्य द्वारा 'श्रीयंत्र' पर पंच लोह की चतुर्भुजी मूकांबिका देवी को प्रतिष्ठित किया गया है।

एक दंत कथा के अनुसार इसी स्थल पर कोला महर्षि के तप से प्रसन्न होकर आदिपराशक्ति देवी ने कौमासुर, जिसका एक नाम मूकासुर भी था, को तारण मोक्ष दिया था। उनके तप से प्रसन्न होकर महादेव भी उन्हें आशीर्वाद देने आए और उन्हें वर माँगने को कहा। उनकी प्रार्थना पर भगवान् शिव अपनी 'शक्ति' के साथ इस ज्योतिर्लिंग में विलीन हो गए। और यही वह स्थान है, जहाँ शंकराचार्य को उसी महाशक्ति मूकांबिका के दर्शन हुए। हमारे लिए इन दंत कथाओं के पीछे का विज्ञान तो रहस्य ही बना रहा, लेकिन जब हम इस क्षेत्र के नाम को देखते हैं···'कोल्लूर' तो लगता है कि यह नाम 'कोला' महर्षि के नाम पर ही पड़ा होगा। अब यह तो शोधकर्ता का क्षेत्र है हमारा नहीं। तो बस इतना कहा जा सकता है कि भारतभूमि तपोसिक्त ज्ञान भूमि रही है। यहाँ आत्मसंयमी ऋषि मुनियों और परिव्राजकों ने अपनी साधना की जीवंत तपो अग्नि को इन मंदिरों में भावी मानवजाति के आत्मोद्धार के लिए सहेजकर सुरक्षित कर दिया है और हर दिन असंख्य भक्तगण लाभान्वित भी हो रहे हैं। अब यह तो श्रद्धा का विषय है। जिसकी जितनी श्रद्धा, उतना विश्वास! प्रकृति की सुरम्य वादियों में बसे इस महिमान्वित स्थल के बाद आरंभ हुई हमारी वापसी।

मूकांबिका से बंगलुरु की दूरी ३७५ किमीटर की थी तो हमने बीच पड़ाव वह रास्ता चुना, जो 'श्री क्षेत्र मंजूनाथ' से होकर गुजरता था। इसे 'धर्मस्थल' क्यों कहा जाता है, उसका तर्क वहाँ जाकर ही समझ आया। मूकांबिका से लगभग अस्सी किलोमीटर की दूरी पर है यह स्थान। 'मंजूनाथेश्वर' महादेव का एक ऐसा अद्वितीय शिव मंदिर है, जहाँ मंदिर का संचालन तो जैन-धर्माचार्यों द्वारा होता है और पूजा-आराधना मध्वाचार्य वंशजों के पुरोहितों द्वारा संपन्न की जाती है। गर्भ-गृह में मंजूनाथ महादेव शिवलिंग के समानांतर ही जैन तीर्थंकरों की प्रतिमाओं को देखकर आश्चर्य हुआ। पूछताछ करने पर बताया गया कि आज भी मंदिर की कार्यकारिणी जैन मतावलंबी ही निभाते हैं। जैनों का यह प्रसिद्ध तीर्थ स्थल माना जाता है। वैसे देखा जाए तो जैन धर्म हिंदू धर्म से अलग कहाँ? श्रीमद्भागवत के पंचम स्कंध चतुर्थोध्याय में नाभि नंदन ऋषभदेव का आख्यान श्री शुकदेव सुनाते हैं, जिसमें ऋषभ देव के सौ पुत्रों का विस्तृत वर्णन मिलता है। यही नाभि नंदन ऋषभदेव जैन पुराणों के अनुसार आदि तीर्थंकर माने गए हैं। तो कहिए जैन धर्म हिंदू धर्म का ही एक अंग हुआ न? इसीलिए यह क्षेत्र दोनों धर्मों के विलयन का उत्तम उदाहरण दिखाता है और 'धर्मस्थल' की संज्ञा हमें सर्वथा अनुरूप और तर्कसंगत लगी। मंदिर में काफी भीड़ थी। दर्शन किए और वापस गम्य स्थान की ओर।

इन स्मृतियों को सहेजे हम अपनी वापसी पर चल पड़े। कर्नाटक राज्य का अभी एक अंश ही देखा था। वैसे इस राज्य की विशेषता रही इसका खुशनुमा वातावरण और इस प्रदेश की प्राकृतिक सुंदरता। जिन प्रदेशों को इस यात्रा के दौरान देखा था, हर एक स्थान अनूठा और विलक्षण था। कभी-कभार लगता है कि यात्रा गंतव्य से अधिक खूबसूरत लगने लगती है और कर्नाटक में वह हुआ भी। दूर तक हरियाली, अनुकूल वातावरण, साफ पारदर्शी जलाशय, चाँदी उगलते जल-प्रपात, स्तब्ध कर देनेवाले जंगल और मंत्रमुग्ध करनेवाले महिमान्वित मंदिर और स्वादिष्ट भोजन। सब मजेदार और यादगार रहा। यह यात्रा आध्यात्मिक रही और रोमांचक भी। बस अब विराम, शेष अगली यात्रा के बाद!

जी-२, कविका फ्लेट्स
काम कोटि नगर, नारायनापुरम्
पल्लिकर्नाई, चेन्नई-६००१०० (तमिलनाडु)

ठंडी आग

● जगदीश पंत 'कुमुद'

खेतों की जुताई से लेकर फसल बोने, काटने व सँभालने की सारी जिम्मेदारी चनर राम के सर पर ही है। हो भी क्यों न, पंडित लालमणि पांडे तो ठहरे कर्मकांडी ब्राह्मण और आस-पास के गाँवों में उनके यजमानों की संख्या भी अच्छी-खासी है, हल बाने (चलाने) वाले बामनों को तो पहाड़ में दूसरे दर्जे में रखा जाता है, सो पांडेयजी हल को तो हाथ लगाने से रहे। चनर राम एक लंबे अरसे से उनकी खेतीबाड़ी का काम देख रहा है और पंडितजी का विश्वासपात्र भी बन गया है।

कभी-कभी वह अपने बेटे रमिया को भी साथ ले आता था। आठ-दस साल का रमिया कभी खेत के किनारे मेंड़ पर बैठा रहता तो कभी खेत में ढेले फोड़ने लगता था। कभी-कभी वह पिता के पीछे-पीछे दौड़ता तो डाँट भी खाता, लेकिन यह सब उसके लिए मनोरंजन जैसा ही होता था। पांडेजी की पत्नी जीवंती जब-जब रमिया को देखती, उसके मन में वात्सल्य हिलोरें मारने लगता था। संतानहीन जीवंती को लगता कि यदि हमारी कोई औलाद होती तो लगभग इतनी ही बड़ी होती। अकसर विचारों के समुंदर में डुबकी लगानेवाली जीवंती को लगता है, भाग्य ही कुछ उसके विपरीत है, नहीं तो सुहागिनों को पुत्रवती होने का आशीर्वाद देनेवाले पांडेजी स्वयं संतान सुख से वंचित थोड़े ही होते। उसे बाँझपन का दंश क्यों झेलना पड़ता। मातृत्व सुख किसी भी स्त्री के लिए वह अतुलनीय वरदान है, जिसे वह तमाम कष्ट सहने के बावजूद अपार प्रसन्नता का अनुभव करती है। जिनके भाग्य में यह सुख नहीं आता, उन्हें जीवन में कुछ कमी का अहसास हमेशा सालता रहता है। जीवंती भी अपने दर्द को दिल में समेटे हुए विधि के विधान को स्वीकार कर रही थी।

रोज की तरह पांडेजी ने सुबह स्नान-ध्यान किया। माथे पर चंदन का टीका लगाया। मकान के कोने में बने हुए मंदिर में देवताओं के सम्मुख धूप-बत्ती करके पूजा-अर्चना की। धुली हुई सफेद धोती, कुरता वास्कट पहनी। कंधे पर थैला लटकाया, जिसमें पंचांग और कुछ धार्मिक पुस्तकें थीं। और चल दिए पास के गाँव को। थोड़ी देर में चनर राम हल-बैल लेकर खेत की जुताई के लिए आ पहुँचा, साथ में आज रमिया भी आया था। चनर राम ने जुताई शुरू कर दी थी। रमिया दोनों घुटनों के बीच सिर को डाले हुए मेंड़ पर बैठा हुआ था और मिट्टी की छोटी ढेलियों को और छोटा करने का खेल खेल रहा था। जीवंती ने उसे देखा तो उससे नहीं रहा गया, उसके पास जाकर बोली, "क्या कर रहा है रे रमिया?"

सुपरिचित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानी, लघुकथाएँ एवं कविताएँ प्रकाशित। संप्रति स्वास्थ्य विभाग उत्तराखंड में सेवारत।

"कुछ नई," उसने सिर ऊपर करके संक्षिप्त सा उत्तर दिया।

"चल मेरे साथ, घर में बैठते हैं।" उसने रमिया का हाथ पकड़ते हुए कहा।

"बाबू डाटेंगे तो?"

"अरे नहीं रे, मैं बोल दूँगी तेरे बाबू को।" कहते हुए उसने चनर राम की ओर देखते हुए कहा, "मैं घर ले जा रही हूँ इसे।"

"हाँ, ठीक है, गुसानी ज्यू।" कहकर चनर राम अपने काम में लग गया।

जीवंती ने रमिया को खाट पर बैठाया और भीतर जाकर नारिंग (पहाड़ी संतरा) ले आई। जीवंती नारिंग छील-छीलकर उसे दे रही थी और वह बड़े चाव से खा रहा था। जीवंती को ऐसा लग रहा था, जैसे वह अपने बेटे को ही खिला रही हो। बातें करते हुए वह रमिया के माथे और सिर को भी सहला रही थी, तभी अचानक पांडेजी लौटकर घर आ पहुँचे, उनकी एक किताब घर पर ही छूट गई थी, जिसे लेने के लिए उन्हें वापस आना पड़ा। जीवंती पर नजर पड़ते ही उनके चेहरे पर रौद्र रस का भाव जोर पकड़ने लगा।

"तेरी अकल पर पत्थर पड़ गए हैं क्या?" उन्होंने जीवंती पर क्रोध भरी दृष्टि डालते हुए कहा।

"ऐसा क्या हो गया जो इतना भड़क रहे हो?"

"डूम के साथ बैठी है और कहती है क्या हो गया? जा गौंत (गो मूत्र) ला के छिड़क अपने पर और इस खाट पर भी।"

"और तू क्या कर रहा है रे यहाँ। अपने बाप के साथ आया है तो खेत में जा, यहाँ घर में तेरा क्या काम है रे!" कहते हुए उन्होंने रमिया को डाँट लगाई।

डाँट खाकर सहमा हुआ सा रमिया खेत की ओर चल दिया, लेकिन उसके दिमाग में डूम और गौंत शब्द बार-बार चोट कर रहे थे।

'पता नहीं कब अकल आएगी इस औरत को। दसियों बार ऊँच-नीच की बातें इसे समझा दी हैं फिर भी···' बड़बड़ाते हुए पांडेजी यजमान के घर को चल दिए।

शाम को घर लौटे, तब भी पांडेजी का मूड़ उखड़ा हुआ ही था। मूड़ तो जीवंती का भी ठीक नहीं था, बच्चे को ऐसे दुत्कारना उसे बहुत खला था।

बात पर बात आई तो उसने भी साफ-साफ कह दिया कि 'और तो जो भी हो, बच्चे के सामने ऐसी बात तो नहीं कहनी चाहिए थी।'

पांडेजी का पारा थोड़ा और चढ़ गया।

"अच्छा तो डूम अब बामनों के साथ बैठेंगे, हमें छुएँगे, वाह तू तो बड़ी सयानी हो रही है। आजकल नियम-धरम कुछ है की नहीं?"

"नियम तो समय के साथ बदलते रहते हैं। नियम की ही बात है तो बामनों के लिए भी तो दारू, मांस वर्जित है। कितने बामन हैं, जो इसका पालन करते हैं, लगने से छूत की बात करते हो तो अन्न बोने से फसल काटने रखने में चनर राम का ही तो हाथ लगता है तो उस अन्न को कैसे खा लेते हो? और हाँ, जब जागर लगती है, तब देवता बुलाने के लिए नौबरमा कौन कहता है। और जब डंगरिया गणेश राम में अवतार आता है और वह नाच-नाचकर सबको विभूत लगाता है, तब तुम्हारी छूत कहाँ जाती है? बड़े आए छूतवाले। सबमें ईश्वर का ही वास होनेवाला ठैरा। ऐसी छुआछूत करना तो पाप हुआ।"

"ठीक है, ठीक है, बहुत हो गया अब, तू ज्यादा लैक्चर मत झाड़।" कहते हुए पांडेजी ने अपना पल्ला झाड़ लिया।

जीवंती को बिल्कुल पसंद नहीं था कि केवल जाति के आधार पर आपस में इतना भेदभाव रखा जाए, जबकि पांडेजी इसके ठीक उलट विचार के थे। इसलिए पति-पत्नी में अकसर नोक-झोंक व तकरार हो जाती थी। कई बार वह पांडेजी को प्यार से भी समझाती थी कि सबका शरीर मिट्टी से बना है और सबने एक दिन इसी मिट्टी में ही मिल जाना है, फिर छूत कैसी?

दिन बीतते जा रहे थे, कोई कमी नहीं थी किंतु संतान सुख की कामना अधूरी रहने से जीवंती के दिल व दिमाग में विषाद के बादल गहराने लगे थे। जब भी वह छोटे-छोटे बच्चों को देखती तो अपनी सूनी गोद का अहसास कर घुटन से भर जाती थी। इसी घुटन का परिणाम यह हुआ कि वह धीरे-धीरे गुमसुम सी रहने लगी और अकसर देर तक शून्य में ताकती रहती थी। जीवन उसे अब निस्सार सा लगने लगा था। शुरू में तो पांडेजी ने गौर नहीं किया, लेकिन स्थिति खराब होने पर गाँव के सरकारी अस्पताल ले गए तो डॉक्टर ने डिप्रेशन बताया, कुछ दवाइयाँ दीं, लेकिन फायदा नहीं हुआ। गाँव के कुछ लोगों ने देवता का चक्कर कहा तो जागर भी लगाई, झाड़-फूँक भी कराई, लेकिन फायदा कुछ नहीं हुआ। हालत दिन-पर-दिन बिगड़ने लगी। अकेले में बड़बड़ाना, कपड़े पहनने का होश न रहना, अपने आप हँसना, कभी रोना जैसी परेशानियाँ आने लगीं तो कुछ लोगों की सलाह पर पांडेजी जीवंती को बरेली के मानसिक चिकित्सालय ले गए, स्थिति को देखते हुए डॉक्टर ने भरती की सलाह दी। पांडेजी को न चाहते हुए भी जीवंती को मानसिक चिकित्सालय में भरती कराना पड़ा। सभी औपचारिकताएँ पूरी कर वापस गाँव आए तो एक घर से दूसरे घर तक लोगों में यही चर्चा होने लगी कि पंडितजी की घरवाली तो पागलखाने पहुँच गई है।

लगभग आठ महीने हो गए थे जीवंती को भरती हुए। पांडेजी हर महीने मिलने जाते रहे। हालत में कुछ सुधार भी नजर आ रहा था, किंतु एक दिन अचानक अस्पताल से फोन आया कि मरीज की हालत ठीक नहीं है, जल्दी आएँ। पांडेजी अगले ही दिन बरेली अस्पताल पहुँचे, लेकिन तब तक जीवंती ने प्राण त्याग दिए थे। लाश को देखते ही पांडेजी खुद को सँभाल नहीं सके, सिर चकराने की वजह से गिर ही पड़ते कि पास खड़े सफाई कर्मचारी राधे ने सँभाल लिया। वार्डबॉय फटाफट जाकर एक गिलास में पानी लाया और पांडेजी के चेहरे पर पानी के छींटें मारने लगा। थोड़ी देर में पांडेजी को होश आया तो अस्पताल प्रशासन ने कुछ कागजों में उनके दस्तखत कराकर लाश उन्हें सौंप दी। अब पांडेजी की समझ नहीं आ रहा था की क्या किया जाए? बॉडी को यहाँ से इतनी दूर पहाड़ को ले जाने में भी समस्या, साथ में कोई है भी नहीं, किसे बुलाएँ? यहीं संस्कार करें तो कैसे हो कोई अंदाजा भी नहीं है यहाँ का। यही सोच-सोचकर उनकी आँखों से आसूँ बहने लगे और सिर पर हाथ रखकर वे घुटनों के बल लाश के पास ही बैठ गए। तभी उन्होंने अपने कंधे पर हथेली का स्पर्श महसूस किया। बगल में राधे खड़ा था।

"पंडितजी परेशान काहे होत हो। जो होनो थो सो ही गओ। अब का करनो है, जौ सोचौ। हमरे लायक कोई सेवा हो तो बतावो हमैं।" वह बोला।

पांडेजी ने एक नजर राधे पर डाली। लंबी-चौड़ी कद-काठी का राधे और उस पर चेहरे पर रोबदार घनी मूँछें, बेतरतीब दाढ़ी, उसका हुलिया देखकर उन्होंने सोचा, जरूर यह मुझे ठगने के चक्कर में है। उन्होंने कई लोगों के मुँह से सुन रखा था कि एक देशी दस पहाड़ियों को बेवकूफ बना सकता है, लेकिन जब व्यक्ति मजबूर होता है, उस वक्त उसे फायदा या नुकसान का गुणा-भाग लगाने का विचार नहीं आता, वह तो बस विकट परिस्थिति से उबरना चाहता है। ऐसे ही सोच-विचार कर उन्होंने असहाय होकर अपनी समस्या राधे के सामने रख दी। राधे बोला, "साब, यहीं संस्कार करनो है, तो हम व्यवस्था कराय देत हैं हियाँ ही थोड़ी दूर में श्मशान घाट है।"

पांडेजी के 'हाँ' कहने पर राधे अपने तीन साथियों को और बुला लाया। बाजार से अरथी व संस्कार का सामान भी वे लोग ले आए और चारों ने मिलकर अरथी तैयार की। अरथी को राधे और उसके साथियों ने कंधा देकर 'राम नाम सत्य है' बोला तो पांडेजी भी उनके साथ बोल पड़े—'सत्य बोलो गत्य है'।

श्मशान घाट में चिता की सारी तैयारी राधे व उसके साथियों ने करके पांडेजी से मुखाग्नि देने को कहा, लेकिन पांडेजी ने हाथ जोड़ दिए। वे कुछ भी कार्य करने के लिए स्वयं को सक्षम नहीं पा रहे थे।

आगे बढ़कर राधे ने चिता को मुखाग्नि दे दी। धीरे-धीरे चिता में अग्नि की लपटें तेज होने लगीं, राधे बीच-बीच में राल का छिड़काव कर रहा था, ताकि आग धीमी न हो। लगभग दो घंटे बाद जब चिता की लपटें ठंडी पड़ीं तो राधे ने कहा, "पंडितजी, अब हम चलें, तुमहुँ जावो।"

पांडेजी ठंडी होती चिता को अपलक देखने लगे। जीवंती के शब्द उनके कानों में अभी भी टकरा रहे थे'''सब मिट्टी के ही तो बने हैं और इसी मिट्टी में मिल जाना है, फिर छुआछूत कैसी? अचानक वे राधे को जोर से आवाज लगाकर बोले, "अरे भाई, इधर तो आओ।" राधे ने सोचा, पता नहीं, पंडितजी को क्या हुआ, जो ऐसे चिल्लाकर बुला रहे हैं। वह पलटकर वापस आया और बोला, "हाँ, पंडितजी बतावो।"

पांडेजी के मुख से कोई आवाज नहीं निकली, बस आँखों से आँसुओं की धार बह रही थी। उन्होंने राधे को अपनी बाँहों में भरकर सीने से लगा लिया। आग ठंडी हो चुकी थी।

प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र चकरपुर
खटीमा, जिला-ऊधम सिंह नगर
उत्तराखंड-२६२३०८
दूरभाष : ७८९५७०३६४८

लघुकथा

बुढ़ापे का प्रेम

● रोहित यादव

मनुष्य एक विवेकशील प्राणी है, वह निरंतर चिंतन-मनन करता रहता है। यदि जीवन को समझने का प्रयास किया जाए, तो वह किसी अजूबे से कम नहीं है। बुढ़िया का जीवन भी किसी अजूबे से कम नहीं था। वह जीवन के अंतिम चरण से गुजर रही थी, उसके चार पुत्र थे। चारों पुत्रों से अथाह प्रेम करती थी। चार में से तीन विवाहित थे। चौथा अविवाहित और उसकी आँखों का तारा था।

समय धीरे-धीरे बीत रहा था और छोटे को भी हल्दी लग गई, अब वह भी सबके बराबर हुआ। परिवार की आर्थिक स्थिति जर्जर थी। किसी तरह परिवार चल रहा था। एक समस्या खत्म हुई नहीं कि दूसरी मुँह बाए तैयार रहती थी। पारिवारिक सदस्यों में अनबन होने लगी और परिवार धीरे-धीरे बिखराव की तरफ बढ़ने लगा। बड़ा बेटा स्वभाव से आदर्शवादी और किसानी करता था। उसके खर्च ज्यादा थे, क्योंकि उसका परिवार बड़ा था। मझला और सझला दोनों कमासुत थे। दोनों भाई जो भी कुछ धनार्जन करते थे, उसमें से थोड़ा-बहुत बड़े भाई को परिवार चलाने के लिए देते थे।

आँधी की तरह कुछ और समय बीता, बुढ़िया और दोनों बेटों को यह शक होने लगा की बड़ा बेटा पैसा परिवार में न लगाकर अपने लिए इकट्ठा कर रहा है। उसके लाख सफाई देने के बावजूद कोई मानने को तैयार नहीं था। अंततः बड़े बेटे को अलग कर दिया। बड़े बेटे के प्रति उसका मोह भंग हुआ। अब वह मझले बेटे में रहने लगी एवं उसी के सारे कार्यों को करती थी। परंतु यह अधिक दिन तक नहीं चल सका। एक-एक करके सारे बेटे अलग हो गए। अब बुढ़िया का कोई ठिकाना न रहा।

अब वह अपने बूढ़े पति के साथ एक अलग मड़ई में रहने लगी। इस समय तक उसका चारों बेटों से मोहभंग हो चुका था और वह नाती-पोतोंवाली हो गई थी। जैसे-जैसे समय गुजरता था, उसका प्रेम अपने नाती-पोतों के प्रति बढ़ने लगा। अब वही उसकी अंतिम पूँजी थी, जिसको हमेशा सँजोए रखना चाहती थी। उसे कभी खोना नहीं चाहती थी। अथाह था बुढ़िया का प्रेम।

ग्राम समाज इंटर कॉलेज
जयनगर, आजमगढ़ (उ.प्र.)

प्रकृति रक्षति रक्षितः

● **सलिल सरोज**

संस्कृत भाषा में लिखित श्लोक 'धर्मो रक्षति रक्षितः', जिसका वर्णन महाभारत व मनुस्मृति में मिलता है, का अर्थ है कि जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है और पूर्ण श्लोक 'धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः/ तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्' का अर्थ है, जो मनुष्य धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है। धर्म की रक्षा करनेवाला मनुष्य कभी पराजित नहीं होता, क्योंकि उसकी रक्षा स्वयं धर्म (ईश्वर, मनुष्य, प्रकृति, ब्रह्मांड, इत्यादि) करता है। आज जब मानव प्राकृतिक असंतुलन की वजह से अनगिनत गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहा है तो ठीक इसी श्लोक की भाँति 'प्रकृति रक्षति रक्षितः' मतलब, जो प्रकृति की रक्षा करता है, प्रकृति भी उसी की रक्षा करती है, की महती आवश्यकता है। मानव जीवन की उत्पत्ति के साथ ही प्रकृति ने मनुष्य को उसकी जरूरत की हर चीज मुहैया कराई, लेकिन तदुपरांत मनुष्य की जरूरतें ना खत्म होनेवाली ख्वाहिशों और दिखावट में तब्दील होने लगी; मनुष्य और प्रकृति के बीच एक जंग छिड़ गई, जिसका कुपरिणाम दोनों को ही झेलना पड़ रहा है। प्रकृति अपने दर्द का निवारण खुद कर सकती है, लेकिन उसकी समय अवधि ज्यादा होती है, इसलिए हम मानव जाति से यह अपेक्षा की जाती है कि हम प्रकृति को मलहम लगाने में अपने स्वार्थ से उठकर मदद करें, ताकि प्रकृति हमें हमारी जरूरत की चीजें— साफ हवा, पानी, अन्न आदि बिना किसी भेदभाव के प्रदान करती रहे।

दुनिया का हर धर्म शांति का पैरोकार है, कम-से-कम तब जब प्रकृति संरक्षण की बात होती है। विश्व के सभी धर्मों में पर्यावरण को संरक्षित करने की बात कही गई है। प्रकृति के संरक्षण के लिए विभिन्न धार्मिक समूहों द्वारा वैश्विक या स्थानीय स्तर पर कई प्रयास किए जा रहे हैं। पाकिस्तान में स्थित कब्रगाहों में प्राचीन वृक्षों की प्रजातियाँ पाई जाती हैं, क्योंकि इनको काटना गुनाह माना जाता है, लेबनान के मैरोनाइट चर्च ने हरीसा के जंगलों को पिछले १,००० वर्षों से संरक्षित रखा है, थाईलैंड के बौद्ध भिक्षुओं ने संकटग्रस्त जंगलों की रक्षा हेतु वहाँ छोटे-छोटे विहारों की स्थापना की है तथा उसको पवित्र जंगल घोषित किया गया है।

सुपरिचित लेखक। कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा, वैज्ञानिक विभाग, नई दिल्ली में सीनियर ऑडिटर के पद पर २०१४ से कार्यरत। ८० से अधिक पत्र-पत्रिकाओं, ऑन लाइन साइट्स पर कविता, कहानी, लेख, व्यंग प्रकाशित।

इसके अलावा जर्मनी के ३०० चर्चों ने स्थानीय समुदायों के सहयोग से सौर ऊर्जा प्रणाली अपनाई है तथा वृहत् स्तर पर इसका लगातार प्रचार-प्रसार किया जा रहा है। अमेरिका में रहनेवाले अफ्रीकी मूल के लोगों द्वारा क्वांजा त्योहार प्रकृति संरक्षण का एक उपयुक्त उदाहरण है। वर्ष १९८६ में इटली के शहर असीसी में विश्व वन्यजीव कोष द्वारा 'असीसी घोषणा' का आयोजन किया गया। इसमें विश्व के पाँच प्रमुख धर्मों (ईसाई, हिंदू, इस्लाम, बौद्ध तथा यहूदी) के प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया गया था, ताकि वे इस मुद्दे पर सुझाव प्रस्तुत कर सकें कि उनके धर्मों में प्रकृति संरक्षण हेतु क्या प्रावधान है तथा किस प्रकार वे योगदान कर सकते हैं। वैश्विक स्तर पर पर्यावरण संरक्षण हेतु विभिन्न धर्मों के सहयोग से 'अलायंस ऑफ रिलिजन ऐंड कंजर्वेशन' नामक संगठन की स्थापना वर्ष १९९५ में की गई थी। विश्व वन्यजीव कोष द्वारा तथा अलायंस ऑफ रिलिजन एंड कंजर्वेशन के सहयोग से 'लिविंग प्लैनेट कैंपेन' नामक एक मुहिम शुरू की गई। इसके तहत विश्व के प्रमुख धर्मों ने पर्यावरण संरक्षण हेतु कार्य करने की प्रतिबद्धता प्रदर्शित की तथा उनकी इस प्रतिबद्धता को 'जीवंत पृथ्वी के लिए पवित्र उपहार' का नाम दिया गया। इस अभियान के तहत वकालत, शिक्षा, स्वास्थ्य, भूमि, संपत्ति, जीवनशैली तथा मीडिया के क्षेत्र में पर्यावरण संरक्षण को प्रोत्साहित करना शामिल है। इस प्रतिबद्धता के तहत जैन धर्म ने अंतरराष्ट्रीय जैन व्यापार पुरस्कार प्रारंभ किया है। इसके तहत उन कंपनियों को पुरस्कृत किया जाता है, जिन्होंने पर्यावरणीय प्रभावों को कम करते हुए प्रगति की है। इसी प्रकार स्वीडन के लूथरन चर्च के सहयोग

से स्वीडन में 'नेशनल फॉरेस्ट स्टीवार्डशिप काउंसिल' की स्थापना की गई।

भारतीय परिप्रेक्ष्य की बात करें तो लोक-संस्कृति में मानव की भूमिका प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षक/प्रबंधक के रूप में मानी गई है। इसमें मानव के साहचर्य के हजारों संदर्भ हैं और पर्यावरण के साथ उत्तम सामंजस्य रखने की सीख दी गई है। पेड़ों की पूजा करने से लेकर धरती व नदियों को माँ के पवित्र संबोधन से नवाजने का संस्कार भी है। हमारे लोकगीत, लोकनृत्य, लोककथाएँ, लोक-त्योहार— ये सब प्रकृति-प्रेम को प्रकट करनेवाले हैं। मनोरंजन, खेतों में बुवाई, धान की कटाई आदि अवसरों पर हमारे पुरखे मिल-जुलकर जल, पृथ्वी, वायु अग्नि और आकाश की महिमा का बखान करते थे। कृतज्ञता का भाव उनके रोम- रोम से प्रकट होता था। लोक कहावतों व लोक कथाओं पर नजर डालें तो उनकी सीख में पर्यावरण के प्रति श्रद्धा का भाव झलकता है। रामायण, महाभारत, गीता, वायु-पुराण, स्कंद पुराण, भविष्य पुराण, वराह पुराण, ब्रह्म पुराण, मार्कंडेय पुराण, मत्स्य पुराण, गरुड़ पुराण, श्रीविष्णु पुराण, भागवत पुराण, श्रीदेवी भागवत पुराण वेद, उपनिषद् तथा अन्य धार्मिक ग्रंथ, पेड़-पौधे, जीव-जंतुओं पर दया करने की सीख देते हैं। मानसिक शांति, शारीरिक सुख, इन सबकी पूर्ति के साधन प्राकृतिक संपदा ही है। गेहूँ, जौ, तिल, चना, चंदन, लाल पुष्प, केसर, खस, कमल, तांबूल, श्वेत पुष्प, बाँस, मिट्टी, फल, तुलसी, हल्दी, पीत-पुष्प, शहद, इलाइची, सौंफ, उड़द, काले-पुष्प, सरसों के फूल, मुलेठी, देवदार, बिल्व वृक्ष की छाल, आम, पला, खैर, पीपल, गूलर, दूब, कुश आदि को संरक्षित रखने के उद्देश्य से इन्हें किसी दिन, त्योहार, देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना से जोड़ा गया है। औषधि के रूप में फलों तथा जड़ी-बूटियों की रक्षा करने की बात कही गई है और इन्हें घरों के निकटस्थ लगाकर पर्यावरण को स्वच्छ रखने की सलाह दी गई है, जैसे अंगूर, केला, अनार, सेब, जामुन, प्याज, लहसुन, गाजर, मूली, नीबू, अदरक, आँवला, घीया, बादाम, आम, टमाटर, अखरोट, अजवाइन, अनानास, अश्वगंधा, गिलोय, तंबाकू, तरबूज, तुलसी, दालचीनी, धनिया, पुदीना, संतरा, पान, पीपल, बबूल, ब्राह्मी बूटी, काली मिर्च, लाल मिर्च, लौंग, हरड़, बहेड़ा आदि अनेक बूटियों का प्रयोग करने से मनुष्य निरोग रह सकता है।

प्रकृति का उपहार हमें अपनी आगेवाली पीढ़ी से गिरवी के रूप में मिली है, जिसकी जान बचने की जिम्मेदारी हम पर है। महात्मा गांधी कहते थे—प्रकृति के पास हमारी जरूरतों के लिए पर्याप्त संसाधन है, लेकिन लोभ के लिए पूरी पृथ्वी अलबत्ता पूरा ब्रह्मांड भी कम है। अपनी जरूरतों को अगर सीमित नहीं कर सकते तो जरूरतों को लालच में तब्दील न करने की कोशिश जरूर करनी चाहिए। मार्टिन लूथर किंग ने कहा है—किसी एक के ऊपर अन्याय सबके ऊपर अन्याय है।

हमें प्रकृति संरक्षण सीखने के लिए किसी अन्य देश या तकनीक की आवश्यकता नहीं है। हमारे धर्म, शास्त्रों में यह बहुतायत में लिखा गया है और हमारे पूर्वजों ने प्रकृति संरक्षण के अनेक बेहतरीन उपाय बताए हैं, जिसकी लिए ज्यादा धन की भी आवश्यकता नहीं है। उन्होंने इसे हमारी आदत में शामिल करके एक रोजमर्रा की चीज की तरह पेश किया था, न कि आज की तरह किसी खास दिन पर वृक्षारोपण कार्यक्रम की तरह। संरक्षण में सिर्फ पेड़ लगाना ही नहीं, बल्कि उनकी जान बचाना भी शामिल है और यह किस तरह किया जा सकता है, यह हमें विरासत में मिली है जिसे हमें पुनर्जीवित करने की और उन्हें सँभालने की खास जरूरत है। हमारे ऋषि जानते थे कि पृथ्वी का आधार जल और जंगल है। इसलिए उन्होंने पृथ्वी की रक्षा के लिए वृक्ष और जल को महत्त्वपूर्ण मानते हुए कहा है—'वृक्षात् वर्षति पर्जन्य: पर्जन्यादन्न सम्भव:', अर्थात् वृक्ष जल है, जल अन्न है, अन्न जीवन है। जंगल को हमारे ऋषि आनंददायक कहते हैं, 'अरण्यं ते पृथिवी स्योनमस्तु' यही कारण है कि हिंदू जीवन के चार महत्त्वपूर्ण आश्रमों में से ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास का सीधा संबंध वनों से ही है। हम कह सकते हैं कि इन्हीं वनों में हमारी सांस्कृतिक विरासत का संवर्धन हुआ है। हिंदू संस्कृति में वृक्ष को देवता मानकर पूजा करने का विधान है। वृक्षों की पूजा करने के विधान के कारण हिंदू स्वभाव से वृक्षों का संरक्षक हो जाता है। सम्राट् विक्रमादित्य और अशोक के शासनकाल में वन की रक्षा सर्वोपरि थी। वैदिक काल में जीवित वृक्षों को काटना प्रतिबंधित था और ऐसे कृत्यों के लिए दंड निर्धारित किया गया था। उदाहरण के लिए, याज्ञल ६ए, स्मृति ने पेड़ों और जंगलों को काटने को दंडनीय अपराध घोषित किया है और २० से १० रानी का दंड भी निर्धारित किया है। चाणक्य ने भी आदर्श शासन व्यवस्था में अनिवार्य रूप से अरण्यपालों की नियुक्ति करने की बात कही है। पर्यावरण संरक्षण के कानून की दृष्टि से मुगल सम्राटों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है, उनके महलों के चारों ओर फलों के बागों और हरे-भरे पार्कों की स्थापना, केंद्रीय और प्रांतीय मुख्यालय, सार्वजनिक स्थान, नदियों के किनारे और घाटी में वे गरमी के मौसम के स्थानों या अस्थायी मुख्यालय के रूप में इस्तेमाल करते थे।

हमारे महर्षि यह भली प्रकार जानते थे कि पेड़ों में भी चेतना होती है, इसलिए उन्हें मनुष्य के समतुल्य माना गया है। ऋग्वेद से लेकर बृहदारण्यकोपनिषद्, पद्मपुराण और मनुस्मृति सहित अन्य वाङ्मय में इसके संदर्भ मिलते हैं। छांदोग्य उपनिषद् में उद्दालक ऋषि अपने पुत्र श्वेतकेतु से आत्मा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि वृक्ष जीवात्मा से ओतप्रोत होते हैं और मनुष्यों की भाँति सुख-दु:ख की अनुभूति करते हैं। हिंदू दर्शन में एक वृक्ष की मनुष्य के दस पुत्रों से तुलना की गई है— दशकूप समावापी: दशवापी समोह्रद:/दशह्रद सम:पुत्रो दशपत्र समोद्रुम:। इसी संस्कृति में हर भारतीय घर में तुलसी का पौधा कहीं-न-कहीं मिल ही जाता है। तुलसी का पौधा मनुष्य को सबसे अधिक प्राणवायु ऑक्सीजन

देता है। तुलसी के पौधे में अनेक औषधीय गुण भी मौजूद हैं। पीपल को देवता मानकर भी उसकी पूजा नियमित इसलिए की जाती है, क्योंकि वह भी अधिक मात्रा में ऑक्सीजन देता है। देवों के देव महादेव तो बिल्व-पत्र और धतूरे से ही प्रसन्न होते हैं। यदि कोई शिवभक्त है तो उसे बिल्वपत्र और धतूरे के पेड़-पौधों की रक्षा करनी ही पड़ेगी। वट पूर्णिमा और आँवला ग्यारस का पर्व मनाना है तो वट वृक्ष और आँवले के पेड़ धरती पर बचाने ही होंगे। हिंदुओं के चार वेदों में से एक अथर्ववेद में बताया गया है कि आवास के समीप शुद्ध जलयुक्त जलाशय होना चाहिए। जल दीर्घायु प्रदायक, कल्याणकारक, सुखमय और प्राणरक्षण होता है। शुद्ध जल के बिना जीवन संभव नहीं है। यही कारण है कि जल स्रोतों को बचाए रखने के लिए हमारे ऋषियों ने इन्हें सम्मान दिया। पूर्वजों ने कल-कल प्रवहमान सरिता गंगा को ही नहीं वरन सभी जीवनदायिनी नदियों को माँ कहा है। हिंदू धर्म में अनेक अवसर पर नदियों, तालाबों और सागरों की माँ के रूप में उपासना की जाती है। छांदोग्योपनिषद् में अन्न की अपेक्षा जल को उत्कृष्ट कहा गया है। महर्षि नारद ने भी कहा है कि पृथ्वी भी मूर्तिमान जल है। अंतरिक्ष, पर्वत, पशु-पक्षी, देव-मनुष्य, वनस्पति सभी मूर्तिमान जल ही हैं। जल ही ब्रह्मा है। महान् ज्ञानी ऋषियों ने धार्मिक परंपराओं से जोड़कर पर्वतों की भी महत्ता स्थापित की है।

दुनिया का हर धर्म शांति का पैरोकार है, कम-से-कम तब जब प्रकृति संरक्षण की बात होती है। विश्व के सभी धर्मों में पर्यावरण को संरक्षित करने की बात कही गई है। प्रकृति के संरक्षण के लिए विभिन्न धार्मिक समूहों द्वारा वैश्विक या स्थानीय स्तर पर कई प्रयास किए जा रहे हैं। पाकिस्तान में स्थित कब्रगाहों में प्राचीन वृक्षों की प्रजातियाँ पाई जाती हैं, क्योंकि इनको काटना गुनाह माना जाता है, लेबनान के मैरोनाइट चर्च ने हरीसा के जंगलों को पिछले १,००० वर्षों से संरक्षित रखा है, थाईलैंड के बौद्ध भिक्षुओं ने संकटग्रस्त जंगलों की रक्षा हेतु वहाँ छोटे-छोटे विहारों की स्थापना की है तथा उसको पवित्र जंगल घोषित किया गया है।

पर्वत, देश के प्रमुख पर्वत देवताओं के निवासस्थान हैं और अगर पर्वत देवताओं के वास स्थान नहीं होते तो कबके खनन माफिया उन्हें उखाड़ चुके होते। विंध्यगिरी महाशक्तियों का वास स्थल है, कैलाश महादेव की तपोभूमि है। हिमालय को तो भारत का किरीट कहा गया है। महाकवि कालिदास ने 'कुमारसम्भवम्' में हिमालय की महानता और देवत्व को बताते हुए कहा है, 'अस्तुस्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराज:', भगवान् श्रीकृष्ण ने गोवर्धन की पूजा का विधान इसलिए शुरू कराया था, क्योंकि गोवर्धन पर्वत पर अनेक औषधि के पेड़-पौधे थे, मथुरा के गोपालकों के गोधन के भोजन-पानी का इंतजाम उसी पर्वत पर था। मथुरा-वृंदावन सहित पूरे देश में दीपावली के बाद गोवर्धन पूजा धूमधाम से की जाती है। इसी तरह हमारे महर्षियों ने जीव-जंतुओं के महत्त्व को पहचानकर उनकी भी देवरूप में अर्चना की है। मनुष्य और पशु परस्पर एक-दूसरे पर निर्भर हैं। हिंदू धर्म में गाय, कुत्ता, बिल्ली, चूहा, हाथी, शेर और यहाँ तक की विषधर नागराज को भी पूजनीय बताया है। प्रत्येक हिंदू परिवार में पहली रोटी गाय के लिए और आखिरी रोटी कुत्ते के लिए निकाली जाती है। चींटियों को भी बहुत से हिंदू आटा डालते हैं। चिड़ियों और कौओं के लिए घर की मुँड़ेर पर दाना-पानी रखा जाता है। पितृपक्ष में तो काक को बाकायदा निमंत्रित करके दाना-पानी खिलाया जाता है। इन सब परंपराओं के पीछे जीव संरक्षण का संदेश है। हिंदू गाय को माँ कहता है, उसकी अर्चना करता है। नागपंचमी के दिन नागदेव की पूजा की जाती है। नाग-विष से मनुष्य के लिए प्राणरक्षक औषधियों का निर्माण होता है। नाग पूजन के पीछे का रहस्य ही यह है। हिंदू धर्म का वैशिष्ट्य है कि वह प्रकृति के संरक्षण की परंपरा का जन्मदाता है। हिंदू संस्कृति में प्रत्येक जीव के कल्याण का भाव है। हिंदू धर्म के जितने भी त्योहार हैं, वे सब प्रकृति के अनुरूप हैं। मकर संक्रांति, वसंत पंचमी, महाशिवरात्रि, होली, नवरात्र, गुड़ी पड़वा, वट पूर्णिमा, ओणम, दीपावली, कार्तिक पूर्णिमा, छठ पूजा, शरद पूर्णिमा, अन्नकूट, देव प्रबोधिनी एकादशी, हरियाली तीज, गंगा दशहरा आदि सब पर्वों में प्रकृति संरक्षण का पुण्य स्मरण है।

प्रकृति का उपहार हमें अपनी आगेवाली पीढ़ी से गिरवी के रूप में मिली है, जिसकी जान बचने की जिम्मेदारी हम पर है। महात्मा गांधी कहते थे—प्रकृति के पास हमारी जरूरतों के लिए पर्याप्त संसाधन है, लेकिन लोभ के लिए पूरी पृथ्वी अलबत्ता पूरा ब्रह्मांड भी कम है। अपनी जरूरतों को अगर सीमित नहीं कर सकते तो जरूरतों को लालच में तब्दील न करने की कोशिश जरूर करनी चाहिए। मार्टिन लूथर किंग ने कहा है—किसी एक के ऊपर अन्याय सबके ऊपर अन्याय है। यदि प्रकृति के साथ आज आप अपने आस-पास न्याय नहीं कर रहे हैं तो इसके दूरगामी परिणाम आपके विश्व के किसी कोने में किसी-न-किसी रूप में देखने को मिलेंगे। पृथ्वी पर एक स्वस्थ जीवन की परिकल्पना मनुष्य और प्रकृति के साहचर्य के बिना करना असंभव है। हम सबको चेतने की सख्त जरूरत है और यदि अब भी देर की तो यह आखिरी देर होगी।

साअ
जी ००६, टॉवर-३
पंचशील पेबल्स, नवीन अस्पताल के समीप
वैशाली, सेक्टर-३, गाजियाबाद
उत्तर प्रदेश-२०१९१४
दूरभाष : ९९६८६३८२६७

बाल-कहानी

जादुई पिटारा

● **ललित शौर्य**

आसमान में भयंकर बिजली कड़क रही थी। ऐसा लग रहा था, मानो अब आसमान धरती पर आ गिरेगा। ये आवाजें बड़ी अजीब थीं। कभी लगता था, ज्वालामुखी फूट रहा है। कभी भूकंप के झटके से महसूस हो रहे थे। धरती और आसमान दोनों ही इस रहस्यमयी घटना से प्रभावित थे।

नितिन अपनी झोंपड़ी में दादी से चिपकर लेटा हुआ था। वह डर के मारे काँप रहा था।

"डरो मत बेटा, सब ठीक हो जाएगा। शायद बाहर मौसम खराब है।" दादी ने नितिन के माथे को सहलाते हुए कहा।

"ऐसी बिजली, ऐसी आवाजें पहले कभी नहीं सुनी, दादी!" नितिन ने सहमते हुए पूछा।

"कभी-कभी होता है बेटा। जब हम छोटे थे, तुम्हारी उम्र के, तब भी ऐसा कई बार होता था।" दादी ने समझाते हुए कहा।

थोड़ी देर में सब शांत हो गया। दादी गहरी नींद में सो गई। वह अब खर्राटे लेने लगी थी। लेकिन नितिन को नींद नहीं आ रही थी। वह असमंजस में था। आखिर बाहर क्या हो रहा था। वह जनना चाहता था। अचानक उसे जोरों की आवाज सुनाई दी। ऐसा लगा आसमान से कुछ गिरा हो। यह आवाज ठीक उसकी झोंपड़ी के बाहर से आई। उसने दादी को उठाना चाहा, लेकिन दादी गहरी नींद में थी। वह डरते हुए बाहर आया। उसने देखा सामने एक चमकदार पिटारा पड़ा हुआ था। उससे रोशनी निकल रही थी। वह उस पिटारे के पास गया। उसमें एक छड़ी रखी हुई थी। जो देखने में बड़ी सुंदर थी।

उसी समय एक परी हाँफते हुए उसके पास पहुँची। उसने कहा, "ये जादुई पिटारा मेरा है। इसे भयंकर परी चुराकर ले जा रही थी। हम दोनों की हाथापाई में यह यहाँ गिर गया। तुमने ठीक किया जो इसे सँभाल लिया।"

"तुम कौन हो? मैं कैसे मान लूँ की यह पिटारा तुम्हारा है। तुम्हारी और भयंकर परी की लड़ाई चल रही थी, इस बात का क्या सबूत है।" नितिन ने हिम्मत जुटाते हुए कहा।

"मैं सोनपरी हूँ। क्या तुमने आज बिजलियाँ कड़कने को आवाज नहीं सुनी? आसमान में रोशनी नहीं देखी? ये सब हम दोनों की लड़ाई के कारण हो रहा था। भयंकर परी मेरी जादुई छड़ी को पा लेना चाहती है। जो मैंने इस जादुई पिटारे में छुपाकर रखी है।" सोनपरी ने कहा।

देश की तमाम प्रतिष्ठित समाचार पत्र-पत्रिकाओं में कविता, बाल कहानी, व्यंग्य प्रकाशित। पाँच बाल कहानी-संग्रह प्रकाशित, छह संयुक्त काव्य-संकलनों का संपादन। एक व्यक्तिगत कविता-संग्रह प्रकाशित। आकाशवाणी से कविताओं का प्रसारण। दूरदर्शन में साक्षात्कार प्रसारित।

"अच्छा तो ये बात है। लेकिन ये पिटारा यहाँ कैसे गिर गया? अभी भयंकर परी कहाँ है? क्या तुमने उसे मार डाला?" नितिन ने एक साथ कई प्रश्न करते हुए कहा।

"मेरे और भयंकर परी के बीच बहुत देर तक युद्ध चला। फिर अचानक वह मेरे हाथ से यह जादुई पिटारा छिनने में कामयाब हो गई। वह पिटारा लेकर भागने की कोशिश कर रही थी। मैंने पीछे से पिटारे को खींचना चाहा तो वह उसके हाथ से गिर गया। देखते-ही-देखते पिटारा हम दोनों की आँखों से ओझल हो गया। मैं और वह पिटारे की खोज में घूम रहे हैं। वह पिटारा ढूँढ़ते हुए किसी भी समय यहाँ आ सकती है। तुम जल्दी से इसे मुझे लौटा दो।" सोनपरी ने कहा।

सोनपरी और नितिन अभी बातें ही कर रहे थे तब तक भयंकर परी अट्टहास करते हुए वहाँ पहुँच गई।

"अरे बच्चे ये जादुई पिटारा तुम्हारे हाथों में क्या कर रहा है। जल्दी से इसे मुझे दे दो, वरना ठीक नहीं होगा। तुम्हें बहुत बुरी सजा मिलेगी।" भयंकर परी ने कड़कती आवाज में कहा।

नितिन कुछ समझ पाता तब तक सोनपरी, भयंकर परी पर टूट पड़ी। दोनों में फिर से लड़ाई होने लगी। दोनों एक-दूसरे पर अपनी शक्तियों का प्रयोग करने लगे। धीरे-धीरे सोनपरी की शक्तियाँ कमजोर पड़ने लगी थीं। वह थककर चूर हो गई थी। भयंकर परी उस पर हावी हो चुकी थी। नितिन समझ गया था कि अगर सोनपरी लड़ाई में हार गई तो भयंकर परी उसे नहीं छोड़ेगी।

उसने तुरंत जादुई पिटारा खोला। उसमें से जादुई छड़ी निकालकर सोनपरी की ओर उछाल दी। सोनपरी ने फुर्ती के साथ छड़ी को पकड़ लिया।

छड़ी पकड़ते ही सोनपरी को असीम शक्तियाँ प्राप्त हो गईं। उसने छड़ी घुमाते ही भयंकर परी को धराशायी कर दिया। उसके बाद फिर से छड़ी घुमाकर उसे तोता बना दिया। यह देखकर नितिन बहुत खुश हुआ। अब भयंकर परी तोता बनकर तरह-तरह की आवाजें निकाल रही थी। ये सुनकर सोनपरी और नितिन हँसने लगे।

"तुमने मेरी मदद की है। तुम एक नेकदिल बच्चे हो। मैं तुम्हें कुछ देना चाहती हूँ।" सोनपरी ने कहा।

"नहीं, मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैंने तुम्हारी मदद इसलिए कि क्योंकि मुझे लगा कि तुम सच्चाई के साथ हो। क्योंकि वास्तव में वह जादुई पिटारा तुम्हारा ही था।" नितिन बोला।

"फिर भी मैं अपनी ओर से तुम्हें एक उपहार देना चाहती हूँ।" सोनपरी ने कहते हुए अपनी छड़ी घुमाई। छड़ी घुमाते ही उसके हाथ में एक जादुई पिटारा आ गया।

"यह लो। तुम्हारे लिए एक नया जादुई पिटारा है। इससे तुम जो भी माँगोगे, तुम्हें मिलेगा। इसका उपयोग तुम दूसरों की मदद के लिए भी कर सकते हो।" यह कहते हुए सोनपरी ने नितिन को जादुई पिटारा भेंट किया।

नितिन सोनपरी की भेंट पाकर बहुत खुश हुआ। उसने सोनपरी का धन्यवाद किया। पलक झपकते ही सोनपरी तोते को लेकर वहाँ से गायब हो गई।

नितिन ने वह पिटारा सँभालकर रख लिया। अब वह उस जादुई पिटारे के माध्यम से समय-समय पर लोगों की मदद करने लगा, साथ ही वह अपनी जरूरतों को भी पूरा करता।

ग्राम+पोस्ट-मुवानी
जिला-पिथौरागढ़ (उत्तराखंड)
दूरभाष : ७३५१४६७७०२

कोई न सगा

हाइकु

● कृष्ण कुमार 'अजनबी'

वेदना पढ़ो
भले वेद ना पढ़ो
खुद को गढ़ो।

होती यदि जो
बड़ी सी सीढ़ी तो यों
तारे तोड़ते।

हारना तय
हार मेरी नियति
तेरे सिवाय।

ऐसी उपमा
रास नहीं आए तो
कैसी उपमा!

मैं रूठी रहूँ
तुम रूठे रहो तो
मनाए कौन?

हूँ एक पात्र
लड़ना ही है मुझे
निमित्त मात्र।

इशारा करो
कविता में अधिक
शब्द न भरो।

दरारें मौन
खाई बनी क्रमश:
भरेगा कौन?

रोज संघर्ष
बीत गए जीवन
के कई वर्ष।

अच्छी कविता
दूसरी को जन्म दे
सच्ची कविता।

मैं रहूँ चुप
तुम भी रहो चुप
यों गुपचुप।

क्यों करें हम
प्रकृति के विरुद्ध
ऐसी प्रार्थना।

आदी न बनो
प्रशंसा सुनने के
वादी न बनो।

गम का मारा
लेखनी ही सहारा
कवि बेचारा।

है असंभव
मृत्यु की मौत माँगे
तुच्छ मानव।

सुप्रसिद्ध चित्रकार एवं लेखक। रेखाचित्र-संग्रह 'मेरी बोलती तसवीरें', अनूदित नाट्य 'जगन्नाथ प्रिय नाटकम्' तथा एक व्यंग्य उपन्यास (उड़िया में), अनूदित कहानी-संग्रह 'अलौकिक और अन्य कहानियाँ' (हिंदी में) के अलावा देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ एवं रेखाचित्र प्रकाशित।

आखिरी चिट्ठी
याद दिला रही यों
दोस्ती व मिट्टी।

इनसान बनो
हैवान नहीं मित्र
ऐसे न तनो।

कोई न सगा
इस जहाँ में मुझे
सबने ठगा।

कुरसी की भूख
बदली नियत तो
बदला रुख।

वक्त ने चली
ऐसी चाल कि हम
देखते रहे।

बाप रे बाप
जीवन अभिशाप
हजारों पाप!

पो. देवभोग,
जिला-रायपुर-४९३८९०
दूरभाष : ९६९१११९४९५३

दुर्भाग्य

मूल : **आतिफा मोजाफरी**

अनुवाद : **बालकृष्ण काबरा 'एतेश'**

श्रीमती आतिफा मोजाफरी अफगानिस्तान की महिला कथाकार हैं। उनका 'अनटोल्ड राइट अफगानिस्तान प्रोजेक्ट' के अंतर्गत अफगानी महिला कथाकारों की कहानियों के अंग्रेजी अनुवादों का पहला संग्रह 'माई पेन इज द विंग ऑफ ए बर्ड' हाल ही में प्रकाशित हुआ है। यह कहानी इसी संग्रह से ली गई है, जो अंग्रेजी में 'बैड लक' शीर्षक से प्रकाशित है। सुरक्षा कारणों से आतिफा मोजाफरी का फोटो और परिचय उपलब्ध नहीं है। इस कहानी का हिंदी रूपांतर हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।

शरीफ ने रहीमा को बोलनी (एक व्यंजन) बनाने के लिए सुबह-सुबह ताजा कच्चे प्याज चुने। इससे वह व्यस्त रहती थी। यह उसे उन दिनों की बात याद दिलाती थी, जब उसके भाई इब्राहिम की पत्नी अजधर से जरगरान तक लंबी दूरी तय कर हरे प्याज लेकर उसके घर आती थी। हर दिन उसकी बात एक जैसी हुआ करती थी। वह अपनी बात कहती और रहीमा बस उसे सुनती थी।

"रहीमा जान, मुझे पता है कि तुम युवा हो और तुम्हारी अपनी इच्छाएँ तथा सपने हैं। लेकिन तुम्हें यह स्वीकार करना होगा कि तुम्हारे पास शादी करने का अवसर कम है, विशेषत: एक स्वस्थ युवक से शादी करने का।"

रहीमा पहले भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ऐसे शब्द कई बार सुन चुकी थी। किंतु वह अपनी इच्छा को रोक नहीं पाती थी कि उसका भी अपना एक परिवार हो, वह गृहिणी बने और बच्चों की परवरिश करे।

अली उसका चचेरा भाई था। वे दोनों भेड़ों की देखभाल करते, जलाऊ लकड़ी इकट्ठा करते और झरने से पानी लाते। इससे भी विशेष बात यह थी कि दोनों ने अपने भविष्य के लिए योजना भी बनाई थी। लेकिन समय ने ही दगा दे दी और रहीमा की इच्छाएँ पूरी नहीं हो पाईं।

जब रहीमा १५ वर्ष की हुई, उसकी आँखों की रोशनी चली गई। उसकी हरी आँखें, जो केवल अली को देखती थीं, अब वे न तो उसे, न ही कुछ और देख सकती थीं। उसके जीवन में अँधेरा छा गया। रहीमा के माता-पिता अपनी सबसे छोटी बेटी को मुल्लाओं के पास और दरगाहों में ले जाने के अलावा और कुछ भी न कर सके। उसकी आँखों की रोशनी लौट आए, इसके लिए उन्होंने तीर्थाटन किया और अपने सबसे हट्टे-कट्टे भेड़ की बलि दी, किंतु रहीमा की आँखों के धब्बे उस तगड़े भेड़ से कहीं बहुत बड़े थे। काबुल जाने पर इसका इलाज हो सकता था, लेकिन युद्ध और हत्याओं के चलते यह दूर, बहुत दूर की बात थी।

सब अपने-अपने जीवन के बारे में सोच रहे थे और अपनी जमीन और घर छोड़कर घाटियों के लिए निकल पड़े थे। रहीमा का दर्द भुला दिया गया। अली ने उससे भेड़ों की संख्या के बारे में बात करना बंद कर दिया, जिसकी उन्होंने योजना बनाई थी। वे अब एक साथ झरने पर भी नहीं जाते। रहीमा को लगा कि उसे अब उससे शादी करने का सपना नहीं देखना चाहिए।

दस वर्ष बीत गए। तालिबानी चले गए थे और अली भी अपना सामान समेटकर उनसे पहले ही चला गया था। वह ईरान गया और अंधकार में खोई रहीमा वहीं रही। वह कई बार यह सोचती कि यदि अली के साथ ऐसा हुआ होता तो क्या वह अभी भी अपने प्रेम का सम्मान कर पाती।

पच्चीस साल की उम्र में रहीमा को अपने दिल के दरवाजे फिर से खोलने पड़े। इब्राहिम की पत्नी ने इसे संभव किया। वह चाहती थी कि रहीमा उसके भाई शरीफ से शादी कर ले, जो एक बारूदी सुरंग में अपना एक पैर और एक आँख खो चुका था।

रहीमा को अब बार-बार यह महसूस होता कि वह अपने भाई पर बोझ है, हालाँकि अपनी आँखों के बदले उसने अपने हाथों और कानों का उपयोग करना सीख लिया था। खाना बनाते समय वह जानती थी कि नमक का डिब्बा छोटा है और शक्कर का डिब्बा बड़ा। उसे पता था कि चाकू हमेशा गैस कुकर के ऊपर लटका रहता है और आलू स्टोव के बाजू में रखी टोकनी में रखे होते हैं। वह खाना बना सकती थी, कपड़े धो सकती थी और घर बुहार सकती थी। वह अपने भाई के घर से बाजार तक छड़ी के सहारे जा सकती थी।

रहीमा को फिर भी लगता था कि वह एक बोझ है। उसके भाई के पास एक दुधारू गाय थी और जमीन का एक टुकड़ा भी, जिसमें आलू के सिवाय और कुछ भी नहीं उगाया जा सकता था। उसे अपने छोटे बच्चों की परवरिश करनी थी और जेबें खाली रहती थीं। अंतत: रहीमा को निर्णय

लेना ही पड़ा।

रहीमा सफेद, पारंपरिक पहनावे में थी और मौलवी ने शादी की रस्में पढ़ीं। एक घंटे पहले तक जो उसके लिए अजनबी था, अब उसका पति हो गया था और वह यह सोच भी नहीं सकती थी कि वह कैसा दिखता है।

अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए रहीमा का पति शरीफ एक छोटे ठेले पर सब्जियाँ बेचा करता था। वह जान चुका था कि अपने परिवार की देखभाल के लिए उसे सक्षम व्यक्तियों की तरह काम करना होगा, भले ही चिलचिलाती धूप में उसे कई घंटे ग्राहकों का इंतजार करना पड़े। उसने रहीमा के खाना बनाने के बारे में कभी कोई शिकायत नहीं की। एक वर्ष व्यतीत होने तक रहीमा ने अपने पति का स्वभाव जान लिया था। वह कम नमकवाले खाने, कड़क चाय और घर में खामोशी बनाए रखने की आदी हो चुकी थी। उसका पति उसकी इज्जत करता था और वह अपनी पिछली पत्नी की मृत्यु के गम से उबर चुका था।

रहीमा के दिन सामान्य रूप से व्यतीत होने लगे। वह घर के सारे काम उसी तरह करती, जैसे वह अपने भाई के घर किया करती थी। उसने जान लिया था कि आँखों के उपयोग के बदले कैसे अपने कानों को तेज करना है। वह अपने पति के ठेले के पहियों की आवाज सुनकर जान जाती थी कि वह आ गया है। उसे केतली की आवाज सुनकर पता चल जाता था कि पानी उबल चुका है। वह उसके लिए कप में ग्रीन-टी डालती, यद्यपि वे सामान्य दुआ-सलाम करने के अलावा कभी कुछ नहीं बोलते थे। उसे घर का काम कठिन नहीं लगा। उसके भाई के घर के काम की तुलना में दो रोटी सेंकना, दो बरतन और प्याले धोना उसके लिए बहुत आसान था।

रहीमा खाना बनाने के बाद एक कोने में रेडियो सुन रही थी, तभी उसके पुराने नोकिया की घंटी बजी। उसके भाई ने फोन किया था, "कल अपने पति के साथ हमारे यहाँ चली आओ। अली ईरान से लौट आया है।" अपने भाई की इस बात को उसका मन स्वीकार नहीं कर पा रहा था। उसका दिल जोरों से धड़कने लगा। यह ऐसा था, मानो किसी प्यासे रेगिस्तान पर नदी बहने लगी हो।

जब वे वहाँ पहुँचे तो रहीमा ने परिवार की महिलाओं को अली की वापसी के बारे में बातें करते हुए सुना। रहीमा ने हमेशा की तरह गपशप और अफवाहों से दूर रसोई में बैठना पसंद किया। उसने वहाँ अपनी भाभी को बच्चों से यह कहते हुए सुना कि वे शरारत न करें। रहीमा उसकी आवाज की ओर बढ़ी और उसे गले लगाने को अपने हाथ बढ़ाए।

"हेलो, प्यारी भाभी!"

"हेलो रहीमा जान! कैसी हो तुम? कब आईं तुम? मैं देख ही नहीं पाई।"

"बस अभी-अभी। मैं ठीक हूँ। दरअसल आप अपने बच्चों में व्यस्त थीं।"

"तुम हॉल में क्यों नहीं बैठीं?"

"मैं अपनी महिलाओं की सतही बातें नहीं सुनना चाहती। मुझे तो तुमसे बात करनी है।"

सुपरिचित लेखक एवं कवि और अनुवादक। अद्यतन कविता संग्रह 'छिपेगा कुछ नहीं यहाँ'। विश्व काव्यों के अनुवादों का संग्रह 'स्वतंत्रता जैसे शब्द' प्रकाशित एवं दूसरा संग्रह 'जब उतरेगी साँझ शांतिमय' प्रकाशनाधीन।

"बहुत अच्छा! आओ।"

रहीमा और भाभी की बातें चल रही थीं, तभी उन्होंने एक पुरुष की आवाज सुनी। एक दूसरे कमरे में अली की घर के पुरुषों से दुआ-सलाम चल रही थी। रहीमा ने उसकी आवाज को अच्छे से पहचान लिया; जबकि वे कई वर्षों से एक-दूसरे से दूर थे। वे लोग अली से सवाल पूछ रहे थे और अली बेबाकी से उनके जवाब दे रहा था।

"तो अली जान, ईरान कैसा है?"

"अच्छा है। लोग सुरक्षित हैं। यह अफगानिस्तान से बेहतर है।"

अली वहाँ से निकलने का कोई बहाना ढूँढ़ रहा था। रहीमा ने उसे अपने भाई से कहते हुए सुना, "भाई, क्या आपके पास सिरदर्द की गोली है?"

"है, जरा रुको। मैं तुम्हारी भाभी से लेकर आता हूँ।"

"नहीं, आप तकलीफ न करें। मैं खुद ले लूँगा। मैं महिलाओं से भी मिल लेता हूँ और गोली भी माँग लूँगा।"

अली महिलाओं से मुलाकात कर रहा था, तभी किचन से भाभी ने आवाज दी, "हेलो, अली जान, कैसे हो? स्वागत है तुम्हारा।"

"मैं ठीक हूँ। आप कैसी हैं? आपके बच्चे कैसे हैं?"

"शुक्रिया, हम सब ठीक हैं।"

"मेरे सिर में हल्का सा दर्द है। क्या आपके पास सिरदर्द की गोली है?"

"हाँ फ्रिज में है, मैं निकालकर देती हूँ।"

यह सुनते ही अली भाभी के पास किचन में आ गया। रहीमा को लगा कि उसकी नजरें उसे देख रही हैं। वह एक कोने में बैठी बरतन साफ कर रही थी। उसे उनके कदमों की आहट सुनाई दे रही थी, किंतु भाभी ने जोर से कहते हुए स्पष्ट किया, "रहीमा जान, पता है कौन है यहाँ! यह तुम्हारा चचेरा भाई अली है।"

रहीमा उठी और धीरे से उसे हेलो कहा। उसकी भाभी को उनके अतीत के बारे में पता था। चुप्पी तोड़ते हुए उसने पूछा, "तो अली जान, तुम्हारी पत्नी और बच्चे, वे कहाँ हैं?"

अली जरा ठिठका। "मैंने अभी तक शादी नहीं की है।" अली और कुछ कहता, तभी हॉल में बैठी महिलाओं की आवाज आई, "रहीमा, अली, भाभी, तुम सब किचन में क्या कर रहे हो? हमें जोरों की भूख लगी है।" अली ने सिरदर्द की गोली ली और वहाँ से बाहर निकला।

पुरुषों ने अपने कमरे में और महिलाओं ने हॉल में खाना खाया। रहीमा के सिवाय परिवार की अन्य महिलाएँ बड़े चाव से खाना खा रही थीं। रहीमा की भूख मानो उसकी आँखों की रोशनी की तरह चली गई

थी। उसे लगा कि समय की चाल बड़ी धीमी हो गई है और खाना खाने में उसे बहुत समय लग रहा है। अंत में एक महिला की प्रार्थना की आवाज के साथ भोजन समाप्त हुआ।

भोजन के बाद बरतन उठाए जा रहे थे। रहीमा गिलासों की ट्रे ले जाने के बहाने वहाँ से निकली। उसे अपनी भाभी से अली के बारे में बात करनी थी। उसने एक हाथ में ट्रे पकड़ रखी थी और दूसरे हाथ से वह किचन का रास्ता तलाश रही थी। उसने ट्रे नीचे रखी और भाभी को आवाज दी। किंतु जवाब में थी अली की आवाज—

"रहीमा, जरा रुकना। तुम ये पैसे रख लो।"

"क्यों? क्या मैंने तुमसे पैसे माँगे हैं?"

"नहीं!"

"फिर किसलिए?"

"ये पैसे तुम्हारे लिए हैं, पैसे जो मैंने तुम्हारी आँखों के इलाज के लिए बचाए हैं। जिन डॉक्टरों से भी मैं मिला, उनसे तुम्हारी आँखों के बारे में पूछा और उन्होंने कहा कि तुम्हारी आँखों का इलाज हो सकता है।"

रहीमा ने कुछ नहीं सुना। शायद वह अब और कुछ नहीं सुनना चाहती थी। उसे न तो कोई खुशी हुई, न ही वह दुखी थी।

"बहुत-बहुत शुक्रिया तुम्हारा, लेकिन अब मुझे अँधेरे की आदत हो गई है। अब इस बात का कोई मतलब नहीं।"

उसने अली को पैसे वापस कर दिए और उससे बिना कुछ कहे वहाँ से चली आई। टैक्सी में बैठते समय उसका पति उसका एक हाथ थामे हुए था। उसने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि इतने सालों तक अली उसके बारे में सोचता रहा। वह यह सोच रही थी कि आज रात के खाने में क्या पकाया जाए और अपने पति को रात में सोते समय अपना कृत्रिम पैर उतार कर रखने के लिए किस तरह मनाया जाए।

११, सूर्या अपार्टमेंट, रिंग रोड,
राणाप्रताप नगर, नागपुर-४४००२२ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ९४२२८११६७१
balkrishna.kabra2@gmail.com

कविता

कविताएँ

● चंद्रप्रकाश पंत

: एक :

अकड़ू-पकड़ू हैं दो कबूतर,
रहते हैं कोटर के अंदर।
अकड़ू कहीं से दाने लाया
कोटर में ला उन्हें छिपाया।
तभी वहाँ पर पकड़ू आया,
भोजन वह था कहीं न पाया।
अकड़ू ने दाने बाँट के खाए,
मित्र ही मित्र का साथ निभाए।

: दो :

गरम महीना है भाई जून,
धरा ने मानो ओढ़ी ऊन
बहते रहता तन से पसीना,
भाए मन को पानी पीना।
नारियल पानी लस्सी छाछ,
पीकर इनको बुझती प्यास।
गरमी देखो सही न जाए,
चार बार अब दिन में नहाए।

: तीन :

एक बंदर बैठ अकेला,
खा रहा है देखो केला।
केला खाकर पेट भरेगा,
मस्ती फिर वह खूब करेगा।
किसी पेड़ की डाल पकड़कर,
डाल-डाल वह फिर लटकेगा।
बंदर की यह देख शरारत,
नन्हा बंटी खूब हँसेगा॥

चार

मोटरवाले भैया आए।
पों-पों-पों-पों हॉर्न बजाए।
लाल रंग की बड़ी सी मोटर,
चलती चौड़ी सड़क के ऊपर।

सुपरिचित लेखक। उत्तर प्रदेश जनपद मुरादाबाद में बेसिक शिक्षा विभाग में अध्यापक। बाल गीत लेखन में रत।

जब हम बैठे इसके भीतर,
मस्ती करते हम सब जमकर।
सैर दूर की हमें कराकर,
रुकती सीधे घर पर आकर॥

: पाँच :

भिंडी का हैप्पी बर्थ-डे आया,
जोर-शोर से उसने मनाया।
आलू-बैंगन बर्थ-डे में आए,
कद्दू-लौकी को साथ में लाए।
आलू ने सुरीला गाना गाया,
बैंगनजी को नाच नचाया।
भिंडी ने फिर केक को काटा,
लौकी-कद्दू ने सभी को बाँटा॥

: छह :

आइसक्रीम वाले भैया आए,
आइसक्रीम का ठेला लाए।
गरमी की सौगात हूँ लाया,
गली-गली आवाज लगाए।
चुन्नू-मुन्नू दौड़कर आए,
माँ ने दिए जो पैसे लाए।
ठंडी-ठंडी आइसक्रीम लेकर,
खाते-खाते घर को आए॥

: सात :

पुस्तक को हम रोज हैं पढ़ते,
कविता कहानी इसमें छपते।
ज्ञान की बातें इसमें पाते,
विद्यालय इसको हम ले जाते।
टीचर इससे हमें पढ़ाते,
नया सबक वे हमें सिखाते।
पुस्तक को ही पढ़कर हम सब,
जीवन में अच्छा कर पाते॥

एल आई जी/ डी-६१
हिमगिरि कॉलोनी मुरादाबाद (उ.प्र.)
दूरभाष : ८२७९५८२५२०

वर्ग पहेली (१९९)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे थे; उनके देहावसान के उपरांत अब **श्री ब्रह्मानंद खिच्ची** इसे तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ नवंबर, २०२२ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें तीन सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते दिसंबर २०२२ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली**', **साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१९७) का शुद्ध हल

१ शो		२ ढो	ल	३ ना		४ स	ह	५ र
६ ध	ब	ला		७ जो	८ ब	न		ह
प्र			९ प्र		१० जा	य	११ फ	ल
१२ बं	१३ ध	न	स्था	१४ न		१५ न	र	
१६ ध	न		१७ न	जू	१८ ल		१९ फ	२० ना
	२१ सा	२२ म		२३ म	ति	फि	र	ना
२४ बा	र	दा	२५ ना		का			सा
दु		२६ ल	च	२७ र		२८ स	म्मो	ह
२९ र	ई	स		३० दी	वा	न		ब

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री राम प्रकाश राय**
गोला मोहल्ला
गोरखपुर (उ.प्र.)

२. **सुनीता पाटील**
गाँव-पो. धूमपुर, जिला-शोलापुर
(महाराष्ट्र)

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १९७ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री राजेश त्रिवेदी (वाराणसी), विमला पासवान (पटना), धनसिंह (हरिद्वार), पुष्प पाल शर्मा (गुरुग्राम), मनोहा सिंह (ब्यावर), सुधा बहर (कानपुर), सुदेश वर्मा (पीलीभीत), आदेश कुमार (नोएडा), देवेंद्र सिंह पुसार (अजमेर)।

बाएँ से दाएँ—

१. अक्तूबर माह के पहले शुक्रवार को मनाया जाता है (२,३,३)
७. छाला, फफोला (३)
८. सुलफा, धर्मेंद्र-हेमा की एक फिल्म (३)
१०. आखिरकार, बाद में, मवाद (२)
१२. पीड़ा देना, सालना (४)
१४. एक प्रकार की कपास जो दक्षिण में पैदा होती है (३)
१६. समय जानने का एक प्राचीन यंत्र (५)
१८. एक एक अंकीय संख्या (२)
१९. फेंकना, उछालना (२)
२०. स्निग्धता, चिकनाई (५)
२५. किसी बात में किसी के बराबर हक रखनेवाला व्यक्ति, हिस्सेदार (४)
२७. मार्ग अवरोध, रोड़ बैरियर (२)
२८. बाण, तीर (२)
३०. लंबा और ढीला वस्त्र, चोगा (३)
३२. स्वामीयुक्त, जिसका कोई रक्षक हो (३)
३३. नाश, तबाही (४)

ऊपर से नीचे—

१. इश्तहार, सूचना देना (४)
२. मैं का एक रूप (२)
३. विद्यार्थी, स्टूडेंट (अंग्रेजी) (३)
४. इनकार करना (४)
५. अपशब्दपूर्ण बात (६)
६. जलाशय, तालाब, सिर (२)
८. वासस्थाान, घर, घोंसला, माँद (३)
९. यात्रियों के ठहरने का स्थान (३)
११. बहुत जगह से फटा हुआ (४)
१३. जंजीर का एक छल्ला, कठिन (२)
१५. अति श्रम करना, बहुत कष्ट झेलना (४)
१७. तेजी से आगे बढ़ना, झपटना (४)
२०. बाज पक्षी (३)
२१. तख्ती, हानिकारक शिक्षा (लाक्ष.) (२)
२२. भाग्यवान, सौभाग्यशाली (३)
२४. घेराबंदी, पहरा बैठाना (४)
२६. एक तरह की सारंगी (३)
२९. राज्यसभा का संक्षिप्त रूप (२)
३१. पत्नी, भार्या (२)

वर्ग पहेली (१९९)

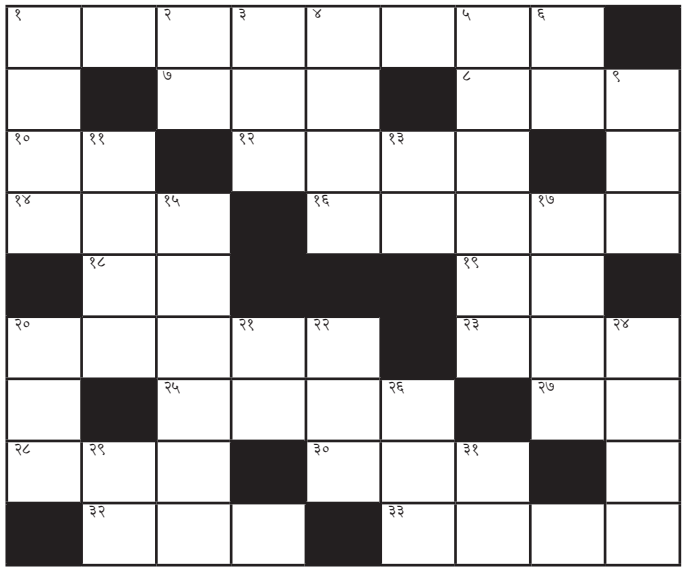

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

वर्ग पहेली (१९८) का हल अगले अंक में।

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

साहित्य अमृत का अक्तूबर अंक पढ़कर अच्छा लगा। पांडेय बेचन शर्मा उग्र, कमल किशोर गोयनका, कादंबरी मेहरा, शोभा द्विवेदी आदि के लेख बहुत जानकारीपरक हैं। इस बार हिंदी कवि सम्मेलनों के अनेक मंचीय कवियों की रोचक कविताएँ पढ़ने को मिलीं। अच्छा होता कि नई कविता के कुछ कवियों को और स्थान मिलता।

—कुश चतुर्वेदी, इटावा (उ.प्र.)

दीपकों के आलोक से जगमग 'साहित्य अमृत' का अक्तूबर का अंक मिला। प्रतिस्मृति में प्रसिद्ध कथाकार पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' की कहानी पुनः-पुनः पठनीय है। मीरा सीकरी की 'अज्ञात', तुलसी देवी तिवारी की 'अंशदान' कहानियाँ इस अंक की शान हैं। पत्रिका में कहानियों की संख्या निरंतर कम होती जा रही है और पद्य रचनाएँ बेहिसाब स्थान पा रही हैं। शास्त्री कोसलेंद्रदासजी ने दीपावली पर्व की सुंदर मीमांसा की है। डी.डी. ओझा का आलेख बेहद जानकारीपरक और ज्ञान में वृद्धि करनेवाला है। ऋता शुक्ल की कविता 'जागो माँ', बी.एल. गौड़ की 'इतना ध्यान रहे', चंद्रपाल मिश्र 'गगन' की मंजिल तो श्मशान है' बेहद अच्छी लगीं। प्रेमपाल शर्मा का यात्रा-संस्मरण 'एकदा धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे' पढ़कर ऐसा लगा, जैसे मैं स्वयं वहाँ उनके साथ विचरण कर रहा हूँ। कुलभूषण सोनीजी ने धनतेरस पर्व की अच्छी जानकारी प्रस्तुत की है। अन्य रचनाएँ भी स्तरीय लगीं। कुल मिलाकर यह दीवाली अंक नई-नई जानकारियों से भरा-पूरा है।

—आनंद शर्मा, 'दिल्ली'

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक दीवाली की धूमधाम से सराबोर है। दीवाली प्रकाश का पर्व है, अँधेरे पर उजाले की जीत का। 'साहित्य अमृत' अपने नाम के अनुरूप हम पाठकों को साहित्य के अमृत का पान करा रही है। बहुत सारी हिंदी की पत्रिकाएँ कोरोनाकाल में दम तोड़ चुकी हैं, पर 'साहित्य अमृत' बिलकुल समय से पाठकों तक पहुँच रही है। प्रतिस्मृति में पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' की कहानी अपने समय की चर्चित कहानी है, जो पाठक को अंत तक बाँधे रखती है। मंजरी शुक्ला की 'पटाखों का पेड़', मीरा सीकरी की 'अज्ञात', भावना शेखर की 'सफेद सियार' कहानियाँ अच्छी लगीं। शेफालिका सिन्हा की लघुकथा 'भविष्य फल', 'देश का भविष्य' बहुत अच्छी हैं। आलेखों में डी.डी. ओझा, शास्त्री कोसलेंद्रदास, कादंबरी मेहरा के आलेख नई जानकारियों से लैस हैं; काफी मेहनत से लिखे गए लगते हैं। कविताएँ इस बार कुछ ज्यादा ही हैं। कुल भूषण सोनीजी ने धनतेरस की भली जानकारी दी है। प्रेमपाल शर्मा का यात्रा-संस्मरण 'एकदा धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे' बेहद जानकारीपरक, मनोरंजक और यादगार बन गया है। इनमें कहानी जैसा आनंद आता है। सुमन चौरे का निबंध 'पारिजात झर रहा है' अच्छा लगा। विश्व परिपार्श्व में लुइगी पिरांदेलो की कहानी 'जिगरी यार' बेहद पसंद आई। एक शानदार अंक के लिए मेरी बधाई स्वीकारें।

—रामप्रकाश राय, गोरखपुर (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक मिला। सभी रचनाएँ उत्कृष्ट हैं और अपने लेखकीय कर्म का निर्वहन करती हैं। 'समुद्र मंथन' का वैज्ञानिक रहस्य लेख विशेष रूप से पठनीय है, क्योंकि यह हमारी मान्यताओं को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से वर्णित करता है। आज की पीढ़ी को हर बात के पीछे तर्क और प्रमाण अपेक्षित हैं, इसलिए ऐसे लेख उनकी जिज्ञासा को शांत कर उनका भारतीय मान्यताओं और परंपराओं में विश्वास की वृद्धि करेंगे। विविधतापूर्ण सामग्री के लिए समस्त संपादकीय टीम को शुभकामनाएँ।

—नीरा वर्मा, रायपुर (छ.ग.)

'साहित्य अमृत' का दीपावली के प्रकाश से आलोकित अक्तूबर अंक मिला। कथाओं और कविताओं की संख्या में असंतुलन है; यह पत्रिका साहित्य की हर विधा की प्रतिनिधि रचनाएँ उपलब्ध करवा रही है, पर विगत कुछ अंकों से कुछ विधाएँ तो बिल्कुल प्रकाशित नहीं हो रहीं। इस पर ध्यान देने का आग्रह है। आपका हर अंक एक विशेषांक की तरह होता है। 'स्वाधीनता के अमृत महोत्सव पर' प्रकाशित अगस्त अंक तो बेजोड़ था। उसे मैनें बहुत सँभालकर रखा है, क्योंकि वह भारतवर्ष के स्वाधीनता आंदोलन का एक ऐसा दस्तावेज बन गया है, जिसे सबको पढ़ना ही चाहिए। तभी हमारे क्रांतिकारियों और बलिदानियों के प्रति कर्तृत्व से समाज परिचित होगा और उनके प्रति हमारा सम्मान और बढ़ेगा। ऐसे विचारशील अंक हेतु आपका अभिनंदन।

रामेंद्र रमन, आरा (बिहार)

साहित्य अमृत का अक्तूबर अंक पढ़ा। बहुत अद्‌भुत और जानकारियों से भरपूर है। संपादकीय 'रामकथा' बहुत अच्छी और ज्ञानवर्धक है। पांडे बेचन शर्मा उग्र की 'अवतार', शास्त्री कोसलेंद्रदास का दीपावली पर लेख 'दीपावली : रोशनी का दिव्यबोध' संग्रहणीय आलेख हैं। डॉ. कीर्ति कालेजी की कविताएँ अच्छी हैं। कादंबरी मेहराजी का आलेख 'लंदन में महात्मा बुद्ध की अस्थियाँ' भी बहुत अच्छा लगा। इसी प्रकार प्रिया देवांशी की बाल कहानी 'इस बार की दीवाली' तो बहुत भावुक थी। बचपन याद आ गया। 'साहित्य अमृत' का यह अंक संग्रहणीय है। सभी लेखकों को दीपावली की शुभकामनाएँ और बधाई।

—दिलीप मिश्रा, ग्वालियर (म.प्र.)

अक्तूबर अंक का दीपों व रंगोली से सजा आवरण पृष्ठ आकर्षक बन पड़ा है और वह अंधकार पर प्रकाश के पूर्ण विजय को भी दरशाता है। इस अंक की सभी रचनाएँ एक से बढ़कर एक हैं। प्रतिस्मृति में पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' की कहानी 'अवतार' पढ़कर उनके पांडित्य व उनकी लेखन कला का पता चलता है। मीरा सीकरी की कहानी 'अज्ञात', तुलसी देवी तिवारी की कहानी 'अंशदान' बहुत अच्छी लगी। प्रेमपाल शर्मा का यात्रा-संस्मरण 'एकदा धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे' बहुत अच्छा लगा। इनके यात्रा-वृत्तांत में न केवल घूमने की चर्चा मात्र होती है, बल्कि उसमें उस स्थान का ऐतिहासिक और धार्मिक महत्त्व विस्तार से बताया जाता है। इस अंक के सभी आलेख तथ्यपरक और ज्ञानवर्धन करनेवाले हैं। उत्कृष्ट रचनाएँ परोसने के लिए संपादक मंडल को साधुवाद।

—विवेक शर्मा, मेरठ (उ.प्र.)

श्रीमती एनी अर्नो को साहित्य का नोबेल पुरस्कार

विगत दिनों स्टॉकहोम में फ्रांस की ८२ वर्षीय लेखिका श्रीमती एनी अर्नो को इस वर्ष साहित्य के नोबेल सम्मान के लिए चुना गया है। ऐनी ने उन विषयों पर लिखा है, जिनपर प्राय: लोग नहीं लिखते, जैसे अपना गर्भपात, अपनी जलन, त्याग दी गई प्रेमिका के रूप में अपना अनुभव और ऐसा ही बहुत कुछ। वह स्वयं को लेखिका के बजाय अपने ऊपर शोध करनेवाली एथनोलॉजिस्ट मानती हैं। □

विचार-गोष्ठी संपन्न

१४ सितंबर को नई दिल्ली में दिल्ली विश्वविद्यालय के हंसराज कॉलेज में 'चाणक्य वार्त्ता' पत्रिका के सहयोग से एक विचार-गोष्ठी व नृत्य-नाटिका का मंचन किया गया, जिसमें श्री लक्ष्मीनारायण भाला ने स्वामी विवेकानंदजी के जीवन दर्शन व सर्वश्री श्याम सिंह शशि तथा बी.एल. गौड़ ने उनकी शिक्षा-पद्धति पर विचार व्यक्त किए। □

'कहानी-संवाद' संपन्न

२१ सितंबर को पालमपुर में हिमाचल प्रदेश भाषा एवं संस्कृति विभाग ने रचना साहित्य एवं कला मंच पालमपुर के सहयोग से के.एल. वी. डी.ए.वी. कॉलेज में राज्य स्तरीय 'कहानी संवाद' का आयोजन किया, जिसका का विषय 'हिमाचल का हिंदी कहानी को योगदान' था। इस विषय पर श्री सुशील कुमार फुल्ल ने तथा गुप्तेश्वर उपाध्याय ने पत्रों का वाचन किया। कार्यक्रम में चार पुस्तकों का लोकार्पण भी किया गया। मुख्य अतिथि श्री पंकज ललित थे। सर्वश्री गंगाराम, कल्याण जग्गी, राजीव त्रिगर्ति, त्रिलोक मेहरा, सरोज परमार, कमलेश सूद, अशोक दर्द, विजय उपथ्यय, राजेंद्र राजन, राजेंद्र पालमपुरी, राकेश मिन्हास, पंकज दर्शी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन सुश्री आशु फुल्ल तथा आभार श्री अरविंद ठाकुर ने व्यक्त किया। □

कार्यक्रम आयोजित

२४ सितंबर को गुवाहाटी में 'महाबाहू' संस्थान एवं मल्टीकल्चरल एजुकेशनल डेवलेपमेंट ट्रस्ट के संयुक्त तत्त्वावधान में असम में मीडिया के १७५ वर्ष से अधिक पूर्ण होने पर कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिसमें एक पुस्तक लोकार्पित करते हुए मुख्य अतिथि भारतीय जनसंचार संस्थान के महानिदेशक प्रो. संजय द्विवेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। अध्यक्षता असम विधानसभा के प्रधान सचिव श्री हेमेन दास ने की। सर्वश्री प्रशांत राजगुरु, दीपक दास, बेदब्रत मिश्रा, अमल गोस्वामी, सत्येन सरमा, रेजाउल करीम ने अपने विचार व्यक्त किए। □

हेलो कवि-सम्मेलन संपन्न

२६ सितंबर को पटना में भारतीय युवा साहित्यकार परिषद् के तत्त्वावधान में, फेसबुक के अवसर साहित्यधर्मी पत्रिका के पेज पर, ऑनलाइन हेलो फेसबुक कवि सम्मेलन आयोजित किया गया। अध्यक्षीय उद्‌बोधन श्रीमती स्वराक्षी स्वरा ने दिया। सर्वश्री आराधना प्रसाद, गोरख प्रसाद मस्ताना, नीलम श्रीवास्तव, सुनीता सिंह 'सुधा', आरती कुमारी, ऋचा वर्मा, सजीव प्रभाकर, विजय कुमार मौर्य, अर्चना मिश्रा, पूनम सिन्हा, विकास सोलंकी, राज कांता राज, नीलू अगवाल, अधुरेश नारायण, कालजयी घनश्याम, श्रीकांत, रूबी भूषण ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं।□

संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों दिल्ली के चाँदनी चौक स्थित दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी के तत्त्वावधान में आजादी के अमृत महोत्सव पर 'अमृत महोत्सव के महानायक एवं आजादी के स्वप्नद्रष्टा सरदार भगत सिंह' विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें लाइब्रेरी के उपाध्यक्ष श्री सुभाष चंद्र कानखेड़िय की अध्यक्षता में मुख्य वक्ता पूर्व केंद्रीय मंत्री श्री सत्यनारायण जटिया तथा वक्ता के रूप में श्री शैलेंद्र मणि त्रिपाठी उपस्थित थे। अतिथियों का स्वागत डॉ. आर.के. शर्मा ने किया। □

रचनाएँ आमंत्रित

१४ से १६ जनवरी, २०२३ तक वाराणसी में पं विद्यानिवास मिश्र के जन्मदिवस के अवसर पर विद्याश्री न्यास द्वारा 'मध्यकालीन कविता अवधारणाओं का पुनराविष्कार' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं भारतीय लेखक शिविर आयोजित होगा। इसके अकादमिक सत्रों में मध्यकालीन कविता की अवधारणाओं के परिप्रेक्ष्य में कबीर, रैदास, जायसी, दादू, सूरदास, तुलसीदास, मीरा, रसखान, रहीम, केशव, बिहारी, घनानंद, देव, बोधा, मतिराम, भूषण, पद्माकर, आलम, सेनापति, गिरधर कविराय कवियों की मौलिक अवधारणाओं पर विचार-विमर्श के साथ ही मध्यकालीन कविता की लोक की प्रतिष्ठा एवं मध्यकालीन कविता की भावभूमि पर भी चर्चा होगी। गोष्ठी के केंद्रीय विषय अथवा उपविषयों (उल्लिखित कवियों से संबंधित) पर शोध-पत्र १० जनवरी, २०२३ तक व्हाट्सएप नं. ९४१५७७६३१२ पर आमंत्रित हैं। चयनित शोध-पत्रों के वाचन का अवसर प्रदान किया जाएगा तथा प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कार एवं प्रमाण-पत्र भी प्रदान किए जाएँगे। □

साहित्य समारोह आयोजित

९ अक्तूबर को मुंबई में पं. मधुकर गौड़ सार्थक साहित्य संस्थान की ओर से श्री रवि पुरोहित को 'पं. मधुकर गौड़ सार्थक साहित्य-सम्मान २०२२' स्वरूप शॉल, श्रीफल, स्मृति-चिह्न एवं ग्यारह हजार रुपए अर्पित किए गए। डॉ. मदन सैनी की अध्यक्षता में मुख्य अतिथि श्री श्याम महर्षि व विशिष्ट अतिथि श्री रामकुमार घोटड़ थे। डॉ. सविता इंदौरिया ने अपने पिता मधुकर गौड़ के साहित्यिक अवदान को रेखांकित करते हुए स्मृतियाँ साझा कीं। धन्यवाद श्री राजेंद्र 'मुसाफिर' ने तथा मंच संचालन श्री सरोज हारित ने किया। □

'देव दुंदुभि' लोकार्पित

विगत दिनों देवनागरी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था, आगरा के तत्वावधान में श्रीराम नवमी पर्व के पावन अवसर पर साहित्य समागम संपन्न हुआ, जिसमें मुख्य अतिथि प्रो. एम.सी.एस. बघेल थे। प्रथम सत्र में श्री यशोयश तथा श्री सोम ठाकुर द्वारा रचित दोहा-संग्रह 'देव दुंदुभि' का लोकार्पण मुख्य अतिथि श्री एस.पी. सिंह बघेल ने किया। सर्वश्री हरि सिंह बेदरिया, राजेंद्र मिलन, चंद्रकांत त्रिपाठी, सुकेशिनी दीक्षित, अशोक अश्रु, विद्यासागर ने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अशोक अश्रु ने किया तथा धन्यवाद ज्ञापन सुश्री रेनू यशोयश ने किया। □

'बिहारी पुरस्कार' घोषित

२९ सितंबर को नई दिल्ली में के.के. बिड़ला फाउंडेशन का वर्ष २०२२ के ३२वें 'बिहारी पुरस्कार' के लिए उदयपुर निवासी सुप्रसिद्ध आलोचक प्रो. माधव हाड़ा की साहित्यिक आलोचना कृति 'पचरंग चोला पहर सखी री' का चयन किया गया है। इस पुरस्कार में एक प्रशस्ति-पत्र, प्रतीक-चिह्न व ढाई लाख रुपए की राशि भेंट की जाती है। □

पुस्तक लोकार्पित

विगत दिनों हिंदी भवन, विश्व-भारती, शांतिनिकेतन (प. बंगाल) के सभागार में प्रो. चक्रधर त्रिपाठी (संप्रति कुलपति, ओड़िशा केंद्रीय विश्वविद्यालय) की कृति 'समय-समय पर उपजे विचार' का लोकार्पण किया गया। शोधपरक 'निबंधों की इस कृति का संचयन-संपादन प्रोफेसर हेमराज मीणा ने किया है। कार्यक्रम में लेखक प्रो. चक्रधर त्रिपाठी और संपादक प्रो. हेमराज मीणा के साथ-साथ सर्वश्री मुक्तेश्वर नाथ तिवारी, मनोरंजन प्रधान, मानवेंद्र साहा, वासिफ अहमद, निरंजन जेना, रणवीर सुमेध, रेखा ओझा, सुभाष चंद्रराय, रामप्रमोल कुमार, मेरी हाँसदा, जगदीश भगत, अर्जुन कुमार, सुकेश लोहार, हरेकृष्ण मिश्र, रवींद्र दास ने विचार व्यक्त किए। अध्यक्षता ओड़िया भाषा तथा साहित्य के आचार्य डॉ. मनोरंजन प्रधान ने की। □

'मेरे अनुभव और इतिहास के झरोखे से कश्मीर' कृति विमोचित

१५ अक्तूबर को नई दिल्ली के हिंदी भवन सभागार में कश्मीर के अनुभवों को लेकर शिक्षाविद् और मेवाड़ विश्वविद्यालय के चेयरमैन श्री अशोक गदिया की लिखी पुस्तक 'मेरे अनुभव और इतिहास के झरोखे से कश्मीर' का विमोचन जम्मू-कश्मीर के उप-राज्यपाल मान. मनोज सिन्हा ने किया। कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि जम्मू-कश्मीर अध्ययन केंद्र के अध्यक्ष श्री जवाहर लाल कौल, महेश चंद्र शर्मा व अन्य विद्वान भी उपस्थित रहे। □

३०वाँ अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन संपन्न

८-९ अक्तूबर को गाजियाबाद में यू.एस.एम. पत्रिका एवं भागीरथ सेवा संस्थान के तत्त्वावधान में आयोजित सम्मेलन में संगोष्ठियों के साथ-साथ काव्य संध्या, पुस्तक प्रदर्शनी, पुस्तकों का लोकार्पण तथा ३२ विद्वानों को विविध नामित सम्मानों से अलंकृत किया गया। उद्घाटन पूर्व कुलपति डॉ. गिरीश्वर मिश्र एवं वरिष्ठ शिक्षाविद् प्रो. लल्लन प्रसाद ने किया। मुख्य संयोजक श्री उपाशंकर मिश्र थे। दो दिनों के विभिन्न सत्रों में विविध विषयों पर अनेक आलेख प्रस्तुत किए गए। इस अवसर पर 'काव्य संध्या' में देश के विभिन्न भागों से आए करीब ३५ कवि-कवयित्रियों ने सुमधुर गीत, गजल, व्यंग्य रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संचालन डॉ. अरविंद श्रीवास्तव और श्री गाफिल स्वामी ने किया। □

पुस्तक लोकार्पित

६ अक्तूबर को लखनऊ में 'राजेश्वरी देवी चैरिटेबल ट्रस्ट' के तत्वाधान में श्री राम गोपाल गुप्ता द्वारा रचित पुस्तक 'देवी-देवताओं की अलौकिक घटनाएँ' का लोकार्पण मुख्य अतिथि श्री रामलालजी (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अखिल भारतीय संपर्क प्रमुख) द्वारा किया गया। □

'गंडासा गुरु की शपथ' कृति लोकार्पित

१६ अक्तूबर को सेंट्रल लंदन के क्राउन प्लाजा में भारतीय राजस्व सेवा के अधिकारी डॉ. कुंदन यादव के कहानी-संग्रह 'गंडासा गुरु की शपथ' का लोकार्पण लंदन के पूर्व मेयर व काउंसलर श्री गुरुदयाल भामरा द्वारा किया गया। गोष्ठी देर रात तक चलती रही, जिसमें सर्वश्री इकबालदीप सिंह, अविनाश तिवारी, देव कौशिक व प्रिया तिवारी ने पुस्तकक के विषय में अपने विचार व्यक्त किए। जस्टिस श्री मंगला प्रसाद (से.नि.) द्वारा आभार व्यक्त किया गया। □

युवा लेखन प्रतियोगिता हेतु प्रविष्टियाँ आमंत्रित

पं. विद्यानिवास मिश्र के जन्मदिन के अवसर पर आगामी १४ से १६ जनवरी, २०२३ तक वाराणसी में विद्याश्री न्यास द्वारा 'मध्यकालीन कविता : अवधारणाओं का पुनराविष्कार' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं भारतीय लेखक शिविर आयोजित है। इस अवसर पर 'युवा-संवाय' के अंतर्गत मौलिक कहानी, कविता एवं निबंध प्रतियोगिता भी आयोजित की जाएगी, जिसमें ३५ वर्ष तक की आयु के रचनाकार अपनी रूचि के अनुरूप विषय पर कविता, कहानी एवं निबंध भेज सकते हैं। तीनों श्रेणियों में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार तथा प्रमाण-पत्र प्रदान किया जाएगा और चयनित रचना साहित्य 'साहित्य अमृत' पत्रिका में भी प्रकाशित की जाएगी। प्रतिभागी अपनी प्रवृष्टि मेरे अथवा प्रभात प्रकाशन के निम्नलिखित इमेल/व्हाट्सअप/डाक के पते पर अपने आयु प्रमाण-पत्र सहित २५ दिसंबर तक दयानिधि मिश्र, सचिव विद्याश्री न्यास, अभिलाषा कॉलोनी, निकट एक्सेल टावर, वरुणापुल, नदेसर, वाराणसी-२, इमेल dayanidhimisra@gmail.com, व्हाट्सअप नं. ९४१५७७६३१२; प्रभात प्रकाशन, ९/१९ आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२, इमेल prabhatbooks@gmail.com व्हाट्सअप नं. ९८११०३३३१८ पर भेज सकते हैं। □